शून्य समाधि

मान्यताओं से मुक्ति

मेरे प्रिय आत्मन,

जैसे अंधेर में कोई अचानक दिया जला दे और जहां कुछ भी दिखाई न पड़ता हो व हां सभी कुछ दिखाई पड़ने लगे, ऐसे ही जीवन के अंधकार में समाधि का दीया है। या जैसे किसी मरुस्थल में वर्षों न हुई हो, धरती के प्राण प्यास से तड़पते हों, और फिर अचानक मेघ घिर जाए और वर्षा की बूंदें पड़ने लगें—इससे उस मरुस्थल के म न में जैसी शांति और जैसा आनंद नाच उठे, वैसे ही जीवन के मरुस्थल के मन में समाधि की वर्षा है।

या जैसे कोई मरा हुआ अचानक जीवित हो जाए, और जहां श्वास न चलती हो, व हां श्वास चलने लगे। जहां आंखें न खुलती हों, वहां आंखें खुल जाए। और जहां जी वन तिरोहित हो गया था, वहीं वापिस उसके पदचाप सुनाई पड़ने लगें, ऐसा ही मरे हुए जीवन में समाधि का आगमन है।

समाधि से ज्यादा महत्वपूर्ण जीवन में कुछ भी नहीं है। समाधि के बिना न तो कोई आनंदित मिल सकता है, न शांति मिल सकती है, न सत्य मिल सकता है। समाधि को समझ लेना इसीलिए बहुत उपयोगी है, क्योंकि समाधि उन थोड़ी सी बातों में से है, जिसे समझ लेना ही काफी नहीं है। उनमें से होकर गुजरें तो ही उसे समझ भी सकते हैं।

जैसे कोई नदी के तट पर खड़ा हो और हम कहें कि आओ तुम्हें तैरना सिखा दें औ र वह कहे कि पहले मैं तैरना सीख लूं, तभी पानी में उतरूंगा। पहले मैं समझ लूं, ि फर पानी में उतरूं। तो कोई तर्क उसका गलत न होगा—ठीक कहता है वह। बिना तैरना जाने कोई पानी में उतरने को राजी भी कैसे होगा?

लेकिन बहुत बड़ी कठिनाई है। कठिनाई तो है ही, सिखाने वाले की भी कठिनाई है। बिना पानी में उतरे तैरना सिखाया कैसे जा सकता है? सिखाने वाला कहेगा कि उ तर आओ पहले, क्योंकि बिना पानी में उतरे तैरना न सीख सकोगे। तो वह भी गल त नहीं कहता। और जिसे सीखना हो वह कहता है भयभीत हूं मैं, बिना तैरे उतरूंग ा नहीं—पहले तैरना सीख लूं, तब उतर सकता हूं।

समाधि की बात भी कुछ ऐसी ही है। समाधि में गिरे बिना कुछ भी पता नहीं चलत ा। लेकिन हम जानना चाहेंगे किनारे पर खड़े होकर कि क्या है समाधि? तब मैं इत ना ही कहने की कोशिश करूंगा कि शब्द जो नहीं कह सकते हैं, जिसे कहने का को ई रास्ता नहीं है, वह है समाधि।

सुना है मैंने—एक फकीर के पास कोई गया था। वह पूछने लगा था कि तुम समाधि की बात कहते हो, ध्यान की बात करते हो, क्या है वह? मुझे समझाओ, बताओ। फकीर आंख खोले बैठा था, अब तत्काल आंख बंद कर ली। उस आदमी ने कहा, य ह भी खूब रहा। कम से कम आंख खोले थे, आंख तो खोलो? मैं जानने आया हूं ि क समाधि क्या है? ध्यान क्या है? जिसकी दिन रात बात करते हो, कुछ तो बताअ ो!

वह फकीर बैठा था, एकदम गिर गया। उस आदमी ने कहा, कर क्या रहे हो? क हीं मर मत जाना। मैं तो सिर्फ समाधि के विषय में पूछने आया हूं।
उस फकीर ने आंख खोली और कहा, मैं बताने की ही कोशिश कर रहा हूं। उस आ दमी ने कहा, ऐसे नहीं, शब्दों से ही बता दे।
तो फकीर कहने लगा, शब्दों में। जो शब्दों में कहा जा सकता है, वह समाधि के सं बंध में कुछ भी न होगा। इसलिए मैंने तुम्हें करके बताया।
लेकिन कोई आंख बंद कर ले, कोई गिर जाए तो भी क्या पता चलेगा? नहीं! हमा री ही आंख बंद हो और हम गिर जाए, तो कुछ न होगा। न केवल बाहर से, बल्कि भीतर से भी गिर जाए और बिखर जाए। जैसे कोई बूंद किसी सागर में खो जाए या जैसे कोई बीज किसी मिट्टी में डूब जाए। ऐसा हमारे भीतर घटित हो, तो ही ह म पहचान पाएंगे कि समाधि क्या है।
लेकिन कुछ इशारे भी किए जा सकते हैं। सुबह कुछ इशारे करूंगा और सांझ चाहूंगा कि हम सब साथ समाधि में प्रवेश करें। तो जिनकी सुनने में उत्सुकता है, वे सिर्फ, सुबह ही आएंगे। जिनकी तैरने में भी उत्सुकता है, जो जानना भी चाहते हैं, वे सां झ भी आएंगे। सुबह हम बात करेंगे और सांझ स्वाद लेने की कोशिश करेंगे।
एक छोटी सी घटना से मैं शुरू करना चाहता हूं।
छोटा था। जिनके पास मैं बड़ा हुआ, दुर्भाग्य से या सौभाग्य से, वे बहुत जल्दी दुनिय ा से बिदा हो गए। सात ही वर्ष का था। मैंने उन्हें धीरे-धीरे मरते देखा। वे एक दि न में नहीं मरे। पहले उनकी वाणी खो गयी, फिर उनकी आंखें बंद हो गयी। फिर वे बेहोश हो गए और चौबीस घंटे तक बेहोश रहे। उसी बेहोशी में धीरे-धीरे जैसे को ई दीए का तेल चुकता जाए और चुकता जाए लौ धीमी होती चली जाए वैसे ही ध ीरे-धीरे वे डूबे और खो गए। उनको ही मैंने चाहा और प्रेम किया था उनके पास ही बड़ा हुआ था। उस क्षण तो ऐसा ही लगा था कि बड़ा दुर्भाग्य हुआ। लेकिन पता न हीं, दुर्भाग्य बहुत बार सौभाग्य भी बन जाता हैं।
मेरे लिए मृत्यु की यह पहली घटना थी। सारा घर तो रोने लगा, दुखी और पीड़ित होने लगा। पर मुझे निरंतर एक ही बात मन में रहने लगी कि अगर वह नहीं रहे, तो अब मेरे रहने की भी क्या जरूरत? और जिसे मैंने प्रेम किया वह नहीं हैं तो अब मैं भी न रहूं। मुझे रोना भी न सूझा। आज समझ में आता है कि रोकर हम दु ख प्रकट करते हैं, शायद दुख को बहाने की कोशिश करते हैं। अब मैं समझ पाता हूं कि रो धोकर, चीख चिल्लाकर जो पीड़ा हम पर उतरी है उससे छुटकारा पा लेते हैं। वह निकल जाती है।
मैं नहीं रो सका : क्योंकि मुझे लगा कि अगर कोई, जिसे मैंने चाहा है, समाप्त हो गया है, तब मैं भी समाप्त हो जाऊं। और मुझे भी जीने की कोई जरूरत नहीं है।
उन्हें लोग मरघट ले गए और मुझे घर में बंद कर गए। छोटा बच्चा सोचकर कि मैं मरघट जाऊं, पता नहीं मरघट को देखूं, कैसा मन पर आघात लगे! उन्हें मैं प्रेम

करता था, उन्हें जलते देखूं! लेकिन जब घर के लोग चले गए, तो मैं भी चुपचाप प
ीछे के रास्ते से मरघट पहुंच गया।

मुझे कुछ पक्का पता न था कि वहां क्या होने को है। डर से कि घर के लोग नारा
ज होंगे, छिपकर एक वृक्ष पर बैठ कर मैंने उन्हें जलते देखा। लौट आया। उस रात
मैं एक ही प्रार्थना लेकर सो गया कि मैं भी मर जाऊं। भगवान ऐसा कर कि मैं भी
मर जाऊं। जब तक मुझे रात नींद नहीं लगी, एक ही बात मेरे मन में गूंजती रही
कि मैं भी मर जाऊं, मुझे भी समाप्त हो जाना है।

कब मुझे नींद लगी, पता नहीं। लेकिन नींद में, में भी मेरा मन यही स्वर दोहराता
रहा कि मैं जाऊं! मैं मर जाऊं! मैं मर जाऊं! कोई रात के दो या तीन बजे अचान
क मेरी नींद टूटी। मुझे लगा कि वह, जिस मैं कह रहा था कि मर जाऊं, वह मर
गया है। सब मर गया है। हाथ हिला नहीं सकता हूं, आंख खोल नहीं सकता हूं। श्व
ास का कोई पता नहीं चलता। शरीर है भी या नहीं, इसका भी पता नहीं चलता।
सब मर गया है।

लेकिन, एक और आश्चर्य कि सब मर गया है, फिर भी मैं हूं। क्योंकि मुझे पता च
ल रहा है कि सब मर गया है। दोनों बात एक साथ सब मर गया है और फिर मैं
हूं। यह भी पता चल रहा था कि मैं हूं। क्योंकि अगर मैं नहीं हूं, तो किसे मालूम प.
ड रहा है कि सब मर गया है।

छोटी सी उम्र थी, लेकिन उस दिन से मृत्यु मेरे लिए समाप्त हो गयी। उस दिन के
बाद बहुत प्रियजन मरे, लेकिन फिर मेरे लिए कोई नहीं मरा। दूसरे दिन सुबह मैं ि
जतनी शांति और आनंद से भरा था, वैसी शांति उस दिन तक मैंने कभी नहीं जानी
थी और वैसा आनंद भी न जाना था। एक अनुभव से होकर गुजरा था उस दिन,
तो पता ही नहीं था। लेकिन अब लौट कर कह सकता हूं कि वह समाधि के द्वार प
र पहला झांकना था।

समाधि के द्वारा पर जिसे झांकना है, उसे भीतर मरने की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता
है। लेकिन हम सब मरने से बहुत डरे हुए लोग हैं। हम तो जीवन भर इसी कोशि
श में रहते हैं कि कहीं मर न जाए। हमारा सारा प्रयास एक ही बात के लिए है कि
मर न जाए।

हम मृत्यु से बचने के प्रयास में संलग्न हैं। हमारी पूरी जिंदगी, जीने की जिंदगी नहीं
है, मरने से बचने की जिंदगी है।

हमारा धन, हमारे मकान, हमारे मित्र, हमारे प्रियजन, ये सब मृत्यु के खिलाफ हमा
री सुरक्षाओं की दीवालें हैं। इसलिए जिस आदमी के पास जितना धन है, वह अपने
को उतना ही सुरक्षित अनुभव करता है। जिसके पास जितना बड़ा किले जैसा मकान
हो, वह उतनी ही सुरक्षित अनुभव करता है। जिसके पास सैनिकों का पहरा है, व
ह अपने को सुरक्षित अनुभव करता है। जिस आदमी के पसा जितनी शक्ति हो, वह
समझता है कि मैं उतना ही सुरक्षित हूं। हमारी सारी दौड़ मरने से बचने के लिए
है, और यही हमारा भय है।

दुनिया में दो ही तरह के आदमी हैं। एक वे जो जीते हैं, और दूसरे वे जो मरने से बचने का इंतजाम करते रहते हैं। लेकिन जो मरने से बचाने का इंतजाम करता रह ता है, वह मरने से नहीं बच पाता। मृत्यु तो आती है। और आश्चर्य यह है कि जो जीता है, वह मरने से बच जाता है। क्योंकि जो जीवन की जितनी गहराइयों में उत रता है, वह पाता है कि मृत्यु नहीं है।

मृत्यु सत्य का असत्य है। उससे बड़ा कोई भी असत्य नहीं है।

लेकिन, हम उसी से भयभीत हैं और उसी से बचने की कोशिश में संलग्न हैं। भाग रहे हैं, भाग रहे हैं कि मर न जाए। इसलिए हम धार्मिक मनुष्य नहीं हो पाते। धार्मि क वह है, जो मरने के लिए तैयार है। वह कहता है—मरना ही है, तो मैं मर के दे ख लेना चाहता हूं।

सुकरात मर रहा था। किसी ने पूछा, तुम घबरा नहीं रहे हो? मौत करीब आ रही है।

तो सुकरात ने कहा—दो बातें नहीं हो सकती। या तो मैं मर ही जाऊंगा, कुछ भी न बचेगा। और अगर मर ही जाऊंगा, तो फिर भय कैसा? क्योंकि भय के लिए बचन ा जरूरी है। फिर दुख कैसा? क्योंकि दुख के लिए भी मेरा होना जरूरी है। फिर डर क्या है? अगर मैं मर ही गया, कुछ भी न बचा, तो डर नहीं है। अगर मैं बच ही गया और मरने में न मरा, तो फिर भय का कोई सवाल नहीं है। जब बच ही गया तो डर कैसा? वह जो मर गया, वह मैं नहीं था जानूंगा और जो बच गया, वही मैं हूं।

सुकरात ने कहा, दो ही बातें हैं या तो मर ही जाऊंगा, तब डर का कोई उपाय न रहा और अगर बच ही गया, तब भी तो डर की कोई बात नहीं है।

लेकिन हम तो बहुत डरे हुए हैं, बहुत भयभीत हैं। इसलिए हम समाधि के पसा नहीं पहुंच पाते हैं। समाधि के पास वहीं पहुंच सकता है जो मरने के लिए तैयार है। इसलिए हम किसी की मृत्यु के बाद जब चबूतरा बनाते हैं, तो उसे भी समाधि कह ते हैं। और ध्यान की आखिरी स्थिति को भी समाधि कहते हैं। दोनों में कुछ जोड़ है ।

जो आदमी जीते जी अपने को कब्र में डाल देता है, वह समाधि को उपलब्ध हो जा ता है। लेकिन जीते जी कब्र में डालना, जीते जी मरने की तैयारी बहुत दुरूह है।

मैंने सुना है—मिस्र में एक आश्रम था। उस आश्रम के नीचे ही मरघट था। जमीन को खोदकर मरघट बनाया गया था। हजारों वर्ष पुराना आश्रम था। जब कोई भिक्षु मर जाता, तो पत्थर उखाड़ कर उसे नीचे के मरघट में डाल कर, चट्टान बंद कर देते थे। एक बार एक भिक्षु मरा। लेकिन कुछ भूल हो गयी। वह मरा नहीं था। सिर्फ बे होश हुआ था। उसे मरघट में डाल दिया गया और चट्टान बंद कर दी गयी। पांच छ ह घंटे बाद उस मौत की दुनिया में उसकी आंखें खुलीं। वह होश में आ गया। उसक ी मुसीबत को हम सोच सकते हैं। सोच लें, कि हम उसकी जगह हैं। वहां सिर्फ ला शें ही लाशें हैं। हड्डियां, कीड़े मकोड़े और दुर्गंध! उस व्यक्ति को पता है कि जब त

क ऊपर और कोई न मर, तब तक मरघट का द्वार न खुलेगा। उसे यह भी पता है कि अब वह कितना ही चिल्लाए, उसकी आवाज ऊपर तक नहीं पहुंचेगी। क्योंकि आश्रम मील भर दूर है। फिर भी वह चिल्लाया और मरघट पर आश्रम के लोग तभ ी आते हैं जब कोई मरता है।

और मरघट का द्वार बंद है। फिर वह जानते हुए चिल्लाता। हम भी बहुत बार जान ते हुए चिल्लाते हैं कि आवाज नहीं पहुंचेगी। मंदिरों में लोग चिल्ला रहे हैं जानते हु ए कि आवाज कहीं नहीं पहुंचेगी। मंदिरों में लोग चिल्ला रहे हैं जानते हुए कि आवा ज कहीं नहीं पहुंचेगी। आदमी जानते हुए भी चिल्लाए चला जाता है। जहां आशा न हीं है, वहां भी आशा किए चला जाता है।

वह आदमी भी बहुत चिल्लाया बहुत चिल्लाया! उसका गा रूंध गया, आवाज बंद हो गयी। शायद हम सोचेंगे कि उस आदमी ने आत्महत्या कर ली होगी। लेकिन नहीं, उस आदमी ने आत्महत्या नहीं की। वह आदमी थोड़े—बहुत दिन नहीं, सात साल तक उस कब्र के भीतर जिंदा रहा। कैसे जिंदा रहा? उसने सड़ी हुई लाशों को खाना शुरू कर दिया। मरघट की दीवालों से पानी चूता था, वह पीने लगा। इस प्रतीक्षा में कि कभी न कभी तो कोई मरेगा ही। द्वार तो खुलेगा ही—आज नहीं तो कल, क ल नहीं तो परसों। कब सूरज उगता है, उसे पता नहीं चलता था। कब रात आती, उसे पता नहीं चलता था। सात वर्ष बाद कोई मरा।

चट्टान उठायी गयी। वह आदमी बाहर निकला। बाहर खाली हाथ नहीं निकला। मिस्र मैं रिवाज है कि मरने वाले आदमी को नये कपड़े पहना दिए जाते हैं। और उसके शव के साथ दो चार कीमती कपड़े रख दिए जाते हैं। कुछ रुपए पैसे भी रख दिए जाते हैं। उसने सब मुर्दों के पकड़े पैसे इकट्ठे कर लिए थे कि जब निकलेगा, तब ले ता चला जाएगा। वह एक बड़ी पोटली बांध कर कपड़े और एक बड़ी थैली में सब रुपए भर कर बाहर आया। उसे कोई पहचान नहीं सका। लोग घबराकर भागने लगे कि यह कौन है? उसके बाल जमीन छूने लगे थे उसकी आंखों की पलकें इतनी ब. डी हो गयी थीं कि आंखें खुलती नहीं थीं। उसने कहा, भागते हो? पहचाना नहीं? मैं वही हूं, जिसे तुम सात साल पहले गाड़ गए थे। उन्होंने कहा, लेकिन तुम जिंदा कैसे हो? अगर छह घंटे बाद होश में आ गए थे, तो बचे कैसे? सात साल तक मर घट में कैसे रहे? उस आदमी ने कहा, मरना इतना आसान नहीं है। मैं भी यही सो चता रहा! अगर कोई उस मरघट में गिरा होता, तो जीने के बजाया मर गया होता । लेकिन अब कह सकता हूं कि मरना इतना आसान नहीं है मैंने जीने की पूरी कोि शश की। और जीने के लिए मैंने जो जो किया, वह भी घबराने वाला है। आज अग र फिर से सोचूं तो शायद न कर पाऊं।

हम भी सोचेंगे कि कैसा आदमी रहा होगा? लेकिन वह आदमी ठीक हमारे जैसा ही था। हम भी उसकी जगह होते, तो यही करते। और जिसे हम जिंदगी कह रहे हैं, क्या उस मरघट से बहुत भिन्न है? जिसे हम भोजन कह रहे हैं? क्या वह उस मर घट में किए गए भोजन से बहुत भिन्न है? जिसे हम कपड़े और रुपए का इकट्ठा कर

ना कह रहे हैं, वह भी क्या मुर्दों से छीने गए रुपए और कपड़े नहीं हैं? हम कहें या न कहें, मुर्दे के कपड़े और रुपए छीनने को हम सब उत्सुक हैं।

हम राष्ट्रपति को शुभकामनाएं भी देते हैं, उसके जन्म दिन पर उसे फूल मालाएं भी पहनाते हैं और में भगवान से जाने अनजाने प्रार्थना भी करते हैं कि कब तक टिकेगा यह? क्योंकि वह बिदा हो तो उसकी मरी हुई कुर्सी किसी को मिले जब दिल्ली में कोई मरता है, तो जो लोग चेहरे लटकाए, आंसू भरे हुए, मरघट की तरफ ले जाते मालूम पड़ते हैं, वे ही तैयारी भी कर रहे होते हैं कि लौटकर आऊं और मरी हुई कुर्सी पर बैठ जाऊं। कहीं ऐसा न हो कि कोई दूसरा उस पर बैठ जाए। मरघट पर ले जाते वक्त भी इस बात की होड़ रहती है कि मुर्दे को सबसे पहले कौन हाथ देगा; क्योंकि कुर्सी पर उसका कब्जा होगा।

मैंने सुना है कि गांधी मरे, तो जिस टैंक पर चढ़ा कर उन्हें ले जाया गया था, उस पर खड़े होने की भी प्रतियोगिता थी कि कौन-कौन नेता उस पर खड़े हों।

जिसको हम जिंदगी कहते हैं, वह भी एक बड़ा मरघट है, जिसमें क्यू है मरने वालों का--कोई अभी मरेगा, कोई थोड़ी देर बाद, कोई कल, कोई परसों, लेकिन मरेंगे सब। इसलिए जो मकान हैं हमारे पास, वह मुर्दों से छीने हुए हैं। हमारे जो कपड़े हैं, वह भी! और जो धन है, वह भी! सब कुछ मुर्दों से ही तो छीना गया है।

जहां भी हम जी रहे हैं बिना किसी आनंद को जाने, बिना किसी शांति को पाए जी रहे हैं। लेकिन सिर्फ एक आशा में कि शायद कल तो आनंद मिले, शायद कल शांति मिले, कल कुछ मिल जाए; तो कल तक जीने की कोशिश करो। किसी भी भांति कल तक जी लें, शायद कुछ मिल जाए! लेकिन मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि जो मरने के लिए तैयार नहीं है, उसे कुछ मिल जनीं सकेगा। लेकिन हम मरने से इतने भयभीत हैं कि मरने से बहुत पहले बेहोश हो जाते हैं। इसलिए हमें मृत्यु की कोई याद नहीं रह जाती। और जन्मने की क्रिया हमें इतनी ज्यादा डरा देती है कि हम बेहोशी में ही पैदा होते हैं और बेहोशी में ही मरते हैं। इसलिए उसकी स्मृति नहीं बन पाती। इसलिए पिछले जन्म की भी स्मृति नहीं रह जाती। पिछले जन्म की स्मृति न रह जाने के और कोई कारण नहीं हैं। पिछले जन्म की स्मृति न रह जाने का एक ही कारण है कि बीच में आयी मृत्यु में हम इतने भयभीत हो गए कि बेहोश हो गए। उस बेहोशी का जो अंतराल है, उसने स्मृति को दो हिस्सों में तोड़ दिया है। पिछली स्मृति अलग टूट गयी। यह स्मृति अलग टूट गयी। बीच में इतना बड़ा अंतराल पड़ गया कि दोनों को जोड़ना मुश्किल है। हां, कोई मरने की कला सीख जाए तो पिछले जन्म को स्मरण कर सकता है। क्योंकि तब फिर वह उस अंतराल को जोड़ सकता है। जन्म से भी हम बेहोश हैं। बहुत बार जन्म हैं लेकिन बेहोश जन्मे हैं। क्योंकि जन्म भी, यह जान कर हैरानी होगी, बच्चे को मृत्यु जैसा ही मालूम होता है। जब एक बच्चा मां के पेट से जन्मता है, तो उस बच्चे को मृत्यु जैसी प्रतीत होती है। वह इसलिए मृत्यु जैसी प्रतीत होती है कि जिसे उसने नौ महीने तक जीवन समझा, वह अंत पर आ गया। जिसे उसने जीवन माना, वह अब समाप्त हो रहा है।

और आगे के जीवन का तो उसे कुछ भी पता हनीं है। आगे तो भय है। मां के पेट का सारा आराम, सारी सुविधा सारा सुख छिन रहा है। उसकी दुनिया से वह उठा या जा रहा है,, सब जड़ें टूट जाएगी। तो जिसे हम जन्म कहते हैं, वह मृत्यु की त रह ही प्रतीत होता है, इसलिए बच्चा भी बेहोश ही जन्मता है। वह होश में नहीं हो ता। और जिसे हम मृत्यु कहते हैं, वह जन्म ही है, किसी और अर्थ में! लेकिन हम भी बेहोश मरते हैं। क्योंकि हमें लगता है कि जो था, वह छूट रहा है। और जो जा एगा, वह तो परिचित है। आएगा भी या नहीं आएगा? पता नहीं क्या होगा?

हर मृत्यु जन्म है और हर जन्म मृत्यु है। इस जगत में न तो कुछ समाप्त होता है और न कुछ शुरू होता है। जिसे हम शुरुआत कहते हैं, वह किसी चीज की समाप्ति होती है। और जिसे हम समाप्ति कहते हैं, वह भी किसी चीज की शुरुआत है।

जिसे हम सांझ कहते हैं वह दिन का अंत है और रात प्रारंभ है। जिसे सुबह कहते हैं, वह रात का अंत है दिन का प्रारंभ है। जगत में कुछ भी पूर्ण अंत को नहीं पहुंच ता और कुछ भी पहला प्रारंभ नहीं है। इस जगत में अंत है, प्रारंभ है। प्रारंभ है, अं त है।

कोई चीन न कहीं जाकर समाप्त होती है, और न कहीं शुरू होती है। इसीलिए जी वन अनंत है।

लेकिन मरने का डर बेहोश कर देता है, और मरने के डर के कारण ही हम समाधि में कभी प्रवेश नहीं कर पाते।

कितने लोग हैं, जो मुझसे कहते हैं—अभी एक मित्र कहते थे—आप ध्यान की बात तो कहते हैं, लेकिन अभी समझ में नहीं आती। उत्तर भी नहीं पाते। न ही उत्तर पा एंगे।

जब तक मन की बहुत गहराई में मरने की तैयारी न हो, तब तक समाधि में नहीं उतरा जा सकता लेकिन जो लोग ध्यान करने आते हैं वे इसलिए करने आते हैं कि शायद ध्यान ही मरने से बचने की एक तरकीब बन जाए।

वे भी यह सोचते हैं कि शायद ध्यान के द्वारा आत्मा अमर है, ऐसा पता चल जाए। लेकिन उसी को पता चलेगा,, जो मरने के लिए तैयार है। ध्यान से पता चलेगा ि क आत्मा अमर है; लेकिन उसे नहीं, जो सिर्फ आत्मा की अमरता का पता लगाने चला है। उसे जो मरने के लिए तैयार है, मरने की तैयारी उसे उस जगह पहुंचा दे ती है, जहां न मरने वाले का पता चल जाता है। इसलिए समाधि को कभी भी, को ई उपलब्ध हुआ हो, तो समाधि के द्वार पर मृत्यु का बोध पहला चरण है।

लेकिन हम मृत्यु के बोध को हटाए रहते हैं। हमने मरघट गांव के बाहर बनाए हैं, ताकि रोज-रोज दिखाई न पड़ें। होना तो चाहिए गांव के बीच में मरघट, जहां से ह र बच्चा निकले, हर आदमी निकले। दिन मग दो चार बार उसे मृत्यु का खयाल अ ा जाए। हमने उसे गांव के बारह बनाया है—दर, सुरक्षित कि पता न चले।

अभी एक गांव में गया। वे बड़े होशियार लोग हैं। उन्होंने जो मरघट बनाया है, बड़ा अच्छा बनाया है कि जहां जाकर भी आपको मरघट का पता न चले। वहां भी उन्ह

ोंने बगीचे लगाए हैं, लाइब्रेरी बना दी है। वहां जो लोग जाते हैं, वे वहां भी अखबा र पढ़ते रहते हैं।
ऐसे तो अभी भी हम लोग जब मरघट पर जाते हैं, तो वहां दुनिया भर की और बा तें करते रहते हैं, मौत को छोड़ कर। मौत को छोड़ देते हैं। और सदा एक खयाल बनाए रखते हैं कि सदा कोई और करता है। मैं कभी नहीं करता हूं। वे दूसरे को छोड़ देते हैं, यह भी मर गया, वह भी मर गया। मैं कभी नहीं करता हूं। दूसरे मर ते हैं। और जब दस पांच आदमियों को कोई मरघट पहुंचा आता है, तो वह और अ াश्वस्त हो जाता है कि मैं कैसे मरूंगा? मैं तो दूसरों को पहुंचाने का काम करता हूं।

हिटलर जैसे लोगों की मन:स्थिति में जो गहरे उतरे हैं, उनका खयाल यह है कि ऐसे लोग मृत्यु के डरे हुए लोग हैं, और दूसरों को मार कर आश्वासन पाते हैं कि मैंने तो इतने लोगों को मार डाला, मुझे कौन मार सकता है?
चंगेज या तैमूर या हिटलर या मुसोलिनी या स्टैलिन या माओ, ये सारे के सारे लोग मृत्यु से डरे हुए लोग हैं और मृत्यु से बचने की प्रक्रिया में ही वे दूसरों को मार र हे हैं। अंदाज है कि हिटलर ने कोई ७०-८० लाख लोगों को सारा। स्टैलिन ने कोई एक करोड़ लोगों को मारा।
कोई एक आदमी एक करोड़ लोगों को मारे, तो वह एक अर्थ में परमात्मा जैसा ह ो जाता है। उसे लगता है कि मुझे कौन मिटा सकता है। बहुत गहरे में उसे यह आश्वासन मिलता है कि मैं मिटाने वाला हूं। मैं मिटने वाला नहीं हूं।
परमात्मा जैसा अपने को अनुभव करने दो ही रास्ते हैं--या तो हम मिटाने में उसक ी होड़ कर लें, या बनाने में उसकी होड़ कर लें। तो बनाने में हम उसी होड़ नहीं क र पाते हैं। फिर मिटाने में करना आसान पड़ जाता है। तो मिटा कर हम ईश्वर जैसे होते हैं।
लेकिन है मृत्यु का भय! इसलिए हिटलर जैसा आदमी जो इतने लोगों को मारता है , वह बहुत डरा हुआ आदमी है। वह रात कमरे में किसी को प्रवेश करने नहीं देता ।
उसने अपनी शादी भी न की। क्योंकि कम से कम पत्नी को तो प्रवेश करने देना हो गा। शादी नहीं की, इसी डर से कि एक स्त्री कमरे में आनंद देना पड़ेगा। पता नहीं, स्त्री धोखा दे जाए। जहर पिला दे। गोली मार दे। दुश्मन से मिल जाए। हिटलर ने मरते वक्त विवाह किया मरने के घंटे भर पहले! जब बर्लिन हार गया और जब ि हटलर जहां छिपा था, उसको सब लोगों के सामने ही बंद करने लगे और दुश्मन के हवाई जहाज बर्लिन के चक्कर काटने लगे, तब उसने अपने एक मित्र से कहा कि उस स्त्री को लिवा लाओ, बारह वर्ष से मेरे साथ विवाह करने के लिए प्रतीक्षा कर रही है। तब मित्रों ने कहा कि अब क्या अर्थ है? पर उसने कहा कि अब मैं निर्भय हूं। अब मरना निश्चित ही है! उसे ले आए। एक सोए हुए पादरी को जबरदस्ती उठ ा कर ले आया गया और नीचे के तलघर में चार छह आदमियों के सामने हिटलर

का विवाह हो गया। और विवाह के बाद जो उन्होंने सुहागरात का पहला काम किय
ा, वह था जहर पी लेना। दोनों जहर पीकर मर गए। लेकिन तक वह निश्चित था ि
क अब किसी को इतने निकट लिया जा सकता है, अब कोई डर नहीं है।

दुनिया में जितने बड़े हत्यारे हुए हैं, वे सब मृत्यु से डरे हुए लोग थे। दूसरे की हत
या कम करते ही इसलिए हैं कि हम आश्वस्त हो सकें कि मैं नहीं मरूंगा। मेरी कोई
हत्या नहीं कर सकता। हमने जो व्यवस्था ईजाद की है जीवन की, उस व्यवस्था को
अगर हम बहुत और से देखें, तो हम पाएंगे कि हम मृत्यु से भयभीत हैं। लेकिन य
ह सीधी बात हम नहीं कहते।

बचपन की मुझे याद है, जिस घटना की बात मैंने कही, उसके बाद मृत्यु मेरे लिए
सवाल न रही।

बचपन की मुझे याद है, जिस घटना की बात मैंने कही, उसके बाद मृत्यु मेरे लिए
सवाल न रही।

संन्यासी गांव में आए हुए थे। गांव में बड़ी चर्चा थी। मैं भी उन्हें सुनने गया था। वे
आत्मा की अमरता की बातें कहते थे। मरे हुए और मरने से डरे हुए लोगों को सब
से प्रीतिकर यही लगता है कि बार-बार दोहराओ और समझाओ कि आत्मा अमर है
, वे बड़े प्रफुल्लित होते हैं। इसलिए नहीं होते कि आत्मा अमर है। इसलिए कि उन्हें
फिर एक आदमी ने आश्वासन दिया कि आत्मा अमर है। डरने की कोई जरूरत न
हीं है।

वे समझा रहे थे कि आत्मा अमर है और मैं देख रहा था कि गांव के सब डरे हुए
लोग आनंद से उन्हें सुन रहे हैं। मैंने खड़े होकर उनसे पूछा कि स्वामी जी, आपके
कब हैं इरादे मरने के?

उन्होंने कहा, कैसी बेहूदी बात पूछते हो? यह कोई पूछने की बात है?

और गांव के लोगों ने मुझसे कहा, यह कोई पूछने की बात है? यह पूछना अशुभ है
किसी आदमी से, यह पूछना, कि कब मरने के इरादे है स्वामी जी तो बहुत नाराज
हो गए। मैंने कहा, मैं तो नाचता था, वे कह रहे हैं—आत्मा अमर है, तो मरने की
बात पर नाराज न होंगे। लेकिन मरने के खयाल से नाराज हो गए। वे कहने लगे ि
क इस तरह की भदर्द बात नहीं पूछनी चाहिए।

अगर आत्मा अमर है, तो मृत्यु भददी कैसे रह जाती है? फिर मृत्यु रह ही नहीं ज
ाती। गिर मृत्यु की बात अशोभन नहीं है।

हम मृत्यु की बात ही नहीं करते, उसे हम पाले रहते हैं। वह आ भी जाए बीच में,
तो हम दूसरी बातें करते हैं। पड़ोस में कोई मर जाए, तो हजार बातें करते हैं। ब
स एक बात छेड़ देते हैं। हम कहते हैं बेचारा हम उस पर दया खाते हैं। बिना इस
की फिकर किए हुए कि जिस पर हम दया कर रहे हैं, वह घटना हम पर भी आज
नहीं कल घट जाएगी। हम बात करते हैं कि उसके बच्चों का क्या होगा? उसकी
पत्नी का क्या होगा? हम उसकी नौकरी की, पेशे की धंधे की बात करते हैं कि इ
न सबका क्या होगा?—हम सब बात करते हैं। सिर्फ एक बीच के गोल घेरे की बात

छेड़ देते हैं। उस पर जो मृत्यु घटित हुई, उसकी बात नहीं करते कि मृत्यु क्या है ? उसे हम बात के बाहर रखते हैं। उसे हमें सदा किनारे रखते हैं।
अगर हमारी जिंदगी में कोई सबसे सुनिश्चित बात है, तो वह मृत्यु है। बाकी तो स ब अनिश्चित है। सब से सुनिश्चित बात की सब से कम चर्चा है। आपने मृत्यु पर क ोई किताब न देखी होगी। आत्मा की अमरता पर किताबें हैं। मृत्यु पर किताब नहीं है! मृत्यु पर कोई बात ही नहीं करता, क्योंकि यह बड़ा खतरनाक सत्य है—कहीं दि खायी न पड़ जाए।
लेकिन हम कितना ही बाहर रखें, मृत्यु बाहर नहीं रहती, वह एक दिन आ ही जा ती है। हमारे सब उपाय तोड़ कर भीतर चली आती है। हमारे सब द्वार दरवाजे बे कार सिद्ध होते हैं, सब पहरे बेकार सिद्ध होते हैं। हमारे मित्र, साथी, संबंधी, सब व यर्थ सिद्ध होते हैं।
जिनके लिए हमने इकट्ठा किया था, कि वे हमारा अकेलापन मिटाएंगे, हमें लोनली न मालूम होने देंगे, पत्नी को लाया था, कि मैं अकेला न रहूं। मित्र बनाए थे कि मैं अकेला न रहूं; लेकिन जब मौत आती है तो पाता हूं कि मैं अकेला रह गया हूं। और जिन्हें मैंने सोचा था, वे रो रहे हैं मेरे लिए, लेकिन मेरा साथ देने को तो कोई भी तैयार नहीं है। वे रो रहे हैं कि बेचारा! वे दुखी हो रहे हैं। लेकिन दुखी भी शा यद मेरे लिए नहीं हो रहे हैं। वे दुखी भी सिर्फ इसीलिए हो रहे हैं कि अकेले हो गए । जल्दी ही इंतजाम करेंगे कि उनका अकेलापन मिट जाए। वे फिर भरे पूरे हो जाए । अकेलेपन से बचने के लिए हमने बनाया है समाज। बनाए हैं दल। बनायी हैं संस्था एं। बनाए हैं संगठन। बनाए हैं राष्ट्र।
अकेलेपन से बचने के लिए बनायी हैं जातियां हिंदू और मुसलमान, जैन और ईसाई। हमने बहुत भीड़ इकट्ठी की है, लेकिन क्या फर्क पड़ता है? हम अकेले ही हैं और हमारा सब इंतजाम झूठा है। हमारे सब इंतजाम धोखे के हैं। मौत हमारे सारे इंतजा म व्यर्थ कर देती है।
मौत के सत्य को पहचानने की जरूरत है। मौत के सत्य के प्रति भयभीत होने की जरूरत नहीं है। क्योंकि, जैसे कि सुकरात ने कहा, ठीक ही कहा कि अगर मरूंगा ि बलकुल तो मर ही जाऊंगा। और अगर नहीं मरूंगा, तो नहीं ही मरूंगा।
हमारी मौत से बचने की व्यवस्था हमें ध्यान के करीब नहीं पहुंचने देती। हमने ध्यान और समाधि से बचने के लिए, दूसरी धार्मिक क्रियाएं ईजाद की हैं, जब कि समाि ध ही धर्म का मूल आधार है। बाकी सब क्रियाएं धोखा हैं। समाधि से बचने के लिए हमने प्रार्थनाएं ईजाद की हैं। जप तप ईजाद दिया है। हमने मंत्र तंत्र न जाने क्या-क्या ईजाद किया है—सब समाधि से बचने के लिए। धर्म का जो जाल चारों तरफ दि खाई पड़ता है, सब क्रिया कांड है, वह हमें मारने की दिशा में गति नहीं देता है। व ह हमें जाने का सहारा देता है। वह हमसे कहता हैं घबराओ मत। आश्वासन देता है । धर्म का कोई भी आश्वासन नहीं है। धर्म तो कहता है आओ, मिटो और मर जा ओ। लेकिन जैसी ही कोई मरने को पूरी तरह राजी होकर आता है, वह पाता है ि

क कुछ है, जो कि मरता ही नहीं। इस कुछ को जानते हुए, जांचते हुए, पहचान ले
ना जरूरी है। फिर कभी मृत्यु नहीं है। फिर मरेंगे हम होश से। और जो आदमी एक
बार होश से मर गया, उसकी सारी जिंदगी का अर्थ, उसके जन्मने की व्यवस्था, उ
सकी सारी यात्रा बदल जाती है। लेकिन होश से मरने के लिए, कांशस डेथ के पहले
, हमें जीते जी मरने का कुछ अनुभव करना पड़ेगा। हम जीते जी मरने की किसी ि
दशा में उतर जाए। हम जीते जी मर जाए। जीसस का एक बहुत कीमती वचन है
कि जो अपने को बचाएगा वह मिट जाएगा और जो अपने को मिटाने को राजी है
वह बचा लिया जाएगा। ठीक यही कहा है।
शायद जीसस का सूली पर लटकना ही प्रतीक है–मिटने का, पूरी तरह मिटने का।
लेकिन जीसस तो शूली पर लटके। उनके अनुयायियों ने बड़ी तरकीब निकाली। एक
छोटी सी सूली बना कर गले में लटकाए हुए हैं। अब सूली पर गला लटके, तब तो
समझ में आता है। लेकिन गले में सूली लटके, यह बिलकुल समझ में नहीं आता। स
ारी दुनिया में, जिन्हें हम धर्म अनुयायी कहते हैं, वे इसी तरह के दुखद ढंग पैदा क
र लेते हैं। बात वैसी दिखायी पड़ती है। जीसस भी सूली पर लटके हैं। जीसस का पा
दरी भी सूली गले में लटकाए हुए हैं। सोने की सूली बना ली है। सोने की कहीं सू
लयां होती है? और सूलियां वहीं गले में लटका कर चलने का कुछ मतलब होता है
? सूली प्रतीक है किसी और बात का; मिटने की तैयारी का। जीसस भी आखिरी
क्षण में बहुत घबरा गए थे। और मेरी दृष्टि में वही क्षण उनकी जिंदगी का सबसे क
ीमती क्षण हैं। जब उन्हें सूली पर लटकाया गया और हाथ में कीले ठोके गए तो उ
नके मुंह से आवाज निकली–
हे परमात्मा! यह क्या कह रहा है? यह तू क्या कह रहा है? यह मेरे साथ क्या हो
रहा है? अत्यंत चिता और तनाव से भरे हुए उनके प्राणों से आवाज निकली कि
परमात्मा, तू मुझे क्या दिखला रहा है? शिकायत थी। शिकायत खबर देती है कि
जीसस को पता नहीं चला। लेकिन मौत के क्षण में समझ में आ गयी बात। और व
ह हंसने लगी कि मैं राजी हूं। यह एक क्षण ही जीसस के जीवन में क्रांति का है।
जिस क्षण उन्होंने कहा, हे परमात्मा, यह क्या दिखला रहा है, उस क्षण उन्हें मृत्यु
के संबंध में शिकायत है। उस समय तक वे बढ़ई के एक बेटे जीसस थे। और एक
क्षण बाद उन्होंने कहा, तेरी मर्जी! जो भी करे मैं राजी हूं! बस, वह जीसस ने रहे,
क्राइस्ट हो गए। एक साधारण आदमी के बेटे न रहे, परमात्मा के बेटे हो गए। मर
ने को राजी हो गए। एक क्षण, समाधि का क्षण बन गया, जैसे ही उन्होंने कहा कि
मैं राजी हूं।
जो आदमी अपने भीतर कह सकता है कि मैं मरने को राजी हूं, उसकी जिंदगी में
समाधि का क्षण जाता है। ऐसा आदमी मर नहीं सकता।
मैं तो इसीलिए ध्यान खोज रहा हूं कि मर जाना पड़े। आत्मा की अमरता का पता
चल जाए, परमात्मा से मिलना हो जाए। और धारणा पक्की कि कभी नहीं मरूंगा,

अगर शरीर मर भी जाए तो आत्मा अमर है; कुछ भी हो जाए, लेकिन मैं न मरूंगा

मृत्यु से डरा हुआ आदमी अगर ध्यान की खोज में जाएगा, तो ध्यान में जा नहीं स
कता। जो आदमी मरने को राजी है, उसे मैं संन्यासी कहता हूं। वह कपड़े बदलता
है या बदलता है, बेमानी बात है। इसीलिए हम संन्यासी के नाम बदल देते है। लेकि
न नाम बदलने से कुछ नहीं होता, क्योंकि वह आदमी तो वहीं रह गया है। नाम ब
दलने हैं इसलिए कि मानते हैं कि पुराना आदमी मर गया है। यह दूसरा आदमी है।
लेकिन पुराना आदमी समाधि के बिना मर नहीं सकता। यह आदमी वहीं का वहीं
है।

एक युवक मेरे पास आया अभी और उसने कहा—मैं संन्यास लेना चाहता हूं, आपकी
क्या सलाह है?

एक युवक मेरे पास आया अभी आया और उसने कहा—मैं संन्यास लेना चाहता हूं,
आपकी क्या सलाह है?

मैंने कहा, संन्यास कभी किसी ने लिया है? और जब लिया होगा तो झूठा होगा। संन्
यास लिया नहीं जा सकता। क्योंकि वह जो लेने वाला है, वह मर जाए, तो संन्यास
घटित होता है—वह जो लेने वाला है, जो कहता है, मैं संन्यास ले रहा हूं। उसकी
वृत्ति ही तो संन्यास बनती है! तो, मैंने उससे कहा, जब तक संन्यास लेने जैसा लगे,
तब तक लेना ही मत। लेकिन जिस दिन तुम पाओ कि वह आदमी मर ही गया ज
ो संन्यास लेता फिरता था, उस दिन संन्यासी हो जाओ। और मैंने कहा, जब तक ि
कसी से पूछना पड़े, तब तक तो लेना ही मत! क्योंकि दूसरे की सलाह से लिया हु
आ सदा झूठा हो जाता है। जिस दिन तुम पाओ कि सारी दुनिया भी कहे कि संन्या
स मत लेना, लेकिन तुम पाओगे कि लेने का सवाल ही नहीं रहा, बस वही संन्यास
हो जाएगा।

पुरानी दुनिया में संन्यासी को मरघट पर ले जाते थे। उसे चित्त पर सुलाते थे, चित्त
में आग लगाते थे। फिर जलती हुई चिता से उसे उठाते थे और कहते थे, वह आ
दमी मर गया जो तुम थे। अब एक दूसरे आदमी का जन्म हुआ।

मुर्दे का सिर घोट देते हैं न! इसलिए उस आदमी का सिर भी घोट देते थे कि वह
मर गया। फिर उसका नाम बदल देते थे, क्योंकि वह तो मर ही गया, जो किसी क
ा बेटा था, किसी का पति था, किसी का बाप था या किसी का भाई था। इसलिए
उसको दूसरा नाक दे देते थे।

अब भी वही हो रहा है; लेकिन अब यह सब झूठा है। अगर किसी को लकड़ी की ि
चता पर लिटा कर हम उठा लेंगे, तो क्या भीतर का आदमी मर जाएगा? और कप.
डे बदल देंगे, नाम बदल देंगे, तो क्या भीतर का आदमी मर जाएगा? नहीं!

चिता का अर्थ है समाधि। जो व्यक्ति समाधि में प्रविष्ट होता है, फिर वह लौटता न
हीं जो गया था। यह दूसरा है ही आदम लौटता है। यह बिलकुल दूसरा ही आदमी
होता है।

मरने की तैयारी संन्यास है और संन्यास समाधि से फलित होता है। मेरा मानना है ि
क कोई व्यक्ति कभी भी समाधि को उपलब्ध हो जाए तो वह संन्यस्त हो जाएगा। इ
सका मतलब यह नहीं कि वह घर छोड़ कर भाग जाएगा। क्योंकि घर छोड़कर तो
केवल वे ही भागते हैं जिनके लिए घर बहुत मूल्यवान है। पत्नी छोड़ कर वही भाग
ते हैं जो स्त्री लोलुप हैं। धन छोड़कर वही भागते हैं जो लोभी हैं। लेकिन जिनके लि
ए सब जैसा है वैसा स्वीकार हो गया है, वे कहीं भी नहीं भागते हैं। वे जहां हैं, हैं।
मैंने सुना—एक गांव में एक फकीर हो गया। उस गांव का राजा रात को निकलता है
कभी, तो बार-बार उस फकीर को देखता है कि नीम के वृक्ष के नीचे वह सर्दी क
ी रातों में ठिठुरता रहता है। फिर उसने गांव में पता लगाया, तो लोगों ने कहा कि
वह साधारण आदमी नहीं है, वह बहुत अदभुत आदमी है। वह कहीं पहुंच गया है।
कुछ हो गया है उसकी जिंदगी में।

राजा ने एक रात जाकर उसे कहा, चलें आप राजमहल में, वही निवास करें। राजा
ने सोचा, शायद न भी सोचा हो, लेकिन अचेतन में कहीं यह खयाल तो रहता ही
है कि संन्यासी और राजमहल! शायद कह दे कि मैं नहीं जा सकता हूं, मैं संन्यासी
हूं। सड़क के लिए किनारे पड़ा रहता हूं।

लेकिन राजा ने जब कहा, तभी वह संन्यासी उठ गयी और राजा के घोड़े पर सवार
हो गया। राजा को तो बड़ी मुश्किल हो गयी। श्रद्धा एकदम समाप्त हो गयी। राजा
ने सोचा कि मैंने कहानी नहीं कि यह आदमी एकदम राजी हो गया। यह कैसा संन्
यासी है? लेकिन अपना ही शब्द वापस लेने में थोड़ी देर लग जाती है। अब एकदम
से शब्द वापस कैसे ले ले!

जो भोगी हैं वे सिर्फ त्यागियों को पूज सकते हैं। भोगियों की पूजा ने ही त्यागियों क
ो पैदा किया है। इसलिए जिसमें धन की जितनी ज्यादा लोलपता होगी, वह उस आ
दमी के पास जाकर पैर छुएगा जिसने धन को लात मार दी हो। जो आदमी स्त्रियों
के पीछे पागल है, वह जाकर लेनी हो, तो आप लोगों जैसे हों, उससे उल्टा हो जान
ा जरूरी है। अगर वे पैर से चलते हैं तो आप शीर्षासन से चलें। फिर पूजा अर्चना ि
मलनी शुरू हो जाती है। पूजा सिर्फ उल्टे को मिलती है। और जो उल्टा है, वह बद
ला हुआ नहीं है। सिर के बल खड़े हो जाए, चाहे पैर केवल! आदमी, आदमी है। अ
ादमी बदल जाता सिर के बल खड़े होने से।

वह राजा बड़ी मुश्किल में पड़ गया, लेकिन निमंत्रण दिया था, तो फिर घर ले गया
। अच्छा महल था। फकीर को ठहरा दिया। लेकिन श्रद्धा चली गयी। क्योंकि श्रद्धा
धन के त्यागी में ही हो सकती है। और श्रद्धा धीरे-धीरे मिटती गयी; क्योंकि जो भी
खाने को कहा, वह खाना ले लिया। जहां भी सोने कहा, वहां सो गया। तब तो रा
जा ने कहा, मैं किस गलती में पड़ गया! मैं किस तरह के आदमी को ले आया! छ
ह महीने बाद एक दिन राजा ने जाकर उस फकीर से कहा कि एक सवाल मेरे मन
में उठ आया है। पूछ लूं? सवाल यह है कि मुझमें और आपमें फर्क क्या है।

उस संन्यासी ने कहा, तुम छह महीने बाद पूछ रहे हो? सवाल तो उसी रात उठ ग या था।
राजा ने कहा, मतलब?
उसने कहा, जब मैं घोड़े पर सवार हुआ था तभी सवाल उठ गया था। लेकिन बड़े कमजोर आदमी हो, पूछने में छह महीने लगा दिए!
राजा ने कहा, शायद आप ठीक कहते हैं। सवाल तो उसी वक्त उठ गया था।
उस फकीर ने कहा, तो उसी वक्त पूछ लेना था! बहुत कमजोर आदमी हो!
तो राजा ने कहा, आज तो बता दे कि मुझमें और आपमें क्या फर्क है?
फकीर ने कहा, अगर यह फर्क जानना है तो चलो। उसी जगह चलो, जहां से सह सवाल उठा था।
वे गए गांव के बाहर, उस पेड़ के नीचे। फिर वे चलते ही गए। राजा ने कहा, यह पेड़ भी निकल गया अब तो आप जवाब दें। लेकिन फकीर ने कहा, थोड़ा और आगे , थोड़ा और आगे। फिर गांव की सीमारेखा पहुंच गयी, जहां राजा का राज्य समाप्त हो जाता था। नदी थी। फकीर ने कहा, नदी के पर चलें। राजा ने कहा, लेकिन म तलब क्या है आपका? जवाब दे दें, दोपहर हो गयी। कुछ तो कह दें। फिर फकीर ने कहा, जवाब मेरा यही है कि अब मैं तो आगे जाता हूं, तुम भी साथ चलते हो? राजा ने कहा, मैं कैसे जा सकता हूं? मेरी, पत्नी, मेरे बच्चे, मेरा राज्य!
उस फकीर ने कहा, मैं तो जाता हूं। अगर फर्क दिखाई पड़े तो देख लेना। तुम्हारे म हल में मैं था, लेकिन तुम्हारा महल मेरे भीतर न था। और तुम स्वयं महल में नहीं हो, महल तुम्हारे भीतर है। अब कहां है महल तुम्हारा? कहां है पत्नी? कहां हैं तु म्हारे बच्चे?—जिनके लिए तुम कहते हो कि मुझे लौटना पड़ेगा। मेरी पत्नी, मेरे बच चे, मेरा महल, यहां कुछ भी नहीं है। मैं तुम्हारे महल में मेहमान था। मैं तुम्हारे म हल का मालिक न था, महल के भीतर था मैं, लेकिन महल मेरे भीतर न था। अब मैं जाऊं।
राजा के मन में श्रद्धा का फिर उदय हुआ, श्रद्धा का उदय होने में भी देर नहीं लग ती, जाने में भी नहीं। उसने एकदम से संन्यासी के पैर पकड़ लिए और उसने कहा, महाराज! मुझे दौड़ कर न जाए, वापस चलें। फकीर ने कहा, मैं फिर घोड़े पर सव ार हो सकता हूं, लेकिन श्रद्धा का अंत हो जाएगा। अब मुझे जाने दें। मुझे कोई कि ठनाई नहीं है। मैं लौट सकता हूं। लेकिन तुम बड़ी मुश्किल में पड़ जाओगे। छह मही ने मैं तो बड़े मजे में सोया। तुम बड़ी मुसीबत में रहे। फिर सवाल उठ जाएगा, अग र मैं लौटा। इसलिए अब मुझे मत लौटाओ। मैं तो लौट सकता हूं, क्योंकि मेरे लिए तो यह दिशा और वह दिशा सब बरसबर है। इधर जाऊं, उधर जाऊं, कि कहीं न जाऊं। कोई फर्क नहीं पड़ता है। लेकिन तुम मुसीबत में पड़ जाओगे।
इसी आदमी को मैं संन्यासी कहता हूं। जो संसार से भयभीत है, वह संन्यासी नहीं है। लेकिन जो संसार में ऐसे रहने लगा, जैसे संसार चारों तरफ है, लेकिन संसार उ सके भीतर नहीं है। वह आदमी संन्यस्त है। लेकिन समाधि में से गुजरे बिना कोई भ

ी संन्यस्त नहीं होता। बिना मरे कोई संन्यस्त नहीं हो सकता। जीते जी जो मर जात ा है, जीते जी जो मरने की कला सीख लेता है और एक बार कोई समाधि से गुजर जाए, तो प्रतिपल मरता है, और प्रतिफल नए का जन्म होता है। फिर ऐसा नहीं है कि एक दफा मर गया और दूसरा हो गया।

नहीं! प्रतिपल जो पुराना था, वह मर जाता है और नया उभरता रहता है। प्रतिपल मृत्यु है, प्रतिपल जीवन है, प्रतिपल पुनर्जीवन है। प्रतिपल मरता है पुराना, नया ज न्म लेता है। और जब कोई व्यक्ति ऐसी स्थिति में हो जाता है, तो उसके ऊपर अत ीत का कोई बोझ नहीं होता है। अतीत में सब मर जाता है और भविष्य का कोई ि चतन नहीं रहता है। जिसकी वर्तमान जीवन की पुलक रह जाती है, वह व्यक्ति पर मात्मा के पूर्ण आनंद को उपलब्ध होता है और वह जान पाता है क्या है मुक्ति, क्य ा है मोक्ष, क्या है जीवन का अर्थ, क्या है जीवन की सुगंध!

लेकिन तैरना सीखना है, तो पानी में उतरना पड़ेगा। और अगर अमृत को जानना है तो मृत्यु में जाना ही पड़ेगा। जो आदमी जितनी गहरी मृत्यु से गुजरता है, उतना ही अमृत उसे दिखाई पड़ने लगता है। गहरी मृत्यु में वह दीया दिखाई पड़ने लगता है, जो अमर हैं, जो नहीं मिटता है और नहीं मिट सकता है। उपाय नहीं मिटने का, मार्ग नहीं मिटने का। द्वार नहीं मिटने का।

अमृत को जानना है, तो मृत्यु को जानना पड़ेगा। यह बात उल्टी मालूम पड़ेगी, लेि कन बीज को अगर वृक्ष बनना हो, तो मिटना जरूरी है। अगर हम मिटें, तो अमृत का पौधा हमारे भीतर फूलना शुरू हो जाता है! अनूठी है सुगंध उसकी, अनूठा है सं गीत लेकिन हम अभागे उससे वंचित रह जाते हैं, क्योंकि हम उससे डरे रह जाते हैं , जो द्वार है; इसलिए भवन में कभी प्रवेश नहीं हो पाता।

अगर परमात्मा के मंदिर में जाना हो तो उसके द्वार का नाम मृत्यु है। इसलिए हम अपना बनाया हुआ गृह उद्योग, होम मेड भगवान खड़ा कर लेते हैं। अपना ही द्वार, अपन ही दरवाजे बना लेते हैं। मंदिर में प्रवेश करके लौट आते हैं और जहां के तहां रह जाते हैं।

नहीं! परमात्मा का मंदिर कहीं और है, जो हमारे बनाने से नहीं बनता। उसका द्वार कुछ और है। जिससे हम भयभीत हैं, वही उसका द्वार है!

मैं आपको उस द्वार में प्रवेश करने के लिए आमंत्रित करता हूं। अगर हो हिम्मत कि थोड़ा मर कर भी देखें, तो ही आए। अन्यथा न आए। कमजोर के लिए वह रास्ता नहीं है। हालांकि कोई भी इतना कमजोर नहीं है। लेकिन हम चाहे तो अपने को क मजोर बना सकते हैं।

मन से मुक्ति

मेरे प्रिय आत्मन,

एक मित्र ने पूछा है, रात की समाधि के प्रयोग में, मैं मिट गया हूं या मर गया हूं। अगर मैं मन में साक्षी हूं तो साक्षी कैसी मिट कसता है? ऐसी भावना करने का क या अर्थ है?

जब साक्षी है, तक मैं नहीं हूं। जब मैं मर जाऊंगा, मिट जाऊंगा, शून्य हो जाऊंगा, तब जो शेष रहोगे, वह साक्षी है इसलिए कोई साक्षी नहीं बन सकता, अगर बनेगा, तो मेरा अहंकार भी मजबूत रहेगा। अगर मैंने कहा कि मैं साक्षी हूं तो साक्षी अभी पैदा ही हनीं हुआ : क्योंकि साक्षी तो वह है, जो यह भी देख रहा है कि मैं साक्षी हूं। इस बात को जो देख रहा है, वह साक्षी है। मैं को भी जो जानता है, वह साक्षी है। इसलिए साक्षी कभी मैं नहीं हूं। मुझे यह चलना कि मैं हूं, यह भी जो मेरे पीछे चेतना है, उसका भ्रम है। चाहे नहीं! जब तक मैं हूं तब तक साक्षी का पता नहीं चलेगा। मुझे तो मिटना ही पड़ेगा, मुझे तो मिटना ही पड़ेगा, मुझे तो समाप्त होना ही पड़ेगा मेरे मिटने पर ही, मेरे हटने पर ही साक्षी प्रकट होगा।

साक्षी मौजूद है, परमात्मा मौजूद है। वह जिसे हम ब्रह्म कहें, वह भीतर मौजूद है। लेकिन वह मेरे मैं की परत में दबा हुआ है।

दो वर्ष पहले जब मैं यहां आया था, तब नदी पत्तों से ढंकी थी, पानी दिखायी नहीं पड़ता था। नीचे नदी, ऊपर पत्ते। पानी का पता नहीं चलता था। लेकिन जरा सा प त्ता हटाएं, तो नीचे नदी झांकने लगती है। साक्षी जो है, वह पानी की धार है, जिसे मैं के पत्तों से सब तरफ से ढांक दिया है। थोड़ा सा हटाएंगे, नीचे साक्षी झांकने ल गेगा।

ध्यान रहे, इस बात को समझ लेना बहुत जरूरी है कि मैं कभी साक्षी नहीं हो सकत ा है। जो साक्षी है; उसके सामने मैं भी खो जाऊंगा। मैं कभी परमात्मा से नहीं मिल सकता हूं, क्योंकि मैं ही उससे मिलने में बाधा हूं। जब मैं नहीं रह जाऊंगा, तभी उससे मिलन होगा। मैं ही मिटूं तो उसकी उपलब्धि है। यही सबसे बड़ी कठिनाई है ि क मैं कैसे मिटूं! मैं हमें, मिटूं कैसे? अगर मैं ही सत्य होता, तो मिटना असंभव है! लेकिन मैंने मैं बनाया है, सिर्फ खयाल ही एक व्यवस्था की तरह ले आया है। यह खयाल एक बाई प्रोडक्ट है। यह मेरे होने की जो धारणा है यह सिर्फ सपने में जन्म एक भाव है।

हम बहुत सी बातें यों ही कर लेते हैं। हम कह सकते हैं कि एक समाज यहां बैठा हुआ है, लेकिन एक-एक व्यक्ति इस कमरे के बार चले जाए, तो फिर यह पूछिए ि क समाज कहां गया? क्योंकि जो गए वे एक-एक व्यक्ति थे। समाज बाहर नहीं गया , समाज कहां है? क्योंकि हम कहेंगे कि समाज कहीं भी नहीं है, समाज तो व्यक्ति यों का जोड़ है। समाज का अपना कोई अस्तित्व न था। समाज तो एक छोटी सी घ टना थी, कुछ व्यक्तियां का जोड़ था।

भिक्षु नागसेन को सम्राट मिलिंद में आमंत्रित किया अपने दरबार में।उनको लेने के ि लए रथ भेजा जब नागसेन से मिलिंद के राजदूतों ने कहा कि सम्राट ने आपको निमं त्रण दिया है और कहा है कि भिक्षु नागसेन आए, हम उनका स्वागत करेंगे! नागसेन हंसा और कहा कि आ जाऊंगा जरूर, लेकिन भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं। तो राजदूतों ने कहा कि फिर आएगा कौन? नागसेन ने कहा जा जाऊंगा जरूर, लेकिन भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं। जाकर सम्राट से इतना कह देना। सम्राट ने कहा ि

क किस पागल को हमने बुला लिया! हम तो भिक्षु नागसेन को ही बुलाएंगे, अगर वह है नहीं, तो आएगा कौन? सिर्फ उसे आने दें।

राजद्वार पर नागसेन का स्वागत किया गया। वह रथ से उतरा। सम्राट ने पूछा, आप आ गए? मैं भिक्षु नागसेन का स्वागत करता हूं।

वह हंसा और कहा, भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं। तो सम्राट ने पूछा, क्या कह रहे हैं आप? भिक्षु नागसेन नहीं हैं, तो कौन हैं आप? नागसेन ने कहा, यह रथ दिखाई पड़ता है? रथ चला आया है। इसके घोड़े खोल दो। घोड़े खोल दिए गए। तब नागसेन ने सम्राट से पूछा, घोड़े रथ तो नहीं हैं? सम्राट ने कहा, घोड़े रथ नहीं हैं। नागसेन ने कहा, इसके पहियों को भी निकाल डालो। सम्राट ने पूछा, यह क्या हो रहा है? परंतु पहिए निकाल दिए गए। नागसेन ने कहा, ये पहिए रथ हैं? सम्राट ने कहा, नहीं।फिर रथ की एक-एक चीज निकलने लगी और वह पूछता गया। यह रथ है? सम्राट कहता रहा--नहीं! सब निकल जाने के बाद उसे सम्राट से पूछा, रथ कहां है? वह एक-एक चीज तो रथ नहीं थी! रथ पीछे से बचना चाहिए। नागसेन ने कहा, रथ का अपना होना भी नहीं है। मेरे एक-एक विचार को निकाल दो। ईश्वर को, सब वस्तुओं को निकाल दो। फिर जो बचता है वह मैं नहीं, वह भिक्षु नागसेन नहीं। वह परमात्मा है। भिक्षु नागसेन तो परमात्मा के ऊपर जड़े हुए शब्द का जोड़ है।

हम भी शब्दों के जोड़ हैं। बचपन से मरने तक हम शब्दों को इकट्ठा करते हैं। मेरा नाम जो कि एक झूठ है, सिर्फ शब्द चिपक जाता है। मेरा घर का पता कौन सा है मेरा घर? जिस किसी भी घर में मुझे बड़ा किया जाता है, वही मेरा घर हो जाता है। मतलब, कोई घर मेरा नहीं है। जिस घर की छाप बचपन से मेरे ऊपर गड़ गयी वही मेरा घर है। कौन सा मेरा देश? मतलब, मेरा कोई देश नहीं है। आंखों ने पहली दफा जिस भूमि को पकड़ लिया, वह है मेरा देश। कौन हैं मेरे प्रीतम? कौन हैं मेरे संबंधी? वही जिन पर मेरी आंखें खुली और मैंने उनकी तसवीरे पकड़ लीं। उन सबका जोड़ इकट्ठा हो गया।

अगर ठीक से एक-एक चीज को निकालने लगें, फिर पूछने लगे कौन हूं मैं, तो कुछ भी पता न चलेगा, क्योंकि सब जोड़ खाली हो जाएगा। रथ का सब समान निकल जाएगा, फिर बड़ी मुश्किल हो जाएगी। पूछना कि कौन हूं मैं? कुछ कौन उत्तर आएगा, फिर भी क्या शेष रह जाएगा। शेष वही हर जाएगा, जो मेरे जन्म के पहले भी था और जो मरने के बाद भी होता है। लेकिन मैं बिखर जाऊंगा, मैं मिट जाऊंगा। मैं एक विरोधी है।

वैज्ञानिक कुछ प्रयोग करते थे। मुर्गी का बच्चा पैदा होता है, फिर अपनी मां कौन है। वह भागने क्यों लगता है अपनी मां के पीछे? हम सदा ही ऐसे सोचते थे कि बचे को किसी तरह पता चलना चाहिए कि उसकी मां यह है। इसलिए भागने लगता है। तो उन्होंने एक काम किया कि जिस मुर्गी के अंडे से बच्चा निकला, उस मुर्गी को, उसकी मां को उसके पास से हटा दिया। उसकी जगह एक गैस से भरा हुआ गुब्बा

रा उसकी जगह सरका दिया। अब आप देखिए, गुब्बारा उड़ा, सरका, भागा, मुर्गी का बच्चा उसके पीछे भागा। फिर बड़ी मुश्किल हो गयी। वह गुब्बारे को मां समझने लगा और मां को पहचानना मुश्किल हो गया। पहला एक्सपोज गुब्बारे का पड़ गया। फिर वैज्ञानिक इस खयाल पर पहुंचे कि पहली दफा चेतना--जैसे ही कैमरे का लैंस खलता है और चित्र पकड़े जाते हैं, इसलिए पहला एक्सपोज है मां। पहला होने की वजह से उसका बहुत गहरा है। फिर सब एक्सपोजर उसके आप है। फिर कैमरा बाद में खुलेगा, इसलिए बच्चा मां से सदा के लिए सबसे गहरा बंधा रह जाता है। वह पहली दफा उसके मन का, मन ने पहला चित्र उसका ही लिया है, वही उसके मन में गहरा बैठ जाता है। फिर वह मुर्गी के पीछे नहीं भागता, वह गुब्बारे के पीछे भागता है।

वह गुब्बारे के पास सट कर सोने की कोशिश करता है, जैसे बच्चा अपनी मां के पास सोने की कोशिश करता है। फिर बहुत उपाय किए गए उसे समझाने के, कि यह तेरी मां नहीं है, लेकिन उसके लिए तो वह गुब्बारा ही मां हो चुका था। वह बच्चा मर गया। लेकिन अपनी मां को नहीं समझ पाया।

बचपन से हमारा चित्त कैमरे के समान खुलता रहता है, और चित्त पकड़ता रहता है। फिर जो भी स्मृति इकट्ठी होती है, उसका नाम है मैं। अगर आपकी सारी स्मृति छीनी जा सके, तो किसको कहेगा कि मैं हूं? यह बताना मुश्किल हो जाएगा कि मैं कौन हूं? मैं कोई सच्चाई नहीं है। मैं स्मृतियों का अलबम है, जोड़ है। जब तक यह जोड़ हमें सबसे ज्यादा सत्य मालूम पड़ता है, तब तक उस जोड़ के पीछे जो है, उसका पता न चलेगा। वृक्षों के पत्तों का ही सब कुछ समझ रखा है हमने। हमें झीन का कोई पता न चलेगा। पत्तों को हटाना होगा, झील को सामने लाना होगा।

परमात्मा हमसे बहुत दूर नहीं है, पर हमने जो मैं इकट्ठा कर रखा है, वह उसके नीचे दबा है। परमात्मा मैं के नीचे दबा है। जैसे पेपरवेट के नीचे पन्ने दबे हुए फड़फड़ा रहे हैं। हवा चलती है, पन्ने फड़फड़ते हैं, क्योंकि पेपरवेट दबाए है। ऐसे ही पूरे वक्त हम में परमात्मा तड़प रहा है, और मैं का पत्थर उसे दबाए हुए है।

समाधि में मैं को खो देना पड़ता है। मैं खो जाता है, पन्ने उड़ जाते हैं। तड़प मिट जाती है। भीतर जो छिपा है, वह प्रकट हो जाता है। साथी आप नहीं बनेंगे। जब आप नहीं रह जाएंगे, तो जो शेष रह जाएगा, जो विनम्र है, वह साक्षी रहेगा। इसलिए साक्षी को कभी पता नहीं चलता कि मैं साक्षी हूं। मैं तो साक्षी हो ही नहीं सकती। मैं तो मैं नहीं होता है, जब तक होता है, उसका नाम साक्षी है। मैं जब यह कहता हूं कि मैं को मिटा दें तो सिर्फ इतना ही कहता हूं, मैं को ठीक से पहचान लें कि यह सत्य नहीं है, सिर्फ स्मृति का जोड़ है।

मेरे एक मित्र, जो डाक्टर हैं, ट्रेन से चल रहे थे, भीड़ थी, और व बाहर डंडे को पकड़ कर लटके हुए थे। अचानक हाथ छुट गया, गिर पड़े सिर्फ सिर में चोट लगी और स्मृति खो गयी। अपना नाम भी भूल गए। बचपन में मेरे साथ पढ़े थे। गांव उन्हें देखने गया। वह मुझे ऐसे देखने लगे, जैसे कभी देखा न हो। वे एक्सपोज जो थे, मि

ट गए, स्मृति खो गयी। वे मुझसे पूछने लगे, कौन हैं आप, कैसे आए? वे किसी को पहचानते नहीं थे—पत्नी को नहीं पहचानते थे, बेटे को भी नहीं पहचानते थे। उनसे पूछिए कौन हैं आप, तो ऐसे हाथ करते थे मानो कह रहे हैं, मुझे पता नहीं कौन हूं? मैं कहां गया? लेकिन वे तो अब भी हैं, मैं कहां गया? थोड़ा सा जोड़ा था, बन गया था। वह बिखर गया, चोट खा गया? चोट खा गया मस्तिष्क, जिसमें स्मृति इकट्ठी थी। वह केंद्र टूट गया। केंद्र के टूट जाने से मैं खो गया।

चोट से अगर केंद्र टूटे, तो आदमी विक्षिप्त हो जाता है। चोट से भीतर का भी पता नहीं चलता, और जिसे वह जानता था कि मैं हूं वह भी टूट जाता है, वह मुश्किल में पड़ जाता है। लेकिन अगर हम अपनी समझ से मैं को विसर्जित कर दें, समझ से, तो भीतर का पता चल जाएगा। समझ से न करें, तो टूट जाए तोड़ा जा सकता है।

अब तो ब्रेनवाश के बहुत से उपाय ईजाद हो गए हैं। इसके चीन में बड़े जोर से प्रयोग किए जा रहे हैं। आदमी के दिमाग को पोंछा जा सकता है। जैसे टेपरिकार्ड को वापस पोंछ कर साफ कर लेते हैं, ऐसे ही मस्तिष्क की स्मृति को भी पोंछा जा सकता है।

नए ईजाद है आदमी के हाथ में। सरकार के हाथ में ताकत हो, तो विरोधी के दिमाग को वाश कर दे। वह भूल जाएगा कि वह कौन है। क ख ग से उसे शुरू करना पड़ेगा। फिर नया मैं बनाना पड़ेगा।

मैं हमारा वास्तविक मैं नहीं है। मैं के पीछे वास्तविक मैं नहीं है। लेकिन जब तक हमारा मैं नहीं मिटेगा, पीछे नजर नहीं जाएगी। इसलिए समाधि, मैं से नजर हटा कर, पीछे तरफ ले जाने के लिए है। समाधि का मतलब है—मैं नहीं हूं। फिर क्या है, उसे जान लें। लेकिन मैं न रहूं तो फिर क्या है? उसे जान लें, उसे पहचान लें।

बुद्ध मरने के करीब थे। उनसे प्रेम करने वाले भिक्षु, उनसे प्रेम करने वाले श्रद्धालु, आंखों की तादाद में इकट्ठे हो गए और रोने लगे। बुद्ध ने कहा कि तुम किसके लिए रोते हो?—उसके लिए, जो था ही नहीं या जो फिर भी रहेगा? बड़ी अजीब बात है। बुद्ध ने पूछा, किसके लिए रोते हो? एक भिक्षु ने कहा, हम आपके लिए रोते हैं। आप मरने के करीब हैं, आप मिटने के करीब हैं। बुद्ध ने कहा, जो मिटने की तरफ है, वह था ही नहीं। सिर्फ वही मिट सकता है, जो था ही नहीं, जो रहा है , वह मिट नहीं सकता।

रेत के एक छोटे से कण को भी हम नहीं मिटा सकते हो हमने हाइड्रोजन बम तो बना लिया है, लेकिन हम रेत के एक छोटे से कण को भी नहीं मिटा सके। मिटा नहीं सकते। अस्तित्व के बाहर ही मिटा सकते हैं। जो है, वह रहेगा। सिर्फ वही मिट सकता है, जो न रहा हो। कंम्बीनेशन्स मिट सकते हैं, संयोग मिट सकते हैं। हम एक कुर्सी को मिटा सकते हैं। क्योंकि कुर्सी एक जोड़ है। लकड़ी के चार टुकड़ों को कीलें ठोककर हमने खड़ा कर दिया है। जिस चीज में सिर्फ जोड़ है, वह मिट सकती है, कुर्सी मिट सकती है, लकड़ी मिट सकती है, क्योंकि वह एक जोड़ है। लकड़ी के अंद

र जो एलीमेंटस हैं, वे नहीं मिट सकते। अगर वे भी मिट सकते हैं, तो उनके गहरे में, और गहरे में जो अणु हैं, परमाणु हैं, वे नहीं मिट सकते। अगर वे भी मिट सक ते हैं, तो वह जोड़ है। जो भी मिट सकता है, वह जोड़ है। और नीचे जाना पड़ेगा। इलेक्ट्रोक्स नहीं मिट सकते, इनर्जी नहीं मिट सकती, सत्य नहीं मिट सकता। वही सत्य है जो मिट नहीं सकता है। वही सत्य है, जो सदा था आर सदा रहेगा।

हमें अपने भीतर उसे खोज लेना है, जो नहीं मिट सकता है। लेकिन उसे हम तभी खोज पाएंगे, जब उसे, जो मिट सकता है, पहचान लें। अगर हमने जो मिट सकता है, उसी के साथ आइडेंटिटी कर ली है, और समझ लिया है कि यहां मैं हूं, तो फिर बड़ी कठिनाई है। तब सत्य का हमें कभी पता नहीं चल सकता।

मृत्यु से हम डरते क्यों हैं? हम डरते हैं; क्योंकि जिसे हमने मैं समझ लिया है, वह तो मरेगा ही। उसे तो कोई भी नहीं बचा सकता उसका मिटना निश्चित है। जिसे ह मने मैं समझा है, उसकी मृत्यु होगी ही। इसलिए हम डरे हुए हैं, और उसे हम जा नते नहीं, तो मरेगा नहीं। इसलिए हम अभय नहीं हैं। समाधि अभय में ले जाती है। उसके दर्शन करा देती है, जो मरेगा नहीं, जो मिटेगा नहीं।

लेकिन ध्यान रहे, मैं कभी साक्षी नहीं हो सकता है। और मैं कभी परमात्मा से नहीं मिल सकता है। इसलिए परमात्मा से मिलने की जिद मत करना, यह मत सोचना कि मैं क, ख, ग, नाम का आदमी परमात्मा से मिल जाऊंगा। मेरा मिलन कभी भ ी नहीं हो सकेगा। क्योंकि जब तक मैं हूं, तक तक परमात्मा न मिल सकेगा। जब मैं न रह जाऊंगा तब वह मिलेगा!

अब तक किसी का परमात्मा से मिलन नहीं हुआ है। क्योंकि मिलने का मतलब होत ा है, दोनों मौजूद हैं। लेकिन दोनों से एक ही होती है। जब मैं होता हूं, तो वह नहीं होता और जब वह होता है, तो मैं नहीं होता हूं। मिलन हुआ ही नहीं कभी। कबी र ने कहा है, उसकी कथनी बहुत सक्रिय थी। उसने दोनों को मार दिया है, उसने ए क ही को नहीं मारा है। जब मैं हूं, तब वह नहीं! जब वह होता है, तब मैं नहीं हो ता।

साक्षी बन सकता हूं। मैं को मुझे खोना पड़ेगा। इसलिए मैंने कहा है कि मिट रहा हूं। इस भाव को अगर बहुत गहरा करें, तो जो शेष रह जाएगा, वही परमात्मा है।

एक मित्र ने पूछा कि मिट रहा हूं, ऐसा भाव करने से कैसे मिटूंगा?

इसलिए मिट जाएगा, मैं हूं, यह भाव का ही परिणाम है। यह कोई सत्य नहीं अग र मैं बैठ कर यह भाव करूं कि मकान मिट रहा है, तो मकान मिटेगा नहीं। मकान मेरे भाव पर निर्भर नहीं है। मैं कितने ही भाव करूं कि मकान मिट रहा है, लेकि न आंख खोलने पर पाऊंगा, लेकिन अगर मैं यह भाव करूं कि मैं मिट रहा हूं, तो मैं मिट जाऊंगा? क्योंकि मेरा होना, मेरा ही भाव है। मैं दूसरे भाव से मिट सकता हूं, विपरीत भाव से मिट सकता हूं।

आपको पता होना चाहिए, कुछ बीमारियां ऐसी हैं जो इलाज से कभी ठीक नहीं हो ती। वे इसलिए ठीक नहीं होती कि पहली बात यह कि वह बीमारी होती ही नहीं।

भले ही इलाज सच्चा हो, वैसा आदमी और बीमार हो जाएगा। अगर झूठी बीमारी का सच्चा इलाज होगा तो मुश्किल पड़ जाएगी। अगर एक आदमी को सांप ने काटा हो, तो उसे सांप के काटने का इंजेक्शन दिया जाना चाहिए, उससे उसे लाभ होगा। लेकिन आदमी को सांप ने काटा ही नहीं और उसे चूहे ने या अपने में सांप ने काटा हो, तो इंजेक्शन देना खतरनाक पड़ जाएगा। सांप के काटने से जितना खतरा नहीं, उतना इंजेक्शन से बीमार पड़ जाने का है। झूठी बीमारी के लिए झूठा इलाज चाहिए।

मैंने सुना है—एक सराय में एक रात कुछ मेहमान ठहरे हुए थे। एक आदमी सुबह चार बजे अपनी यात्रा पर आगे निकल गया। वहां कोई जगह के लोग ठहरे हुए। रात उन्होंने साथ भोजन किया था। उसका किसी ने खयाल नहीं किया था। साल भर बाद वह आदमी सराय में वापिस लौटा। उस सराय के मालिक ने उसे देखा और पूछा, आप जिंदा हैं? उस आदमी ने पूछा, क्या मतलब? जिंदा क्यों नहीं होऊंगा? उस मालिक ने कहा, अरे! उस रात जितने आदमियों ने भोजन किया था, वे सब मगर गए। भोजन में जहर हो गया था। आप जिंदा हैं। यह आश्चर्य है! उस आदमी ने इतना सुना और वहीं गिर पड़ा। बहुत हिलाया गया, लेकिन वह तो मर चुका था। साल भर पहले किया था भोजन, फिर प्वाइजन हो गया। वह साल भर बाद मरा।

मर सकता है। लेकिन ऐसी बीमारी का इलाज नहीं हो सकता! अगर भोजन हो गया हो तो इलाज हो सकता है। परंतु अब इस आदमी का कैसे इलाज करेंगे? उसका इलाज करना बहुत मुश्किल है। उसकी बीमारी झूठी है। झूठी बीमारी का झूठा इलाज करना पड़ेगा।

मैं जिस समाधि का प्रयोग कर रहा हूं, वह झूठा इलाज है। सच्चा इलाज नहीं है वह, क्योंकि बीमारी झूठी है। उसे मिटाने के लिए उसी तरह का इलाज करना पड़ेगा। मेरे पैर में असली कांटा गड़ जाए, तो दूसरे असली कांटा लेकर उसे निकालना पड़ेगा। लेकिन असली कांटा न गड़े, सिर्फ मुझे यह खयाल हो जाए कि पैर में कांटा गड़ा है, तब असली कांटा लाकर मत निकालना, अन्यथा व्यर्थ का घाव हो जाएगा।

कांटा न गड़ा हो, तो फिर झूठे कांटे की जरूरत पड़ती है। धर्म की सारी प्रक्रियाएं झूठी प्रक्रियाएं हैं, क्योंकि अधर्म की बीमारी झूठी है। समस्त योग झूठी प्रक्रिया है। समस्त साधना झूठी प्रक्रिया है। इसलिए झूठी प्रक्रिया है कि जिस मिटना है वह बीमारी ही झूठी है। वास्तव में आदमी बीमार नहीं है। अगर कोई असली मैं होता है तो उसे असली तलवार से काटना पड़ता है।

रामकृष्ण के जीवन के अंतिम दिनों में एक महत्वपूर्ण घटना घटी। रामकृष्ण जीवन भर तो काली की पूजा में लगे रहे। आखिरी क्षणों में उन्हें ऐसा लगने लगा कि क्या बस यही है सब कुछ? एक संन्यासी तोतापुरी ठहरा हुआ था! उसने कहा, कब तक काली, बजरंग बोलते रहोगे? यह सब कल्पनाएं हैं। रामकृष्ण ने कहा, मैं क्या करूं? कल्पना से ऊपर कैसे उठूं? संन्यासी ने कहा, आंख बंद करो, और काली से छुटकारा पाओ। रामकृष्ण आंख बंद करते तो काली की मूर्ति खड़ी हो जाती। जीवन भी

उसी को साधा। मैं जीते जी उसे कैसे हटाऊंगा, नहीं हटती है। तो संन्यासी ने कहा कि तुम तलवार उठा कर दो टुकड़े कर दो रामकृष्ण ने कहा कि तलवार कहां है? उसने कहा कि जब कल्पना से काली खड़ी की है, तो कल्पना से ही तलवार उठा कर देखा। काली को कहां से लाए? वह भी तो कल्पना से ही खड़ी की है। रामकृष्ण भीतर जाते थे, पर हिम्मत नहीं जुटा पाते थे तलवार उठाने की। काली पर तलवार कैसे उठाऊं? इतने दिन साधा, संवारा।

भक्त भगवान के प्रति बहुत कम जो रह जाता है। कल्पित भगवान के प्रति तो और भी कमजोर हो जाता है, क्योंकि उसने उसे खुद ही तो बनाया है। उसे मिटाए कैसे ? तलवार पकड़ते हैं, तो छूट जाती है बार-बार कहते हैं कि नहीं होता। तो तोतापुरी ने कहा कि बस आखिरी बार प्रयास कर लो।फिर मैं चला जाऊंगा। इस बच्चे के खेल में मुझे न फंसाओ। तोतापुरी कांच का एक टुकड़ा लेकर बैठ गया और उसने कहा, आंख बंद करो, अंदर आओ मैं तुम्हारे माथे को कांच से कटूंगा और जब खून की धारा बहने लगे, कांच से मस्तिष्क कटने लगे, तो हिम्मत करके तलवार उठा कर चला ही देना। रामकृष्ण ने हिम्मत की। अब तोतापुरी ने माथा काटा, तो उन्होंने भी भीतर काली को काट दिया। काली दो टुकड़े होकर गिर गयी। झूठी तलवार थी, झूठी काली थी। रामकृष्ण खाली हो गए। बाद में उन्होंने कहा, यह भी गिर गयी—दी लास्ट बेरिअर हैज फालन।

जिसे हम मैं कहते हैं, वह भी झूठी है। उस मैं को गिराने के लिए झूठे उपाय करने पड़ते हैं। मगर यदि यही समझ जाए कि झूठा है, तो उपाय करने की भी जरूरत नहीं रह जाती। लेकिन नहीं समझ पाते हैं। तो फिर उपाय करने पड़ते हैं, इसलिए जो समझता है, उसके लिए न ध्यान है, न समाधि है, न योग है। जो समझता है, उसके लिए जगत में कुछ भी नहीं है। उसे कुछ करने को नहीं है।

बड़ी मुश्किल आ गयी। समझ ही नहीं पाते। नहीं समझ पाते हैं, तो कुछ इलाज करना पड़ता है। और झूठे इलाज से झूठी बीमारी को तोड़ देना पड़ता है। जब दोनों बीमारियां बिदा हो जाती हैं, तो खाली जगह रह जाती है, वही सत्य है।

एक मित्र ने कहा कि रात जिसे आप समाधि कह रहे थे हिप्नाटिज्म या सम्मोहन जैसी मालूम पड़ रही थी। मालूम नहीं हो रही, वह है ही! मैं एक सम्मोहन है। जिसे हम कहते हैं, एक सम्मोहन है, जिसे हमने ही पैदा किया है। इस मैं को तोड़ने के लिए विपरीत सम्मोहक सुझाव देने पड़ेंगे। विपरीत सम्मोहक सुझाव देकर इसे तोड़ देना पड़ेगा। मैं हमारा एक सम्मोहन है, इससे ज्यादा नहीं। यह हमारा एक भ्रम है कि मैं हूं।

जो है, वह तो विराट है। जो है, उसकी तो कोई सीमा नहीं है। जो है, वह तो अनंत है। जो है, वह मुझसे पहले और उसके बाद भी है। लेकिन में हूं, यह हमारा सिर्फ एक सम्मोहन है। यह हमारी बचपन से पकड़ी हुई जिंदगी की एक आदत है जो काम चलाऊ है।

अगर आपने कभी कोई सम्मोहन का प्रयोग देखा है, तो आप बहुत हैरान हो जाएंगे। सम्मोहन में हम जो मान लेते हैं, वही सत्य हो जाता है। जो हम स्वीकार कर लेते हैं, मन उसी के लिए राजी हो जाता है। सम्मोहन हमारे चित्त में उन शक्तियों को पैदा कर देता है, जो हमारी नहीं हैं।

हम सब भी ऐसे जीते हैं। अगर एक स्त्री या एक पुरुष आपको बहुत प्रतिकर लगने लगे, तो आप शायद सोचें कि सच में वहां सौंदर्य है। सब सौंदर्य आपके द्वारा आरोपित और सम्मोहितपूर्ण होता है। इसलिए हर मुल्क में जैसी सौंदर्य की आदतें हैं, वैसा ही सुंदर लगने लगता है।

अफ्रीका में कोई कौम ऐसी है जिसमें स्त्रियों के बाल घोट कर संन्यासियों जैसे कर देते हैं, और उन्हें चमकदार बनाते हैं। जिस स्त्री की खोपड़ी जितनी चमकदार निकल आए, वह उतनी सुंदर मानी जाती है। आप उस स्त्री को देखकर भागेंगे और पीछे नहीं लौटेंगे। लेकिन वहां कोई उस स्त्री के लिए दीवाना भी हो सकता है।

हम तो अपने मुल्क में संन्यासियों के सिर घुटवाते हैं। इसलिए घुटवाते हैं, ताकि कोई उन पर मोहित हो। हम संन्यासियों को कुरूप बनाने की कोशिश करते हैं, ताकि उन पर सम्मोहित न हो जाए। किसी भांति कोई उसके प्रति आकर्षित न हो जाए। सब तरह की अग्लीनेस--कुरूपता पैदा करने की कोशिश करते हैं, ताकि संन्यासिनी कुरूप हो, ताकि आप आकर्षित न हों। पर हमारे यहां ही संन्यासिनियां अफ्रीका जाए, तो उनके बड़े प्रेमी मिल सकते हैं।

कोई कौम मानती है कि ओंठ जितने पतले हों उतने ही सुंदर होंगे। और कोई कौम मानती है कि ओंठ जितने मोटे हों उतने ही सुंदर होते हैं। ओंठों को चौड़ा करने के लिए ओंठों में पत्थर बांध लेते हैं। पत्थर लटका लेते हैं, बचपन से ताकि ओंठ चौड़े हो जाए। जब ओंठ इतने चौड़े हो जाते हैं कि चेहरे पर सिर्फ ओंठ ही दिखायी पड़ते हैं तो स्त्री परम सुंदर हो जाती है। उसे प्रेमी मिल जाता है।

कोई कौम मानती है कि जिसे हम सौंदर्य कहते हैं, वह वही है, या हमारा सम्मोहन है? या हमने आदत बना रखी है? अभी आपको पता है, आज से पचास साल पहले केक्टस सुंदर नहीं था! और कोई घर में रख लेता, पौधा लगा लेता, तो हम उसे पागल कहने लगते। कहते कि इसका दिमाग खराब हो गया है। अब केक्टस बड़ा बुद्धिजन हो गया है, बड़ा कुशाग्र हो गया है। अब केक्टस ग्रामीण नहीं रह गया है। अब किसी आदमी के घर में केक्टस नहीं है तो वह अनकल्चर्ड है सिविलाइज्ड नहीं है। अब जो शिक्षित आदमी है, उसके घर में कांटों वाला पौधा जरूरी है। पचास साल पहले गुलाब सुंदर था, अब केक्टस ने गुलाब की जगह ले ली है। उसने गुलाब से कहा, उत्तरों सिंहासन से, बहुत दिन तुम रह लिए, अब हम ऊपर आ गए। केक्टस ने बहुत दिन गरीबी का जीवन जी लिया। जगह खाली करने के लिए गुलाब हट गया है। अब केक्टस बैठा है। केक्टस बड़ा सुंदर मालूम पड़ रहा है जो कभी सुंदर न मालूम पड़ा। केक्टस कभी सुंदर था? कभी सुंदर न था। कोई आश्चर्य नहीं है। आदत और नया सम्मोहन! ऊब गए हम गुलाब के फूल से। चिकनापन ऊब देता है, तो खु

रदरेपन की इच्छा शुरू हो जाती है। अब खुरदरेपन अच्छा लगता है। अब चीजों से आदमी ऊब जाताहै। फिर नए सम्मोहन पैदा करता चला जाताहै। जिसे हम सौंदर्य कहते हैं, वह हमारा सम्मोहन मात्र है।
चीन में चिपटी नाक सुंदर होती है। गालों की हड्डियां उठी हुई हो तो सुंदर लगती हैं। हमारे यहां गोल की हड्डियां ऊपर उठी हुई हो, तो फिर सुंदर होना बहुत मुश्किल हो जाएगा। सुंदर क्या है? हमारा थोपा हुआ भाव। इसलिए पृथ्वी पर हजारों तरह के सौंदर्य हैं। ऐसा कोई आदमी नहीं, जिसे किसी कोने में सुंदर न माना जा सके। ऐसा भी कोई आदमी नहीं, जो दूसरे कोने में असुंदर न हो जाए। हमारी आदतें हैं, धारणाएं हैं। सुंदर हमें दिखाई पड़ने लगता है। क्योंकि हमने देखना शुरू कर दिया है। हम जिसमें सौंदर्य देखने लगते हैं, वही सुंदर लगने लगता है।
एक मित्र सोवियत संघ गए थे। उनके हाथ बड़े कोमल थे। कभी कोई काम नहीं किया। स्त्रियों जैसे हाथ। हाथ, हाथ में ले लें और आंख बंद कर लें, तो ऐसा लगे कि यह स्त्री का हाथ है। पुरुष का नहीं। जो आदमी उनका स्वागत करने आया था एयर पोर्ट पर, उसने हाथ मिलाते ही हाथ पीछे कर लिया। कुछ हैरान हुए। उन्होंने पूछा, क्या हुआ? उसने कहा, आप जरा हाथ के प्रति सावधान रहना। रूस में हम ऐसे हाथ को शोषक का, खून पीने वाले का हाथ समझते हैं। आपके हाथ में मजदूरी के घट्टे नहीं हैं। आपका हाथ ज्यों ही छुआ, खींच लिया। आप अच्छे आदमी नहीं है। भारत में जो भी उनका हाथ छूता, कहता धन्य है आप! इतने सुंदर हाथ! तो वे कहने लगे कि मैं अपने हाथ जेब में डाल कर रखने लगा। जिस आदमी से भी उसने हाथ मिलाया, उसने अपना हाथ ऐसे खींचा जैसे किसी गल आदमी का हाथ छू लिया है। रूस में सम्मान बदल गया है। अब वे कहते हैं कि हाथ में घट्टे होने चाहिए। मजदूरी की छाप होनी चाहिए। मजदूरी की छाप नहीं, तो वह अच्छा आदमी नहीं।
अगर महावीर या बुद्ध चले जाए रूस में, तो बड़ी मुश्किल में पड़ जाएंगे। उनके हाथ पर मजदूरी के घट्टे की छाप नहीं है। और हम? हम कहते हैं चरण कमल आपके पैर कमल की भांति हैं, रूस में कहेंगे पैर आपके हत्यारे के हैं। हाथ आपके दुष्ट के हैं। ये हाथ न चलेंगे रूस में! क्यों? क्योंकि सम्मोहन बदल गया है। नया सम्मोहन पैदा कर लिया गया है। अब वे उसके अंदर जी रहे हैं। सौंदर्य हमारा सम्मोहन है। कुरूपता भी सम्मोहन है। हमारी जिंदगी में बहुत से सम्मोहन हैं, जो हमारे खयाल में नहीं आते। और जब हमारे खयाल में नहीं आते, तो हम उनमें ही जिए चले जाते हैं।
अगर एक आदमी अपने सिर के बाल उखाड़ने लगे, तो आप उसे पागलखाने में भेज देंगे। अगर वह जैन मुनि हो जाए, तो आप उसके पैर छुएंगे! ये सिर के बाल उखाड़ता आदमी, जैन मुनि न हो, तो पागलखाने जाएगा और अगर जैन मुनि है, तो चलेगा, क्यों? क्योंकि जैन मुनि के आसपास जो लोग हैं, वे बाल उखाड़ने की प्रक्रिया से हजारों साल से सम्मोहित हैं। वे यही कहते हैं कि यह तपस्वी का लक्षण है। अगर आप स्नान न करें, तो आपकी पत्नी आपको घर के बाहर कर देगी। लेकिन जैन मु

नि हो जाए और स्नान न करें तो आपकी पत्नी आपके पैर छुएगी कि आप पर तपस्वी हैं। क्योंकि स्नान न करने से जैन सम्मोहित हो गया है। वह कहता है, स्नान करना भोगियों की बात है। आदमी की स्नान करने की क्या जरूरत है? उसे शरीर सजाने की क्या जरूरत है? हम जिस चीज से सम्मोहित हो जाते हैं, वह हमारे मन को पकड़ लेती है।

अब तो दो ही रास्ते हैं, या तो हम समझ लें और पूर्ण सम्मोहन से मुक्त हो जाए। समग्र दृष्टि आ सकती है, अगर कोई व्यक्ति अपन जीवन व्यवहार में, उठते बैठने में, चलने फिर ने में, इस बात की खोज कर ले कि मैं सम्मोहित होकर जी रहा हूं। सम्मोहन छूटना शुरू हो जाएगा। लेकिन अगर हम न समझ पाए, तो एक-एक सम्मोहन के लिए विपरीत सम्मोहन की आवश्यकता पड़ जाएगी।

जो लोग प्रज्ञा को उपलब्ध हो सकते हैं, अंडर स्टैंडिंग को, उनके लिए कभी किसी ध्यान और और समाधि की जरूरत नहीं है। जो लोग नहीं हो सकते, कहते हैं कि कांटा तो हममें गड़ा ही है, हम कैसे मान लें कि नहीं गड़ा है? अब उनके लिए एक और नकली कांटा भी ईजाद करना पड़ेगे, जो पुराने कांटे को निकालेगा। तो जिसे मैंने रात कहा है, वह सम्मोहन ही है। आपके पूर्व सम्मोहन को नष्ट करने के लिए, इनको ग्रहण करने के लिए, इनके लिए विपरीत सम्मोहन की स्थिति पैदा करने की जरूरत है।

लेकिन आपको लगता है कि कोई जरूरत नहीं है। विपरीत सम्मोहन की। मैं समझ सकता हूं कि ये सम्मोहन हैं और समझपूर्वक मुक्त हो जाऊंगा। इससे शुभ कुछ भी नहीं है। अगर आप समझपूर्वक मुक्त हो सकें, तो इसमें शुभ कुछ नहीं है।

मैंने सुना है—एक आदमी दो वर्ष से पैरलाइज्ड था, उसे लकवा लग गया था। वह हिल डुल नहीं सकता था। उठ नहीं सकता था। चिकित्सक हार गए थे, चिकित्सा करते-करते। ठीक हो जाता, अगर सच में लकवा लगा होता। चिकित्सक मुश्किल में थे। ठीक कैसे हो? बीमारी थी यह बात नहीं—वह आदमी कैसे माने? जिसका हाथ न हिलता हो, पैर न हिलता हो, वह आदमी कैसे माने कि बीमारी झूठी है? फिर एक दिन आधी रात में मकान में आग लग गयी। घर के लोग बाहर हो गए और वह जो लकवे से बीमार आदमी था, वह भी दौड़ कर बाहर पहुंच गया।

वह दो साल से नहीं हुआ था। जब वह बाहर आ गया, तो घर के लोगों ने कहा—अरे आप भी आ गए!

वह आदमी वहीं गिर गया। उसने कहा, मैं चल सकता हूं? यह कैसे हुआ, कुछ समझ में नहीं आता! वह लकवे से पीड़ित था। अगर यह आदमी भी समझ सके, तो लकवे से बाहर हो जाए। क्योंकि उसके मकान में झूठी आग लगानी पड़ी ताकि वह बाहर निकल आए। अगर यह कहें कि हमें लकवा है,तो फिर एक आग का इंतजाम करना पड़े, जिससे वह दौड़कर बाहर आ जाए। अगर यह समझ जाए, तो बात खत्म हो गयी। फिर इसके मकान में आग लगाने की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी।

समझ लें, लेकिन बहुत कठिन है, समझना। कठिन इसलिए है कि हम अपनी बीमारि यों को प्रेम करने लगते हैं। शारीरिक बीमारियां से तो हम छुटकारा पाना चाहते हैं, मर मानसिक बीमारियों को हम जो से पकड़ लेते हैं। क्योंकि मानसिक बीमारी पर ही हमारा होना निर्भर है, जो कि सबसे बड़ी बीमारी है, मैं की ईगो की। वह ही छूट जाए, तो हम कहां होंगे?

तो आदमी डरता है। वह अपने मोह को सुरक्षित पकड़े रहता है। अगर उसके पैर में आपके पैर का, भीड़ में धक्का लग जाए तो वह कहेगा कि जानते नहीं हैं कि मैं कौन हूं? खुद उसे भी पता नहीं है कि वह कौन है? दूसरे से कहता है, जानते नह ीं मैं कौन हूं?

वह मैं को बचा रहा है, भ्रम कमा रहा है। गरीब भी दिखाना चाहता है अपनी मैं को, लेकिन दिखाने के लायक साधन नहीं हैं उसके पास! यही गरीब को तकलीफ है । अमीर साधना खोज लेता है, उसे मैं के लिए सहारा मिल जाता है। वह कहता है कि यह रहा मेरा मैं। और ये रहे मेरे साधन! एक बड़ा मकान बनाता है। बड़ा म कान रहने के लिए जरूरी नहीं है। लेकिन बड़ा मकान, बड़े मैं को प्रकट करने के ि लए बहुत जरूरी है। राह तो शायद छोटे मकान में भी जा सके और शायद बड़े मक ान से ज्यादा सुविधा से रहा जा सके। लेकिन?

मैं अभी एक घर में मेहमान था। उस घर में ज्यादा नहीं तो कम से कम सौ कमरे होंगे, पति पत्नी अकेले हैं। सारा मकान खाली है। पंद्रह बीस नौकर रखने पड़ते हैं, जो सारे मकान को साफ करते रहें। मैंने उनसे पूछा, इतना बड़ा मकान क्यों? इतने नौकर चाकर सिर्फ मकान साफ करने के लिए? यह ठीक नहीं है! आपके रहने के लिए यह जरूरत से ज्यादा है।

वे हंसने लगे। उनकी मुस्कुराहट में उनके अहंकार ने बड़ा विस्तार पा लिया। उनकी हंसी ने कहा कि हम कोई साधारण आदमी नहीं हैं, कि एक कमरे में रह लें। बड़े आदमी को कई कमरों में रहना पड़ता है। हम कोई साधारण आदमी नहीं, जो कि एक बिस्तर पर सो जाए। हमको कई बिस्तरों पर सोना पड़ता है। हम कोई साधारण नहीं, जो एक ही कपड़ा पहन कर बाजार में निकल जाए। बड़े आदमी को कई कप. डे एक साथ पहनने पड़ते हैं। उनकी मुस्कुराहट फैल गयी। उनकी मुस्कुराहट ने कुछ कहा नहीं, लेकिन कहा कि हम एफोर्ड कर सकते हैं। हम सौ कमरे भी रख सकते हैं।

यह मैं इस की बीमारी को हम सब तरफ से पोसते हैं। इसलिए छोटी कुर्सी दुख देने लगती है; क्योंकि बड़ी कुर्सी वाले का मैं बड़ा होता है। छोटी कुर्सी वाले को जरा ि सकुड़ कर मैं प्रकट करना पड़ता है। हां, अपने से छोटी कुर्सी वाले के सामने वह ज रा फैल सकता है। ऊपर की कुर्सी वाला आता है, तो पूछ हिलाने लगते हैं। फिर ऐ सा लगता है कि वह कुर्सी मिल जाए, तो किसी के सामने पूछ न हिलानी पड़े और सारे लोग मेरे सामने पूंछ हिलाने लगे।

इसीलिए दौड़ चलने लगती है। कैसे राष्ट्रपति हो जाऊं, कैसे प्रधानमंत्री बन जाऊं। फिर यदि हो जाए, तो जब तक मर न जाए, तुम जगह को नहीं छोड़ता। जगह छोड दे तो मुश्किल में पड़ भी जाता है, फिर नीचे उतर आता है। फिर मैं को सिकोड़ना पड़ता और मुश्किल हो जाता है। मैं अगर फैल जाए तो सिकोड़ना बहुत ही कष्टपूर्ण हो जाता है। फिर बहुत ही मुसीबत हो जाती है, उसे उसी जगह लाना। इसलिए एक मिनिस्टर नीचे उतर जाए मिनिस्टरी से, तो बड़ी मुश्किल खड़ी हो जाती है। तकलीफ मिनिस्टरी खो देने की वजह से नहीं होती। तकलीफ इस बात की हो जाती है कि मिनिस्टर का अहंकार फैल गया होता है, जैसे सिकुड़ जाना पड़ता है।

मैं एक गांव में मेहमान था और एक प्रदेश से गुजर रहा था। उस प्रदेश के मुख्यमंत्री साथ थे। अब तो नहीं रहे वे अब तो भूतपूर्व हो गए हैं। रास्ते में उनकी कार बिगड गयी। रास्ता सुनसान था, बहुत कम गाड़ियां के गुजरने की उम्मीद थी। वहां से केवल एक नान स्टाप बस गुजरती था। उन्होंने कहा, कोई चिंता की बात नहीं है। वह रुकती तो नहीं है, पर उसे रुकवा लेंगे। भूतपूर्व मुख्यमंत्री थे, सोचा रुकवा लेंगे। तो उस मौके पर, जहां पुलिस का आदमी सोता था, जाकर उसे उन्होंने जगाया और उससे कहा, जो बस यहां से गुजरती है उसे रुकवाना है। वह यहां रुकती तो नहीं है। परंतु हमारी गाड़ी बिगड़ गयी है।

तो उस पुलिस ने कहा, महाराज--(वे ब्राह्मण हैं और जब भी मुख्यमंत्री बनने के लिए ब्राह्मण होना बड़ा जरूरी है)--महाराज, बड़ी मुश्किल है, वह न रुकेगी। उन्होंने कहा, क्या कहते हो? न रुकेगी? जानते नहीं कि मैं कौन हूं?

उसने कहा, मैं जानता हूं, आपको न जानूं? परंतु आप भूतपूर्व हैं। उस कांस्टेबिल ने कहा कि आप भूतपूर्व हैं! बस न रुकेगी।

मुख्यमंत्री ने एक तरफ तो उस कांस्टेबिल की ओर देखा, दूसरे मेरी ओर देखा। उनके अहंकार को ऐसी पीड़ा हुई, इतनी जोर से हुई, जैसी कभी न हुई होगी! एकदम सिकुड़ गए। जब उसने कहा--भूतपूर्व हैं, बस नहीं रुकेगी।

अब एक कांस्टेबिल ने एक मुख्यमंत्री की पूंछ हिलावा दी। कांस्टेबिल को भी तो कभी-कभी मौका मिलना चाहिए! कई बार वे उसके आसपास घूमें होंगे; परंतु अब ऐसा लगने लगा कि यदि पुराना जमाना होता तो कह देते धरती माता से मुख्यमंत्री, और उसमें समा जाते। मैंने कहा, पृथ्वी माता से कुछ मत कहिए। उसको भी मौका मिला है, आपको भी मिल चुका है। उसको भी मौका मिलना चाहिए। सबको मिलना चाहिए।

हमारा जो अहंकार है, वह ऐसा रोग है कि जिस हम प्रेम करते हैं उसे छोड़ें कैसे? उसे हम बचाते फिरते हैं। पर यदि कोई उसे तोड़ने वाला है तो हम से दुश्मन समझते हैं। हम उसे कैसे तोड़ेंगे? हमारे मानसिक बीमारियां हमारे लिए बहुत प्रीतिकर होती है। हमने उन्हें पाला है, पोसा है, पानी से सींचा है, खादी दी है, बड़ा किया है किसी तरह। हम उन्हें कैसे छुड़ाएंगे?

या तो वह यह समझ ले कि अहंकार की यह सारी यात्रा एक आत्मसम्मोहन है। मैं व्यर्थ ही उसे ऊपर थोपे चला जा रहा हूं। यदि यह समझ में न आ सके, तो मैं मान ता हूं कि हमें उससे उल्टा प्रयोग शुरू कर देना चाहिए। हमें मैं को मिटाने का भाव करना चाहिए। शायद जैसे हमने मैं को बनाया है, वैसे ही मिटा भी सकें। अगर भाव से बना है तो विपरीत भाव से मिट जाएगा और तब खाली जगह रह जाएगी।
मैं सम्मोहन के पक्ष में भी हूं और विपक्ष में भी। विपक्ष में इसलिए कि यदि सम्मोहन भ्रम में लग जाता है तो, और यदि सम्मोहन पुराने भ्रम को छोड़ता हो और रिक्त ता में ले आता है तो पक्ष में हूं। पाजिटिव सम्मोहन के विरोध में हूं और नेगेटिव स म्मोहन के पक्ष में हूं। यह भी सम्मोहन है कि मैं कुछ भी नहीं हूं। लेकिन मैं हूं, इस सम्मोहन के विपक्ष में हूं, क्योंकि यह सत्य से सदा दूर ले जाएगा। मैं नहीं हूं, इस सम्मोहन के पक्ष में हूं; क्योंकि यह सत्य के निरंतर पास ले जाएगा।
तब ध्यान रहे—रास्ता तो वही होता है दूर जाने के लिए भी पास आने के लिए भी। सिर्फ रुख बदल लेना पड़ता है। अगर मुझे आपके पास आना है, तो चेहरा आपके सामने करके आना पड़ता है। और यदि आपसे दूर जाना है तो आपकी तरफ पीठ क रके जाना पड़ता है। रास्ता वही होता है। अभी आप जिस रास्ते से घर से यहां तक आए हैं, यही रास्ता वापस लौटने का भी है। लेकिन आप अपने मन में कभी यह न सोचिए कि यह रास्ता तो घर से दूर ले जाने वाला है, घर कैसे ले जाएगा? यही है वह रास्ता, जो घर के पास आएगा। फर्क यह पड़ेगा कि जब दूर आए थे, तब घ र की तरफ पीठ करनी पड़ती थी और जब पास आएंगे, जब घर की तरफ मुंह कर ना पड़ोगे। सम्मोहन दूर ले जा रहा है हमें, पीठ कर लें अपनी तरफ, तो सम्मोहन पास ले आएगा। मैं ऐसे सम्मोहन के विरोध में हूं, जो किसी कल्पना को मजबूत कर ने के लिए किया जाता है। और ऐसे सम्मोहन के बिलकुल पक्ष में हूं, जो ऐसी कल्प नाओं को विसर्जित करने के लिए किया जाता है। मैं इस सम्मोहन के विरोध में हूं, कि आप सोचने लगें कि मैं ब्रह्म हूं, ब्रह्म हूं। लेकिन मैं इसके पक्ष में हूं कि मैं नहीं हूं—नहीं हूं। क्या फर्क है इसमें? ब्रह्म होने में आप एक पाजिटिव्य सम्मोहन कर रहे हैं, जिसका आपको पता नहीं है। आपको पता हनीं है कि आप बहुत हैं, आप थोप रहे हैं अपने ऊपर कि आप ब्रह्म हैं। हो कसता है आप सम्मोहित हो जाए और ऐसा लगने लगे कि आप ब्रह्म हैं। वह भ्रम होगा, सत्य न होगा। ब्रह्म होने के लिए आप को अपने को सम्मोहित करने की कोई जरूरत नहीं है; क्योंकि आप ब्रह्म हैं ही।
जब सारा सम्मोहन टूट जाएगा, तब आपको पता चल जाएगा कि मैं ब्रह्म ही हूं। लेकिन आपने एक दूसरा सम्मोहन पैदा कर रखा है कि मैं यह हूं, मैं इसका पिता हूं, इसका बेटा हूं, इसका पति हूं इत्यादि-इत्यादि। इस पथ पर हूं, यह मेरा धर्म है, य ह मेरी प्रतिष्ठा है। ये सारी उपाधियां आपने अर्जित कर ली हैं कल्पना में।
मैं इस सम्मोहन के पक्ष में हूं कि आप कहें कि मेरा कोई नाम नहीं है, न मैं किसी का बेटा हूं, न बाप हूं, न पति हूं, मैं कोई भी नहीं हूं, कोई भी नहीं हूं और एक ऐ सी घड़ी आ जाए कि आप कुछ भी न रह जाए। आप रिक्त हो जाए। जिस क्षण ऐ

सी घड़ी आएगी, आप रिक्त हो जाएंगे। भीतर एक विस्फोट होगा और आपको पता चलेगा कि मैं ब्रह्म हूं। यह आपको सोचना न पड़ेगा। यह आपको सोचना न पड़ेगा। यह तो बस हो जाएगा। अपने से ही हो जाएगा। यह विस्फोट होगा।

सब, सब जगह खाली कर दें। आप मंदिर से सब मूर्तियां हटा दें तो जो मूर्ति शेष रह जाएगी, वह परमात्मा ही होगी। आपके हटाने के बाद, जब आपने मंदिर बिलकुल खाली कर दिया, या कोई मूर्ति न रखी थी वे सब मूर्तियां हटा दी; तब जो शेष रह जाएगा—वही परमात्मा है।

मित्र ने ठीक ही पूछा है, वह सम्मोहन ही है, लेकिन कहीं दूर हिप्नोटाइजेशन से। सम्मोहन, सम्मोहन तोड़ने के लिए! कांटा झूठा, झूठे कांटे को अलग कर देने के लिए और अगर आपकी समझ में आ जाए कि कांटा झूठा है, इसलिए है ही नहीं, तब तो कोई सवाल नहीं है। बात खत्म हो गयी।

लेकिन अगर बात खत्म न हो गयी हो, तो फिर कांटे को निकालना पड़ेगा। वह गड़ रहा है। झूठा ही सही, लेकिन गड़ रहा है। अच्छी तरह दुख दे रहा है। दूसरा कांटा खोजना पड़ेगा। फिर दोनों कांटे एक दूसरे को काट देंगे। ऋण और धन मिलकर शून्य हो जाएगा। कट जाने पर शून्य रह जाएगा। शून्य में स्वयं का साक्षात्कार हो सकता है।

और कुछ प्रश्न रह गए हैं। उनकी बात कल करेंगे। लेकिन जो प्रश्न, उत्तर से समझ में न आएगा, वह प्रयोग से समझ में आ जाएगा। जिन्हें सचमुच ही जानना है, सिर्फ सुनना नहीं है, जिन्हें सच में ही उतरना है, शब्द में नहीं, सत्य में ही चले जाना है।

शाम के लिए दो तीन सूचनाएं खयाल में रखनी हैं कि घर से चलते समय ही चुप होकर चलें। यहां पहुंच कर भी जहां बैठना है, चुपचाप आंख बंद कर बैठ जाए। तैयारी के साथ आए, ताकि वहां पहुंचते-पहुंचते मन बिलकुल तैयार हो जाए। उस एक घंटे में न तो किसी से बात करें, न किसी की फिकर करें, न किसी की तरफ देखें। उस एक घंटे में आप अकेले ही हों।

और उस घंटे में आपसे जितनी भी सामर्थ्य हो, पूरी सामर्थ्य लगा दें। अपने सब सम्मोहन काटने में झूठे कांटों को हटाने में लग जाए। कोई आश्चर्य नहीं, कोई वजह नहीं है कि आज ही क्यों न उदघाटन हो सके। समय कोई बाधा नहीं है और इस खयाल में भी न रहें कि पिछले जन्म के कर्म बाधा देंगे। इस खयाल में भी मत रहना कि भाग्य रोक लेगा। इस खयाल में भी मत रहना कि मैं पाप मय हूं, अधिकारी नहीं हूं।

परमात्मा को पाने के लिए प्रत्येक आदमी अधिकारी है। और परमात्मा को पाने के लिए कोई भी बाधा, किसी भी जन्म के किसी कर्म से कभी नहीं पड़ती है। ऐसा ही, जैसे भवन में हजारों सालों का अंधकार भरा हो, और सोचें कि आज दीया जलाने से कैसे मिटेगा—हजार साल दिया जलाएंगे तभी मिटेगा। नहीं, हजार साल का अंधक

ार हो कि करोड़ साल का, दीया जलाया कि मिट जाता है। अंधेरे की कोई परतें न हीं होती।

अज्ञान की कोई परत नहीं होती। ज्ञान का दीया जलाते ही समस्त अज्ञान मिट जाता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कितने जन्मों तक अज्ञान में आदमी भटका है, अंधेरे में रहा है, दीया जला और अंधेरा मिटा।

और ध्यान रहे—अंधेरा, दिए को जलने से रोक नहीं सकता। अंधेरे के पास कोई ता कत ही नहीं है, जो दिए को जलने से रोक दे। अंधेरा बिलकुल अनिर्वीय है, इम्पोटेंट है। वह कुछ कर नहीं सकता। अज्ञान भी इम्पोटेंट है, कुछ भी बाधक नहीं बन सक ता।

ऐसा न सोचें कि फिर कभी होगा। अगर ताकत लगाए, तो आज की और अभी, य ही हो सकता है। तो रात उन सबके लिए निमंत्रण है, जो उतरना चाहते हैं, थोड़ा साहस करके शून्यों में, ताकि उसे मिलन हो सके, जो हमारा असली होना है।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, इसके लिए अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

मौन का स्वर

मेरे प्रिय आत्मन,

एक मित्र ने पूछा है कि उपनिषदों में कहा गया है कि परमात्मत्व उसी को प्राप्त हो ता है, जिसके गले में वह परमात्म तत्व स्वयं ही माला डाल दे। इसका क्या अर्थ हु आ? इससे साधक की साधना निरुपयोगी नहीं हो गयी?

यह सवाल बहुत महत्वपूर्ण है। इसे समझने में थोड़ी कठिनाई भी हो सकती है। पह ली बात तो यह है कि साधक के बिना उपाय के वह नहीं मिलेगा, और दूसरी बात तत्काल यह भी कि सिर्फ साधक के उपाय से उसे नहीं पाया जा सकता। साध के प्रयत्न से भी नहीं मिलता है वह। करता है और प्रयत्न कर-कर के थक जाता है, ह ार जाता है, समाप्त हो जाता है। और यह अहंकार भी प्रयत्न करते-करते टूट जाता है कि मैं पा सकूंगा। जिस क्षण प्रश्न उस जगह पहुंचता है कि प्रयत्न भी व्यर्थ दिख ाई पड़ने लगता है, और साधक का यह अहंकार भी चला जाता है कि मैं उसे पा स कूंगा, उसी क्षण वह उपलब्ध होता है। प्रयत्न की असफलता पर उसकी प्राप्ति है।

इसलिए जब किसी को वह मिलता है, तब उसे ऐसा ही लगता है कि उसकी कृपा, उसके प्रसाद से मिला। क्योंकि मैं तो प्रयत्न कर-कर के हार गया और पा नहीं सका । लेकिन यह दूसरी बात भी गलत है। उसके प्रसाद से नहीं मिलता। क्योंकि अगर उसकी कृपा से मिलता हो, तब तो इसका यह अर्थ हुआ कि उसके द्वार पर भी कि सी के लिए कृपा है, तो किसी के लिए नहीं है। तब तो इसका अर्थ हुआ कि परमात मा भी किसी के प्रति मोह रखता है, और किसी के प्रति बड़ी विरक्ति। और किसी को दे देता है और किसी को नहीं देता।

नहीं! उस द्वार पर ऐसा भेद संभव नहीं है। उसकी कृपा से ही मिलता है। इसका अ र्थ यह नहीं है कि उसकी कृपा से ही मिलता है। उसकी कृपा तो सभी को उपलब्ध है। उसकी कृपा में किसी के प्रति कोई भेदभाव नहीं है। हो भी नहीं सकता। फिर ज ब कोई साधक यह कहता है कि उसकी कृपा से मिला, तो असल में वह यह कहता है कि जब मैं सब प्रयत्न नहीं करता था। तो साधक क्या कहे? उसे ऐसा ही प्रतीत होता है कि उसकी ही कृपा से मिला, क्योंकि उसके प्रयास से तो नहीं मिला।
मेरी बात समझे आप? साधक की कठिनाई है। उसके प्रयास से नहीं मिला। तो वह कैसे कहे कि मेरे प्रयास से मिला? लेकिन मिल तो गया। अब वह क्या कहे? वह क हता है, उसकी कृपा से मिला। लेकिन यह भी साधक की भांति है। उसकी कृपा तो सबके लिए बराबर उपलब्ध है। लेकिन उसकी कृपा के लिए हमारे ही द्वार बंद हैं। हमारे द्वार तब खुलते हैं, जब हमारा अहंकार नहीं होता है। कर्तापन का अहंकार स बसे सूक्ष्म अहंकार और साधना का अहंकार अंतिम अहंकार है। धन का अहंकार छो. ड देना बहुत आसान है, यश का अहंकार छोड़ देना भी बहुत कठिन नहीं है।
लेकिन तप का, तपश्चर्या का, त्याग का, साधना का, प्रार्थना का, धर्म का, योग का अहंकार छोड़ना सर्वाधिक कठिन है, क्योंकि अहंकार में बड़े गहरे में यह छिपी है ि क मैं पा लूंगा, और मैं ही बाधा है। इसे एक छोटी सी घटना से समझाऊं।
बुद्ध ने छह वर्ष तक तपश्चर्या की। जो भी जिसने कहा, वही उन्होंने किया। किसी ने कहा उपवास, तो उन्होंने उपवास किए लंबे। किसी ने कहा कि शीर्षासिन करो, तो शीर्षसान किए। किसी ने कहा कि नाम जपो, तो नाम जपा। जिसने जो कहा, वह करते रहे। छह वर्ष निरंतर प्रयास करके भी कहीं पहुंचे नहीं। वहीं थे, जहां से यात्रा शुरू की थी। एक बार निरंजना नदी में स्नान करने उतरे थे। देह दुर्बल हो गयी थी । लंबे उपवास किए थे। नदी में तेज धार थी। उतनी भी शक्ति न थी कि नदी से बाहर निकल आए। तो वृक्ष की एक जड़ को पकड़कर किसी तरफ रुके रहे। उस ज. ड को पकड़े-पकड़े उन्हें खयाल आया कि इतना निर्बल हो गया हूं, नदी भी पार नहीं होती, जो जीवन की बड़ी नदी को कैसे पार कर पाऊंगा? छह वर्ष व्यतीत हो गए , वह सब कर चुका जो कर सकता था। अब तो करने योग्य शक्ति भी नहीं बची है । अब क्या होगा और सबकर लिया है निष्ठापूर्वक, लेकिन उसके कोई दर्शन नहीं हु ए। धन छोड़ गए थे, यश छोड़ गए थे, राज्य छोड़ गए थे। परंतु उस दिन निरंजना नदी के उठ तट पर अंतिम अहंकार भी व्यर्थ हो गया कि अपने प्रयास से पा लूंगा।
फिर वे किसी भांति नदी से निकले और पास के एक वृक्ष के नीचे विश्राम करने ल गे। उस संध्या उन्होंने साधना भी छोड़ दी। कहना चाहिए, साधना भी छूट गयी। सब छूट गया। यह भी छूट गया कि मैं पा लूंगा। छह साल की असफलता ने बता दिया था कि यह भी नहीं हो सकता उस से! उस संध्या में बुद्ध के मन की कल्पना कर ना भी हमारे लिए बड़ा कठिन है। उस रात उनका मन कुछ भी करने की स्थिति में न रहा। धन की दौड़ नहीं थी, यश की दौड़ नहीं थी। आज सत्य की भी दौड़ न थी। क्योंकि दौड़ से पा लूंगा, यह बात ही समाप्त हो गयी थी। उस रात वे परम नि

श्चिंत थे। कोई चिंता न थी। धर्म की चिंता भी न थी। परमात्मा को पाने का खयाल न था। वे अत्यंत असहाय, हारे हुए, सर्वहारा, उस रात सो गए, वह पहली रात थी, जिस रात वे पूरी तरह सोए थे। क्योंकि मन में अब कुछ करने को न बचा था। सब व्यर्थ हो गया। करना मात्र व्यर्थ हो गया था और मर गया था। सुबह पांच बजे के करीब उनकी आंख खुली। आखिरी तारा डूब रहा। उन्होंने उस डूबते हुए आखिरी तारे को देखा। आज उनकी समझ से बाहर था कि क्या करूंगा? सुबह उठ कर क्या करूंगा? क्योंकि करना सभी समाप्त हो गया था। धन की दौड़ पहले ही छूट चुकी थी। यश की दौड़ भी पहले छूट चुकी थी। रात में धर्म की दौड़ भी छूट गयी थी।

वे एक शून्य में थे, जहां करना भी नहीं सूझ रहा था। एकदम खाली थे। अचानक उन्हें लगा कि मैं जिस खोज रहा था, वह मिल गया। वह भीतर से उभर आया है। उस शांत में जब झील की सब लहरें बह गयी थीं, आखिरी लहर जो धर्म के लिए मचलती थी, वह भी ठहर गयी थी। उस क्षण उन्होंने जाना कि जिसे मैं खोज रहा था, वह तो मिल गया। जब लोग उनसे पूछते कि कैसे आपने पाया? तो वह कहते कि जब तक कैसे का मैंने उपाय किया, तब तक तो पाया ही हनीं। जब मेरे सब उपाय खो गए, तब मैंने देखा कि जिसे मैं खोज रहा था, वह तो मेरे भीतर ही मौजूद है।

असल में जिसे हम खोज रहे हैं, वह हमारे भीतर ही मौजूद है। और हम खोज में इतने व्यस्त हैं कि जो भीतर मौजूद है उसकी कोई खबर ही नहीं। खोज भी तो खा जानी चाहिए। खोज भी मिट जानी चाहिए। खोज भी मिट जानी चाहिए, तभी उसका पता चलेगा। जो भीतर है। क्योंकि तब हम कहां जाएंगे? खोज में चित्त कहीं चला जाता है। जब कहीं भी खोजेंगे नहीं, तब अपने नट लौट आएंगे। फिर कोई रास्ता नहीं रहो। तब उस क्षण में वह मिलेगा।

उस क्षण में जब मिलेगा, तब कैसे कहें कि मैंने पा लिया? उपनिषद ठीक ही कहते हैं कि जब वही वरमाला पहना देता है, जब वही गले में माला डाल देता है, तभी मिलता है।

लेकिन उपनिषद गलत भी कहते हैं। क्योंकि वह किसी के भी गले में माला न पहनाए, ऐसी बात नहीं है। वह तो माला लिए सबके ही गलों के सामने खड़ा है। जब तक हम को दूर रखते हैं, तब तक वह भी क्या करे? जब हम गला नीचे झुका लेते हैं, तो वह माला डल जाती है। माला हम सबके गले के पास लिए, परमात्मा खड़ा है। लेकिन गला झुकना भी चाहिए। झुकेगा कैसे?

साधक नहीं झुकता। साधक बड़ा अकड़ा होता है। साधक बहुत अहंकार में जीता है, बड़ा सात्विक, बड़ा सुंदर, बड़ा पवित्र, अहंकारी होता है। साधक पवित्र अहंकारी है। हालांकि अहंकार पवित्र हो, तो भी क्या फर्क पड़ता है? अहंकार, अहंकार है।

पवित्र जहर का क्या मतलब होता है? कोई मतलब नहीं होता। पवित्र जहर का मतलब हुआ, जो और भी कंसेंट्रेड हो और भी शुभ हो! और पवित्र जहर का मतलब

कुछ अडल्टरेशन भी है उसमें। पवित्र जहर का मतलब सिर्फ जहर ही जहर है। उस में कुछ भी मिला हुआ नहीं है। पवित्र अहंकार भी शुद्ध जहर है, जिसमें कुछ मिला हुआ नहीं है। पापी के अहंकार में और भी चीजें मिलती होती हैं। पुण्यात्मा का अहं कार शुद्ध जहर होता है। उसमें कुछ मिला नहीं होता साधक हुए बिना भी कोई नह ीं पा सकता। इसलिए नहीं पा सकता साधक कि साधक हुए बिना पता कैसे चलेगा कि साधक होना व्यर्थ है?

कृष्णमूर्ति कहते हैं कि भाग्यशाली हूं मैं, कि मैंने शास्त्र नहीं पढ़े। परंतु मैं कहता हूं कि भाग्यशाली हूं मैं, क्योंकि मैंने शास्त्र पढ़े और पढ़ कर जाना कि शास्त्रों से नहीं पाया जा सकता। लेकिन जिसने शास्त्र नहीं पढ़े, उसके मन में कहीं न कहीं शक बन ा रह सकता है। शास्त्रों को पढ़ कर ही जाना जो सकता है कि नहीं मिलेगा, यही न हीं मिल सकता है। साधना करके ही जाना जा सकता है कि साधना बेकार गयी, कु छ नहीं मिला। जो सब तरफ दौड़ चुका है, सब खोज चुका है, हर कोने-कोने खोज लेता है और फिर थककर बैठ जाता है कि नहीं मिला कुछ, नहीं मिलता और आि खरी क्षण आ जाता है, वह असहाय हो जाता है, बैठ जाता है, तब हैरान होकर पा ता है कि आश्चर्य! जिस मैं दौड़ के खोजता था, वह तो बैठे-बैठे मिल गया। असल में बैठे बिना यह नहीं मिलता और खोजने वाला बैठ नहीं पाता। वह दौड़ता रहता है । बैठ जाए, तो वह पाता है कि वह मेरे पास ही था। इसलिए अगर किसी ने ऐसा कहा हो कि उसने माला डाल दी, उसकी कृपा से मिला, तो उसका कुल मतलब इ तना है कि मेरे प्रयास से नहीं मिलता।

लेकिन स्मरण रहे, उसकी कृपा सब पर बराबर है। उसकी कृपा की वर्षा सब बराब र हो रही है। लेकिन जो खाली हाथ घड़े की तरह होंगे वे भर जाएंगे जो भरे हुए हैं पहले से, वैसे ही रह जाएंगे।

ध्यान रहे, परमात्मा को दयावान और कृपालु कहना बहुत गलत है। क्योंकि दयावान हम सिर्फ उसे ही कह सकते हैं, जो कभी-कभी अदया भी दिखाता हो। कृपालु उसे कह सकते हैं, जो कभी-कभी कृपा छीन भी लेता हो, रोक भी लेता हो। नहीं, पर मात्मा कृपालु नहीं है, परमात्मा कृपा स्वरूप है। यानी अकृपा का वहां कोई उपाय न हीं है। हम कहते हैं परमात्मा सर्वशक्तिशाली है, लेकिन कुछ मामलों में वह बिलकु ल ही शक्तिशाली नहीं है। जैसे अकृपा करना चाहे, तो बिलकुल ही नपुंसक है, नहीं कर सकता। वहां बिलकुल निर्वीर्य है। वहां कुछ भी नहीं कर सकता। परमात्मा तो स्वभाव है, जो चारों तरफ खड़ा है, खड़ा भी नहीं है, सिर्फ है। हम कब गर्दन झुका देंगे, यही सवाल है।

सरमद के संबंध में मैंने सुना है। मुसलमानों की आयत है कि एक ही परमात्मा है। यह उनका खास खयाल है। और उसमें दूसरा हिस्सा है कि उसके सिवाय कोई परमा त्मा नहीं है, एक ही परमात्मा है, उसके सिवाय दूसरा कोई परमात्मा नहीं है। सरम द पहले हिस्से को छोड़ देता था और यही कहता रहता था कि दूसरा कोई परमात्म ा नहीं है, दूसरा कोई परमात्मा नहीं है। तो मुसलमान, मौलवी और पंडित दिक्कत

में पड़ गए। पंडित धार्मिक आदमी से सदा ही दिक्कत में पड़ जाता है। जो पंडित है , वे अधर्म की दुकानों के मालिक हैं। सदा कठिनाई में पड़ जाते हैं। वे बासे शब्दों के संग्राहक हैं और जब तक ताजा सत्य पैदा होता है, तब वे मुश्किल में पड़ जाते हैं। क्योंकि उनका बासा सत्य एकदम बासा दिखाई पड़ने लग जाता है। सरमद यही कहता फिरता है--नहीं है कोई परमात्मा! वह पहला हिस्सा एक ही है परमात्मा छो. ड देता है। वह पिछली बात ही कहता रहता है, नहीं है कोई परमात्मा

तो लोगों ने जाकर औरंगजेब से कहा कि यह तो बहुत अधर्म की बात हो रही है। सरमद को लाखों लोग पूजते हैं। सरमद को बुलाया गया और उससे पूछा गया कि क्या है तुम्हारा कहना?

उसने कहा, कि नहीं है कोई परमात्मा! औरंगजेब ने कहा, यह तो नास्तिक की बात हुई! सरमद ने कहा, अभी तो मैं इतना ही जाना पाया हूं, कि नहीं है कोई परमात मा। जब तक मैं जान न लूं कि है कोई परमात्मा तब तक मैं कैसे कहूं? मैंने जाना, तो मैं नहीं कहूंगा। जान लूंगा, तो कहूंगा। अगर झूठ कह दूं, तो परमात्मा बाद में मुझसे पूछेगा कि बिना जाने तूने कहा कैसे? तो मैं उसका जवाब क्या दूंगा?

औरंगजेब ने उसे सूली पर चढ़वा देने की आज्ञा दी कि यह आदमी मार डालने के योग्य है। उसकी गर्दन काटी गयी। यह कहानी बड़ी अदभुत है। अगर सच न हो तो भी अदभुत है और अर्थपूर्ण है। जिस दिन उसकी गर्दन कटी और दिल्ली की मस्जिद में जहां उसकी गर्दन कटी, और उसका सिर गिरता हुआ जब सीढ़ियों पर लोटने ल गा, तो कहते हैं कि उसके सिर से आवाज निकली कि एक ही परमात्मा, उसके सि वाय कोई परमात्मा नहीं है।

बहुत भीड़ थी। लाखों लोगों ने उससे कहा, पागल! थोड़ी देर पहले कह देता! अब गर्दन कट चुकी है। अब कहने से क्या फायदा?

तो सरमद ने कहा, गर्दन कटे बिना पता कैसे चलता? गर्दन कटी तो पता चला। ज ब मैं मिटा तो पता चला कि है, वही है, उसके सिवाय कोई नहीं है। लेकिन बिना बदन कटे पता नहीं चल सकता था।

लोग कहने लगे, बड़ा पागल है। थोड़ी देर पहले कह देता तो बच जाता! सरबद ने कहा, बच जाते तो कभी कह ही नहीं पाते। क्योंकि बच गए, तो हम बच जाते, व ह न हो पाता।

खोना पड़ेगा। अंततः इतना खो जाना पड़ेगा कि मेरा कहने जैसा भी कुछ न रह जा ए। यह भी कि--नए प्रयास कर रहा हूं, साधना कर रहा हूं, ध्यान कर रहा हूं, समा धि कर रहा हूं, योग कर रहा हूं। इसमें भी मैं मजबूत हो रहा है। यह भी कहने को न बचे।

जिस दिन मेरा सब मैं कट जाता है, लेकिन कटेगा कैसे? असफलता से कटता है। स ब तरफ हार जाने से कटता है। सब तरफ प्रयास की व्यर्थता से कटता है। साधना का एक ही मूल्य है कि अंततः पता चलता है कि इससे भी नहीं मिलता वह। और जब कुछ भी द्वार दरवाजा नहीं रह जाता, पाने का कोई मार्ग नहीं रह जाता, और

अवाक खड़ा कर रह जाता है व्यक्ति, और पाता है अब कुछ भी करने को शेष नहीं , तो तत्क्षण वह मिल जाता है।

वह मिला ही हुआ है। करने वाले चित्त को दिखायी नहीं देना, क्योंकि करने वाला ि चत्त भागता रहता है। करनेवाला चित्त ऐसा है, जैसे कि एक फोटोग्राफर हो और अ पने कैमरे को लेकर तेज, मीलों की रफ्तार से दौड़ रहा हो, और जब बाद में अपने कैमरे को खोले, तो कोई तस्वीर न बने। क्योंकि उसकी रफ्तार इतनी तेज थी कि जो भी उसके कैमरे से गुजरा, पकड़ा नहीं जा सका। लेकिन रुक जाए तो तस्वीर बन जाए। रुका हुआ कैमरा तसवीर पकड़ लेता है। भागता हुआ कैमरा कैसे पकड़े। भगता हुआ कैमरा खाली रह जाता है। रुका हुआ कैमरा पकड़ लेता है। इसलिए कै मरा हिल न जाए, इसका भी ध्यान रखना पड़ता है। लेकिन हम पूरी तरह चारों त रफ भाग रहे हैं और हिल रहे हैं, तो वह जो मन का लेन्स है, कैमरा है, वह कुछ भी पकड़ नहीं पाता।

परमात्मा चारों तरफ मौजूद है। और हम अपने कैमरे को लेकर अपने मन को लेकर भागे जा रहे हैं। दौड़ रहे हैं, दौड़ रहे हैं। चिल्ला रहे हैं। शोर गुल मचा रहे हैं। बैं ड बाजा बजा रहे हैं। रामधुन कर रहे हैं। कहीं भजन कीर्तन कर रहे हैं। सब कर र हे हैं भागे हुए हैं। ठहर नहीं रहे हैं। ठहर जाए तो उसकी तस्वीर अभी पकड़ में आ जाए। लेकिन स्वभावतः जब दौड़-दौड़ कर हम उसकी तस्वीर न पा सकेंगे और जब हम सब हार कर खड़े होकर उसकी तस्वीर पड़क लेंगे, तो शायद फोटोग्राफर को भी लगे कि तेरी कृपा थी, तभी पकड़ पाए। हम तो बहुत दौड़े, न मिला वह। लेकि न अब जब खड़े हो गए, तब तस्वीर बनी। इसका मतलब साफ है कि हमारे पास से नहीं बनी, उसकी ही कृपा बनी। हालांकि वह सदा कृपा के लिए द्वार पर खड़ा था। लेकिन आप कभी मिलते ही न थे। आप कभी घर पर हैं ही नहीं। वह आए भी ख ोजते, तो आप कभी घर पर होते नहीं हैं। आप कहीं और ही होते हैं।

यह जो बात है उपनिषद में, सही भी है, गलत भी है। और यह भी कह दूं कि धर्म के सभी सूत्र ऐसे ही हैं। किसी अर्थ में सही भी, किसी अर्थ में गलत भी। इसलिए सब सूत्रों का खंडन भी किया जा सकता है और समर्थन भी किया जा कसता है। अ सल में धर्म इतना रहस्यपूर्ण है कि उसमें सब विरोध समाहित है।

तो, हम ऐसा भी कह सकते हैं कि साधक को अपने ही प्रयास से मिलता है। परमात मा की कोई कृपा नहीं है। क्योंकि अगर प्रयास के थक जाने पर भी मिलता है, तो वह भी तो साधक के ही किए गए प्रयास का अंतिम फल है, थक जाना।

जैन हैं, बौद्ध हैं। वे ऐसी ही मानते हैं कि अपने ही प्रयास से मिलता है। चाहे थक कर ही मिलता हो, थकना, भी तो अपना ही है। वह भी गलत नहीं कहते। उपनिष द हैं, जीसस के मानने वाले हैं। मुसलमान हैं। ये सब मानते हैं कि उसकी कृपा से ि मलता है। ये भी गलत नहीं कहते, क्योंकि जब हम थक जाते हैं, तब मिलता है। ह ालांकि कि दोनों सही कहते हैं, और दोनों गलत भी कहते हैं। क्योंकि बात ऐसी है

कि वह दोनों तरह से हो सकती है। इसलिए मैंने कहा कि इसे ठीक से समझ लेना जरूरी है।

सारे रूस में अंतिम बात इस संबंध में यह कह दूं कि प्रयास जरूर करें, पूरी ताकत से करें, ताकि जल्दी ही थक जाए और प्रयास व्यर्थ हो जाए। खूब दौड़ लें। ताकि थकान आ जाए और गिरना हो जाए। आधी दौड़ में मत रुक जाना किसी की बात सुनकर, कि ठीक है प्रयास से नहीं मिलेगा! वही माला डालेगा गले में, तो हम काहे के लिए दौड़ें, रुक जाए। लेकिन जो आधा होड़ कर रुका है, उसका मन दौड़ता ही रहेगा, वह रुक नहीं सकता। पूरा दौड़ के गिरना ही जरूरी है। थकना ही जरूरी है। चित्त से दौड़ का अर्थ ही खो जाना जरूरी है।

इसलिए मैं कहता हूं शास्त्र पढ़ना, ताकि पता चल जाए कि शास्त्र व्यर्थ हैं। साधना करना, ताकि पता चल जाए कि साधना बेकार है। खोजना, ताकि पता चल जाए कि खोज से नहीं मिलता। जिस दिन यह सब हो जाएगा, उस दिन आप अचानक पाएंगे कि जिसे खोजने कहीं और गए थे, वह सदा से द्वार पर ही बैठा प्रतीक्षा करता था। बैठा था कि कब तक लौट आओगे दौड़ कर, तो माला गले में डाल दी जाए। माला सदा तैयार है, गला झुकने को तैयार नहीं। झुकता वही गला है, जो कटने को तैयार हो जाता है, टूटने को तैयार हो जाता है। इसलिए मैंने कहा, समाधि एक अर्थ में मृत्यु है। अपने मैं का मर जाना।

एक दूसरे मित्र ने पूछा है—आप कहते हैं कि समाधि में मैं अकेला हूं ऐसा भाव करते हैं तो असंख्य विचार आते हैं। लेकिन यदि साथ में ओम या राम-नाम का जप करेंगे तो अकेलेपन की भावना प्राप्त करने से सहायता मिलती है। इस संबंध में आपके क्या खयाल हैं?

अगर आपने अकेलेपन के भाव में राम-राम का जाप शुरू कर दिया तो आप अकेले कैसे रहे? आपने राम को बुला लिया सहायता में तो अकेले न रहे, दो हो गए—आप और राम। ॐ का जाप करने लगे तो भी दो हो गए। दो में राह मिल जाती है। हमारे मन की ही आदत नहीं है। अभी थोड़ी देर पहले फिल्मी गाना गुनगुना रहे थे, तब भी दो थे। अब राम-राम, राम-राम कहने लगे, तो भी दो हैं, काम वही जारी है। सिर्फ शब्द बदल गए हैं। मन की पुरानी आदत ही जारी है। अभी सोच रहे थे किसी मित्र के विषय में, किसी प्रियजन के विषय मग, अब राम के रूप के संबंध में सोचने लगे। मन का काम जारी है। मन इसके लिए राजी हो जाता है। वह कहेगा ठीक, क्योंकि इसे कुछ बदलाहट न हुई, सिर्फ आब्जेक्ट बदला। सिर्फ विषय वस्तु बदल गयी। मन का पुराना का ही जारी रहा है।

एक प्रेमी अपनी प्रेयसी के नख शिख का विचार कर रहा है। एक भक्त अपने भगवान के नख शिख का विचार कर रहा है। दोनों में कोई फर्क नहीं है। दोनों का मन एक ही काम कर रहा है।

लेकिन नहीं! जब मैं कह रहा हूं अकेले का भाव, तो उसका मतलब ही यह है कि दूसरे के प्रवेश की जगह ही मत छोड़ना। तभी मन मरेगा। मन दूसरे को चाहता है,

द्वैत को चाहता है। मन द्वैत में ही जिंदा रहता है। द्वैत गया तो मन गया। तो मन कहता है कि किसी तरह का द्वैत पैदा कर लो। भगवान और भक्त का कर लो। प्रेम ी प्रेयसी का कर लो। मां बेटे का कर लो। मित्र शत्रु का कर लो। द्वैत पैदा कर लो। बस, तब मन राजी है। क्योंकि मन कहता है, द्वैत मेरा जीवन है। तो फिर किसी तरह का द्वैत पैदा कर लो। फिर मन गड़बड़ नहीं करता। वह कहता है, ठीक है। ह म राजी हैं।

लेकिन द्वैत पैदा ही मत करो और कहो कि अकेला ही हूं। कोई है ही नहीं दूसरा। न कोई राम, न कोई भगवान। कोई नहीं है, मैं अकेला हूं, निपट अकेला हूं, तब म न छटपटाने लगता है।

अकेलेपन में छटपटाहट होती है तो मन फिर दौड़ कर कोई विचार पकड़ने की कोि शश करेगा। वह कहेगा कि अकेले कैसे हो सकते हैं? कुछ तो विचार करो, कुछ तो सोचो। नहीं, मन की यह छटपटाहट इस बात की खबर है कि मन मरने से डर रह ा है कि और अपने बचने का इंतजार कर रहा है। उसे कोई सहारा चाहिए। वह द्वैत के बिना नहीं जी सकता। आप तो जी सकते हैं द्वैत के बिना, लेकिन आपको मन नहीं जी सकता। मन का अस्तित्व दो को चाहता है। दो के बिना मन को बिलकुल राहत नहीं मिलती। किसी भीतर भी तरह दो चाहिए।

जब मैं कहता हूं, अकेले का भाव तो इसका मतलब यह है कि द्वैत की वृत्ति को जा ने दें। मन कहे कि मुझे तो द्वैत चाहिए, तो उसे दीजिए मत। देने लगने पर तो हम अच्छे द्वैत खोज लेंगे। हम कहते हैं चलो ठीक है, रामधुन करें, लेकिन यह वही है। जरा भी फर्क नहीं। राम-राम कहो कि कोकाकोला कहो, कोई फर्क नहीं है। वह ज ो मन है वह कहता है कुछ करते रहो। कुछ कहते रहो। जो भी कहो, उससे चलेगा मन का काम, लेकिन रुको मत, दूसरे को पैदा कर लो।

कुछ भी दूसरा मौजूद रहे, तो मन बाकी है। और समाधि में जाना हो तो दूसरे को हटाना जरूरी है, ताकि मन मिट जाए।

मन की मृत्यु का सूत्र है द्वैत से अपनी वृत्ति को हटा लेना। दूसरे से छुटकारा पा ले ना। नहीं तो दूसरे के साथ रस कायम हो जाता है। कोई फर्क नहीं पड़ता। इसलिए जब मैं कहता हूं अकेलापन, तो उसका अर्थ है अद्वैत। उसका अर्थ है, दूसरा नहीं। ि कसी तरह से दूसरे का सहारा नहीं लेना। दिक्कत होगी, कठिनाई होगी। होने दें। जब भी कोई चीज मरती है, जब बड़ी कठिनाई होती है। मन पुराना है, जन्मों-जन् मों का है। शरीर तो बहुत नया है। शरीर तो हर बार बदल जाता है। मन बहुत पु राना है। लाखों करोड़ों वर्षों का है, मनुष्य जाति की जितनी उम्र है, उतना पुराना है मन

वही पुराना मन अपने बचने का पुरा इंतजाम करेगा। वह आखिरी उपाय करेगा। औ र मन के आखिरी उपाय बड़े होशियारी के होते हैं। अगर आप नहीं मानते हैं, तो वह कहता है अच्छा, तुम्हारी तरकीब से हम राजी हैं। तुम्हें राम कहना है, राम-रा

म कहो। लेकिन कुछ कहो जरूर। कुछ बोलते रहो। दूसरों को बनाए रखो, तो हम भी बच जाएंगे। वह दूसरे को बना लेता है।

मन दूसरे के बिना नहीं जी सकता। और दूसरे के बिना तत्काल मर जाता है। मन की मृत्यु ही समाधि का द्वार है। इसलिए मन को छटपटाने दें। कहना कि ठीक है, छटपटाओ, लेकिन मैं तो अकेला हूं। दूसरे का सहारा अब न लूंगा। दूसरा, मेरी कल्प ना का सहारा है। मन की सबसे बड़ी ताकत जो है, वह यह है कि तत्काल, आप ि जस तरह का चाहें, उसकी तरह का सहारा दे देता है। आप रात में सपना देखते हैं । अगर दिन भर भूखे रहे हों। तो रात में मन कहता है कि चलो, भोजन कर लो। सपना दिखा देता है भोजन का और भोजन करा देता है। उससे बड़ा फायदा होता है मन को, नींद नहीं टूटती। सपना जो है, नींद को बचाने का उपाय है। अगर सपना न हो, तो आपको सोना मुश्किल हो जाए। क्योंकि दिन भर जो जो आपने छोड़ा है, वह रात भर आपको परेशान करेंगे। मन कहता है, कल्पना में ही पूरा कर लो। आ प अलार्म की घड़ी रख कर सोते हैं कि चार बजे उठना है। अलार्म की घड़ी बज र ही है। और मन कह रहा है मंदिर की घंटी बज रही है। पूजा शुरू हो गयी है। वह अलार्म को इनकार कर रहा है। वह कह रहा है मंदिर की घंटी बज रही है, कहां का अलार्म? और आप मजे से सपने में हो गए। क्योंकि घंटी बज कर बंद हो गयी और आप सो रहे हैं। मंदिर की घंटी का उठने से क्या संबंध? मन ने तरकीब ईजाद की! मन ने कहा कि नींद को बचाओ, तो घड़ी के अलार्म को उसने मंदिर की घंट ी बता दिया।

मन पूरे समय ईजाद कर रहा है कि नींद न टूट जाए। रात सपना देख रहा है कि नींद टूट जाए, दिन में कल्पनाएं दे रहा है कि नींद टूट जाए। और जब आप कल्पना छोड़ने लगते हैं, तो वह नयी कल्पनाएं देता है। वह कहता है पति की कल्पना ठी क नहीं लगती। तो कृष्ण की कल्पना पति के रूप में करो। कहता है, नहीं अच्छा ल गता आदमी के साथ, कोई फिकर नहीं, मन में भगवान का साथ करो, उसकी मूर्ति का निर्माण करो, उनके साथ जीयो। यह बड़ा अच्छा है। लेकिन फर्क क्या है? रात के सपनों जैसे ही, मन दिन में भी सपने पैदा कर लेता है। सपने मन को बचाने के उपाय हैं।

दो तरह की नींद है। एक तो जो रोज हम रात को सोते हैं, वह। और दूसरी जिस में हम जन्म से ही सोते हैं, वह। नींद अगर तोड़नी है तो मन के उपायों के प्रति जा ग्रत होना पड़ेगा। समझना पड़ेगा कि मन को भोजन नहीं देना है।

मन द्वैत का भोजन मांगता है। इसलिए मित्रों ने ठीक ही पूछा है कि अगर ओम औ र राम का सहारा लेते हैं तो थोड़ी राहत मिलती है। राहत मिल जाएगी। उससे मन का पूरा काम हो जाएगा। नहीं, राहत देनी ही हनीं है। राहत न देंगे, तो मन तड़पे गा, उसे तड़पने दें। वह पुकार करेगा कि मुझे चाहिए दूसरा। दूसरा लाओ, किसी अ ौर रूप में लाओ। लेकिन आप कहें कि मैं तो अकेला हूं। दूसरा लाऊं भी तो कहां से ? और ले भी जाऊंगा, तो भी मैं अकेला हूं।

कितने दूसरों को ले आएगा! पत्नी को घर ले आया, अकेलापन मिटा? बच्चे पैदा कर लिए, अकेलापन मिटा? साथी संगी बना लिए, अकेलापन मिटा? अकेलापन अभ ी है। अकेला होना मेरा स्वभाव है। वहां से लाऊं दूसरे को? नहीं लाऊंगा।
जब आप बहुत स्पष्ट रूप से तैयार हो जाएंगे कि अकेला होने की तैयारी है, मन थो. डी देर चिल्लाएगा और चुप हो जाएगा, थोड़े दिन चिल्लाएगा और चुप हो जाएगा। जिस दिन मन चुप होगा, उस दिन जिसकी प्रतीत होगी; वही परमात्मा होगा।
और जिसको आप राम-राम करके कह रहे थे, वह नहीं। वह तो सदा आपके शब्द हैं। जिस दिन अद्वैत होगा, उस दिन जिसे आप जानेंगे, वह है ओम। और जो आप ि चल्ला रहे थे, वह कुछ भी नहीं है। उसका मूल्य कोकाकोला से ज्यादा नहीं।
लेकिन जिस दिन मन चला जाएगा और कुछ न बचेगा और आप जानेंगे, आपकी अ ावाज नहीं होगी, आपका द्वैत नहीं होगा। आपके मन की ईजाद नहीं होगी। मन होग ा ही नहीं। जिस दिन आप उसे जानेंगे, वह कुछ और ही होगा। उसे कोई भी नाम दे दें मोक्ष कहें, निर्वाण कहें, समाधि कहें, ओम कहें, ब्रह्म कहें, जो भी कहें, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। उस जगत में सब शब्द समानार्थी हैं, क्योंकि सभी शब्द एक से व्यर्थ हैं। वहां किसी शब्द की कोई गति नहीं है! इसलिए कोई भी अ ब स नाम दिया, तो चल जाएगा। इससे कोई अंतर नहीं पड़ता।
लेकिन आप मन के धोखे में मत पड़ जाना। आप मन के द्वार ईजाद न कर लेना। मन को राहत देने को कोशिश न करना। मन को थोड़ा तड़पने दें, थोड़ा परेशान हो ने दें। जब वह परेशान होगा, तड़पेगा, तभी मरेगा। मन की मृत्यु ही तो समाधि है।

एक और मित्र ने पूछा है कि क्या समाधि में देवताओं का दर्शन होता है? ऐसा महा न संतों के जीवन में सुना है। राम, कृष्ण का होता है, मोहम्मद पैगंबर का होता है, काली माता और अन्य देवताओं के दर्शन होते हैं। ऐसे दर्शन के संबंध में आपके क या विचार हैं?
जैसे मैंने कहा, वह सब दर्शन, मन के सपने हैं। इसीलिए जब तक किसी का दर्शन होता रहे, तब तक समझना कि मन अभी मौजूद है और अभी चक्कर के बाहर आ प नहीं हो गए। कोई भी दिखता हो। दर्शन से ही मुक्त हो जाना है। तभी उसका प ता चलेगा, जिसको दर्शन हो रहा है, जो दृष्टा है।
सब भ्रम हैं। सुंदर भ्रम हैं। बड़े प्यारे सपने हैं। अब कृष्ण खड़े हों बांसुरी बजाते हैं, तो हैं तो प्यारा सपना। लेकिन ध्यान रहे, प्यारे सपने बुरे सपने से भी ज्यादा बुरे हो ते हैं। क्योंकि बुरे सपने बुरे होने की वजह से जल्दी टूट जाते हैं, और प्यारे सपने प् यारे होने की वजह से मन होता ही नहीं कि टूटें। मन होता है कि बने रहें, बने रहें ।
रात देखें, प्यारा सपना आता है तो मन होता है कि देखते रहो, देखते रहो। कोई जगा दे बीच में, तो बुरा लगता है कि किसी तरह से दिन भर का भिखमंगापन मिट था, रात सम्राट हो गए थे। नाहक उठा दिया। घंटे भर और रहते सम्राट तो क्या

बुरा था। सुखद सपने को बचाने की प्रवृत्ति होती है। दुखद सपना तो जल्दी टूट सक ता है। ये सब सुखद सपने हैं, और आदमी के मन की ताकत है। और एक ही ताक त है आदमी के मन की, कि वह सपने पैदा करता है। मन का अर्थ है स्वप्न पैदा क रनेवाली शक्ति।

स्वप्न किसी भी तरह के पैदा कर सकते हैं। और अगर आप व्यवस्था से पैदा करें, तो आप कैसे भी स्वप्न पैदा कर सकते हैं। व्यवस्था हमने खोज ली हैं। अगर आपका पेट भरा हुआ है, तो स्वप्न पैरा करने की क्षमता कम हो जाती है। अगर पेट खाल ी है, तो क्षमता बढ़ जाती है। इसलिए जो लोग इस तरह के दर्शन आदि करना चा हते हैं उनके लिए उपवास बड़ी राम बाण व्यवस्था है। तीस दिन उपवास कर लें, ि फर आपके सपने पैदा करने की क्षमता तीव्र हो जाती है। कभी आपको बुखार आया हो और खाना पीना बंद रखना पड़ा हो तो आपको पता होगा। ऐसी-ऐसी चीजें दि खाई देने लगती हैं, जो कभी दिखाई नहीं दी थीं। कभी खाट उड़ने लगती है, कभी आसमान में चले जाते हैं, कभी देवी देवता दिख जाते हैं। कभी भूत-प्रेम भी दिखाई दे जाते हैं। और सब होने लगता है। बंधन में पड़े बीमार आदमी को क्यों यह सब होने लगता है? क्या कारण है? कारण यह है कि जैसे-जैसे शरीर की शक्ति कम ह ोती है, वैसे वैसे मन की शक्ति ज्यादा होती जाती है। मन पर शरीर का काबू कम हो जाता है। मन बिलकुल दौड़ने लगता है।

इसीलिए दिन में आप उतने सपने नहीं देख पाते हैं, क्योंकि रात में शरीर थक कर गिर जाता है। मन मुक्त हो जाता है। इसीलिए जो चाहे, देखे। सपने देखने का इंत जाम है, व्यवस्था है, सिस्टम है। उस व्यवस्था में उपवास बड़ा कारगर है। जिसको भ ी इस तरह के सपने देखना हो, देवी देवता, भूत प्रेम, जो भी देखना हो, उसके लि ए लंबे दिनों तक भूखे रहने से बड़ा लाभ होगा। एकांत भी बड़ी उपयोगी चीज है। भीड़ में सपना देखना बड़ा मुश्किल हो जाता है, क्योंकि आस पास के लोगों की मौ जूदगी इसमें बाधा डालती है। एकांत में सपने आसान हो जाते हैं। इसीलिए जंगल में भाग जाते हैं, कि किसी गुहा में छिप जाए। वहां सपने आसान होते हैं। कभी अगर आपको एकांत में रहने का मौका मिला हो, तो पता होगा। अगर घर के सब लोग चले गए हों, और घर गांव से बाहर एकांत में हो, पता खड़कता है तो लगता है, आया कोई! और वह जो मन की सपने देखने की क्षमता है, वह तीव्र हो जाती है। वह पत्ते के खड़कने में भी, किसी के पैर की आवाज सुनता है। सुबह आपने ही नह ा कर लंगोट टांग दिया है, रात देखते हैं कि कोई हाथ फैलाए खड़ा है। दूसरे की म ौजूदगी हमें सपने देखने में बाधा डालती है। क्योंकि दूसरा क्या कहेगा? दूसरे की मौ जूदगी हमारी बुद्धि को सुस्थिर रखती है। इसलिए जिनको सपने देखने में काफी रस लेना है, उन्हें भाग जाना चाहिए समाज से दूर! समाज से भागने की प्रवृत्ति सपना दे खने की सुविधा की वजह से पैदा हुई है। इधर पूना में देखना बहुत मुश्किल है सपन ा। चले जाए हिमालय के किसी एकांत में, वहां सपना देखना बहुत आसान हो जाता है। भूखे रहें, एकांत में चले जाए।

सेक्स सप्रेशन भी सपना देखने की अदभुत तरकीब है। अगर कोई व्यक्ति अपनी यौन प्रवृत्ति को जोर से दबा ले, तो सपने की शक्ति ऐसी हो जाती है, जैसे किसी स्प्रिंग को दबा दिया हो, तो वह स्प्रिंग चीजों को जोर से वापस फेंकती है। जो लोग सेक्स सप्रेसिव होते हैं, उनके सपने बढ़ जाते हैं। जिन लोगों ने काम की वृत्ति को दबाया है, उनकी रात सपने से भर जाती है। बहुत पहले यह समझ में आ गया था कि अ गर सपना देखना ठीक से, तो सेक्स को दबाओ। और ध्यान रहे, जिसने सेक्स को द बाया, उसके सपने देखने की क्षमता इतनी बढ़ जाती है कि जिसका हिसाब नहीं। अ ब पागलखाने में जितने लोग बंद हैं, उनमें १०० में से ९० काम की वृति को दबाने की वजह से पागल हैं। पागल का मतलब क्या है? पागल का मतलब है कि वह स पना इतना देखने लगा कि अब आंख खोलकर भी देखता है। अब उसे आंख बंद कर ने की जरूरत नहीं है। आपको जब सपना देखना हो तो आंख बंद करनी पड़ती है। उसकी अब आंख बंद करने की जरूरत नहीं है। वह आंख खोल कर देखता है। आप को सपना आंख खोलने से टूट जाता है। उसका सपना आंख खोलने से नहीं टूटता। आप देखिए—एक पागल आदमी बैठा है। वह किसी से बात कर रहा है मजे से। कोई नहीं है मौजूद, वह बात कर रहा है। इसको आप पागल कहेंगे। लेकिन एक भक्त भगवान से बातें कर रहा है, तो आप उसके चरण छुएंगे। दोनों एक ही स्थिति में हैं। हां थोड़ा फर्क हो सकता है कि यह पागल खतरनाक हो सकता है जो किसी से ब ातें कर रहा है और वह जो भक्त भगवान से बातें कर रहा है, वह खतरनाक नहीं होगा। बस, इतना फर्क हो सकता है। यानी सोशल खतरनाक हो सकता है यह, जो आदमी किसी के न होने पर भी किसी से बातें कर रहा है। इसको हम पागलखाने में बंद करेंगे। और यह जो आदमी भगवान से बातें कर रहा है, यह सामाजिक रूप से खतरनाक नहीं है। वैसे इसे भी हम तरकीब से एक तरह के पागलखाने में बंद क र देंगे। किसी मंदिर में बिठा देंगे। किसी मंच पर चढ़ा देंगे। जय जयकार करेंगे। सम ाज और उसके बीच फासला खड़ा कर देंगे। एक दीवार बना देंगे कि तुम कृपा कर के इधर मत आना और हम उधर नहीं आएंगे। हम पूजा करेंगे, फूल फेंक देंगे लेकि न बच में फासला रहेगा। हम वह इंतजाम कर लेंगे।

मंदिर बनाए ही इसलिए गए हैं, क्योंकि यह सब अच्छे-अच्छे किस्म के पागलों को कै द करने का हमने इंतजाम किया हुआ है। आश्रम और पागलखाना! आश्रम को भी गांव के बाहर बनवा देते है कि गांव के भीतर कृपा करे ज्यादा न जाए। हमको ही कभी पागलपन की खुजलाहट होगी, तो हम ही उधर आ जाएंगे। आप कृपा करके उधर न आना।

एक पागलखाना बनाया है, वह हम खतरनाक किस्म के पागलों को बंद करते हैं। ले किन पागलपन का मतलब ही यह होता है कि आदमी को वस्तुस्थिति दिखाई नहीं दे ती। आदमी जो चाहता है, वही देखने लगता है।

अगर हम दस भक्तों को एक ही कमरे में बंद कर दें—एक जीसस का भक्त हो, तो रात में जीसस से बातें करता रहेगा। और कृष्ण का भक्त हो, तो कृष्ण से बातें क

रता रहेगा। राम का भक्त हो, तो वह धनुर्धारी राम को देखता रहेगा। और उन ती नों को दूसरे के भगवान दिखाई नहीं पड़ेंगे। सुबह झगड़ा भी हो सकता है कि कौन कहता है कि धनुर्धारी राम यहां थे? जीसस थे! राम थे! कृष्ण थे! कौन कहता है जीसस यहां थे? वे तीनों सुबह लड़ेंगे, क्योंकि उनकी भगवान सिर्फ उन्हीं को दिखाई पड़ता है।

ध्यान रहे, सपने की एक क्वालिटी है प्राइवेट होना। सपना सदा प्राइवेट होता है। सप ना कभी सामूहिक नहीं हो सकता। अब उस झंडे को हम देख रहे हैं, तो सब देख र हे हैं, यह सामूहिक है। लेकिन अगर मैं कोई सपना देख रहा हूं तो आपको उसमें सा झीदार नहीं बना सकता। कोई भक्त किसी को कभी अपने सपने में साझीदार नहीं ब ना सकता। और कोई पागल भी किसी को कभी अपने पागलपन में साझीदार नहीं ब ना सकता। सब प्राइवेट हैं। इसलिए प्राइवेट चीज से थोड़ा सावधान रहना। उससे थो. डा खतरा है। उसे डर यह है कि कहीं वह ऐसी बात न हो, जो हमने कल्पित कर ली हो। और हम कल्पित कर रहे हैं।

नहीं! न तो देवी देवताओं को देखने से अध्यात्म का कोई संबंध है, न राम कृष्ण, बु द्ध को देखने से संबंध है। इनसे कोई संबंध नहीं है। संबंध किसी और बात से है। दे खना है उसे जो सब को देख रहा है। दृश्य को नहीं देखना है। दृष्टा का संबंध सी दृ श्यों को विदा करके उसे देख लेना है, जो सदा देखता रहा है। हम टाकीज में बैठे हैं । पीछे पर्दा है। इसमें बुरी फिल्म चलती हो और एक हत्यारे की कहानी चलती हो वह पर्दे पर चल रही है। फिर एक अच्छी फिल्म चलती हो, एक संत का जीवन च ल रहा हो, तो भी पर्दे पर कहानी चल रही है। अच्छी चले, बुरी चले, शराब पीने की चले; त्याग तपश्चर्या की चले। लेकिन पर्दे पर चल रही है।

दृश्य पकड़े हुए हैं? नहीं अध्यात्म का संबंध बुरी कहानी को हटा कर अच्छी कहानी को रखना नहीं है। अध्यात्म का संबंध कहानी को हटा कर पर्दा खाली करने से है, ताकि पर्दा खाली हो जाए। देखने को कुछ न बचे, तो आप अपने पर लौटें। और उसे देख पाएं जो अब तक सिर्फ देखता ही रहा है। लेकिन अपने को जिसने कभी भ ी नहीं पहचाना कि मैं कौन हूं, जो देखता है, वह कौन है।

नहीं, महत्वपूर्ण यह नहीं है कि राम दिखाई देते हैं। महत्वपूर्ण यह कि राम जिसको दिखाई देते हैं, वह कौन है?

और अगर उसके देखना है, तो राम से भी हाथ जोड़ कर कहना पड़ेगा कि अपना धनुष बाण उठाओ, और कृपा कर जाओ। इधर बाधा मत दो। अगर बुद्ध खड़े हो ज ाए तो उनसे भी कहना पड़ेगा, अब बहुत देर हो गयी, अब आप जाइए। अगर जीस स से भी न मानते हों, सूली पर लटकते चले जाते हों, तो उनसे कहना, अब बंद कीजिए। अब अपनी सूली ले जाइए और आप भी जाइए। मुझे उसे जानना है जो मैं हूं। मैं अब दृश्यों में उत्सुक नहीं हूं।

लेकिन हमारा मन बचकाना है ही। वह दृश्य बदल देता है। तो अधार्मिक दृश्य देखने वाला है गलत आदमी, और धार्मिक दृश्य देखने वाले लोग भी गलत हैं। कोई फर्क

नहीं है। दोनों दृश्य में ही उलझे हुए हैं। सवाल इस क्रांति का है कि दृश्य से चित्त विदा हो जाए और दृष्टा पर पहुंच जाए। देखने वाले पर पहुंच जाऊं मैं। फिर वहां क्या दिखायी पड़ेगा? वहां राम दिखाई पड़ेंगे? महावीर? नहीं, वहां मैं ही दिखाई पडूंगा। और मजा यह है कि मैं हूं। जिस दिन उस मैं पालूंगा। उस दिन मैं राम को, बुद्ध को, कृष्ण को, मोहम्मद को, सबको जान लूंगा। क्योंकि जो मैं हूं, मेरा जो बहुत आंतरिक स्वभाव है, वह वो है। राम और कृष्ण को भी दृश्य की भांति खड़ा करके नहीं जान सकते। उनको भी अपने ही दृष्टा स्वरूप का अनुभव करके जान सकता हूं, अन्यथा नहीं जान सकता।

जरथुस्त्र पहाड़ से उतर रहा है और उसके शिष्यों ने उससे कहा कि हमें अंतिम संदेश दे दो, क्योंकि अब वह विदा हो रहा है। उस ने कहा, शिष्यों! अब मुझे छोड़ो, अब मैं जाता हूं। एक भक्त आना चाहिए गुरु इतनी हिम्मत जुटा सके के शिष्यों से कहे कि कृपा करके अब मुझे छोड़ो, अब मैं जाता हूं। शिष्य में भी इतनी हिम्मत होनी चाहिए कि वह गुरु से कह सके कि अब कृपा करके मुझे छोड़ो, मैं जाता हूं।

लेकिन न गुरुओं में इतनी हिम्मत होती है, न शिष्यों में। वे एक दूसरे को पकड़े बांधे रहते हैं। खुद भी डूबते हैं, दूसरों को भी डुबाते हैं।

जरथुस्त्र ने उन शिष्यों से कहा, अब कृपा करके लौटा। अब मुझे जाने दो। वे शिष्य कहने लगे, थोड़ी दूर और साथ ले लें। जरथुस्त्र ने कहा, नहीं, और तुमसे मैं निवेदन करता हूं कि तुम मुझे भूल जाना। क्योंकि जब तक मुझे याद रखोगे, तब तक तुम अपने को कैसे याद कर पाओगे?

जरथुस्त्र हिम्मतवर आदमी रहा होगा--वही किसी से यह कह सकता है कि मुझे भूल जाना, मुझे भुला देना। मैं खतरनाक आदमी हूं। जरथुस्त्र ने कहा कि यदि तुम ने मुझे पड़ लिया, तो तुम अपने को कब पहचानोगे? तुम मुझे जाने दो। तुम भी मुझे छोड़ो, मैं भी तुम्हें छोड़ दूं।

एक झेन फकीर हुआ है वोकेज। वह अपने मित्रों से कहा करता था। कि बुद्ध से सावधान रहना--बी वेयर आफ दी बुद्ध! इस बात का क्या मतलब है? वह कहता है कि बुद्ध से जरा सावधान ही रहना। क्योंकि जब सब छूट जाएगा तब बुद्ध खड़े हो जाएंगे। और तब तुम अटक जाओगे।

अटकना कहीं भी नहीं। अगर कहीं भी अटके, तो अटकना हो जाएगा। इससे क्या फर्क पड़ता है कि खूंटी लोहे की है या सोने की। सवाल अटकने का है। नहीं, खूंटियां तोड़ देना।

वह कहता था--बुद्ध से सावधान हो जाना। और अगर बुद्ध बीच में आए, तो धक्का देकर अलग कर देना कि कृपा करके हटिए रास्ते से, मुझे मुझ तक पहुंचने दीजिए, बीच में मत आइए।

और मजा यह है कि जिस दिन हम अपने पर पहुंचेंगे, उसी दिन हम बुद्ध पर पहुंच जाएंगे, राम पर पहुंच जाएंगे। और जब तक हम दृश्य में उलझे रहेंगे, तब तक यह संभव नहीं हैं। नहीं, सपना मत देखिए। सुंदर सपने भी मत देखिए।

बहुत सपने देखे। सत्य को देखिए। और सत्य वह है, जो देख रहा है। सत्य वह नहीं है, जो दिखाई पड़ रहा है। दृष्टा सत्य है और दर्शन दृश्य। सब सपना है।

इसलिए मैं नहीं कहता कि किन्हीं देवी देवताओं की चिंता में पड़िए या कि कालीमाता को देखिए कि बनाइए मन में, सजाइए मन में या कि हाथ जोड़ कर खड़े होइए भीतर। कुछ भी हनीं होगा। इनसे कोई मतलब नहीं है, कोई प्रयोजन नहीं है। आदमी का मन सदियों से यही करता है और कहीं भी नहीं पहुंचा नहीं, अब सपने छोड़ देने पड़ेंगे। अपने को जानना पड़ेगा। लेकिन बहुत कठिन तो है ही। कठिन इसलिए है कि हम सपनों में खो जाते हैं।

फिल्म चलती है तो हम भूल जाते हैं कि जो चल रहा है पर्दे पर, वह कुछ भी नहीं है। एक सुंदर स्त्री आती है पर्दे पर, तो हमारी पीठ जो है, कुर्सी छोड़ देती है, हम आगे झुक जाते हैं। देखा होगा आपने होल में। और सुंदर स्त्री कहां है वहां? सिर्फ धूप छांह का खेल है। सिर्फ प्रकाश के कम ज्यादा फेंकने की तरकीब है। कहीं प्रकाश ज्यादा पड़ रहा है, कहीं कम पड़ रहा है और खेल बन रहा है।और आप संभल कर बैठ गए कि सुंदर स्त्री आ गयी। अगर कोई मरता है तो आंख में आंसू भी आ जाते हैं। इसलिए हाल में अंधेरा बड़ा सहयोगी होता है। जल्दी से अपने रूमाल से पोंछ लिया। और बगल में देख लिया कि किसी ने देखा तो नहीं। लेकिन किसी ने न देखा हो, आपने तो देख ही लिया। पर्दा धोखा दे गया। एक कहानी चलती थी और आप रो भी लिए और हंस भी लिए और परेशान भी हो लिए। और था कुछ भी नहीं। खाली पर्दा है वहां, और उस पर्दे पर धूप छांह का खेल है।

बहुत गहरे में, पुरी जिंदगी भी एक पर्दा भी एक पर्दा है और धूप छांह का खेल है। लेकिन वहां भी रोना है, धोना है। दृश्य ने हमें इतना पकड़ा है कि हमारी पूरी जिंदगी दृश्यों में बीत जाती है। दिन भर सपने हैं, रात भर सपना है और दृष्टा का कभी पता ही नहीं चलता, जो की देख रहा है।

जिस दिन हमें पता चल जाएगा, उसका, जो देख रहा है, उस दिन सब दृश्य सपना हो जाएंगे। देवी देवता ही नहीं, वह हमारे चारों तरफ जो जगत फैला हुआ है, वह जगत भी सपने का हिस्सा हो जाएगा। काली और रात और कृष्ण ही नहीं, पति और पत्नी, मित्र और शत्रु से ये सब भी चारों ओर एक बड़े नाटक के हिस्से हो जाएंगे।

मैं छोटा था, तब अपने गांव में रामलीला देखने जाता था। मैं सादा हैरान होता था कि वहां पर्दे के पीछे क्या होता होगा! क्योंकि सारे लोग वहीं से आते हैं। राम भी वहीं से निकलते हैं और रावण भी वहीं से निकलते हैं, एक ही दरवाजे से। मैं सदा चिंतित होता था कि दरवाजे के पीछे क्या राज है? उस कमरे में क्या होता है? तो मैं पीछे का पर्दा उठा कर उस कमरे में घुस गया। वहां तो बड़ा चकित हुआ। क्योंकि वे जो रमा और रावण बड़ा युद्ध कर रहे थे, वहां बैठ कर सिगरेट पी रहे थे, गप शप कर रहे थे। मैंने कहा, यह तो बड़ा आश्चर्यजनक मामला है। पर्दे पर तो ये बड़ा धनुष बाण खींचते हैं और पैर पटक कर बड़ी आवाज करके बातें करते हैं और

यहां सिगरेट पी रहे हैं! तब से मुझे निरंतर यह खयाल रहा है कि जिंदगी के पर्दे के पीछे भी कोई आश्चर्य नहीं है कि राम और रावण बैठ कर सिगरेट पीते हों। क्योंकि जिंदगी के पर्दे पर भी हम एक ही जगह से आते हैं, और एक ही जगह वापिस लौट जाते हैं। पर्दे पर आना जाना तो होता रहता है, लेकिन पीछे लौटने का एक ही रास्ता है।

उसी अंधकार से हम आते हैं जन्म के, और मृत्यु में, उसी अंधकार में, हम वापस लौट जाते हैं। पर्दे के पीछे राम और रावण में बहुत फर्क नहीं है। इसलिए जो जानते हैं, वे जगत को लीला कहेंगे, नाटक कहेंगे। लेकिन यह जगत लीला तभी होगा, जब हमें दृष्टा का थोड़ा खयाल आ जाए। नहीं तो लीला ही सत्य हो जाती है। नाटक ही सत्य हो जाता है। रावण ही सत्य हो जाता है।

क्या आपने कभी खयाल किया कि सपने में कभी नहीं पता चलता है कि जो देख रहा हूं, वह सपना है?

कितनी दफा सपना आपने देखा जिंदगी में! रोज सुबह उठ कर कहते हैं, सपना था। फिर रात सोते हैं, सपना देखते हैं। लेकिन सपने में नहीं पता चलता कि जो देख रहा हूं, वह सपना है। फिर सपना पकड़ लेता है। फिर सुबह उठ कर सकते हैं कि सब सपना था। रात फिर आती है, और फिर सपना पकड़ लेता है। अपने की पकड़ बड़ी गहरी मालूम पड़ती है। हजार बार के अनुभवों के बाद भी जब सपना आता है, तो एकदम पकड़ लेता है। सपना सच हो जाता है।

ध्यान रहे—जब सपना सच होता है, तब आप झूठे हो जाते हैं तत्काल। दो में से एक ही चीज सच हो सकती है—या तो दृश्य या दृष्टा झूठा हो जाता है। जब दृष्टा लौटता है, तो सपना झूठा हो जाता है।

सुबह जब आप जागते हैं और दृष्टा की तरह देखते हैं, तब आपको पता चलता है, सपना था। झूठा था। जब सोते हैं, तब सब सो जाता है, सपना सच हो जाता है, दृश्य सत्य हो जाता है।

दुनिया में दो ही तरह के लोग हैं। एक वे जिन्हें दर्शन सत्य है, दृश्य सत्य है। और दूसरे वे जिन्हें दृष्टा सत्य है। पर दोनों एक साथ सत्य नहीं हो सकते। कभी हुए नहीं। इसलिए जिन्होंने कहा जगत माया है, उनका मतलब कुछ और नहीं है। उनका मतलब केवल इतना है कि सपना है कि दृश्य है। और जो देख रहा है, वह गहरे में सबसे सब्स्टेंशियल है। जो दिखाई पड़ रहा है, वह अभी है, अभी मिट जाएगा, अभी बना है, अभी खो जाएगा। लेकिन देखने वाला?

रात में जब मैं सपना देखता हूं, तब भी मैं होता हूं। नहीं तो फिर सुबह याद कौन करेगा? सपना तो मिट जाता है, मैं बच जाता हूं। दिन भर सपना देखता हूं, तब भी मैं होता हूं। रात में दिन का सपना फिर खो जाता है। लेकिन मैं फिर बच जाता हूं।

बच्चा था, तब मैंने बचपन का सपना देखा था। लेकिन मैं था। जवान हूं तो मैं जवानी का सपना देख रहा हूं। और बूढ़ा हो जाऊंगा, तो बूढ़ा हो जाने का सपना देखूंगा

, मगर तब भी मैं होऊंगा। बचपन में जवानी में, बुढ़ापे में, सपना रोज बदलता रहे गा; लेकिन देखने वाला रोज वही है, वही है। एक वह है, जो बदल रहा है। और ए क है, जो अनबदला देख रहा है।

धर्म, अध्यात्म उसकी खोज है, जो दुख रहा है। संसार उसकी खो है, जो दिखाई दे रहा है। जो दिखाई दे रहा है, उसकी खोज में जो पड़ गया, वह भटकता चला जाए गा। क्योंकि दिखाई पड़ने वाला प्रतिपल बदल रहा है। आप खोजेंगे कैसे? आप जब तक पहुंचेंगे, तब तक सब बदल चुका होगा।

दृश्यों का कोई भरोसा है? दृश्य भाग रहे हैं। मगर हम जिंदगी भर दृश्यों के लिए भ ाग रहे हैं। क्या आप आज रात फिर वही सपना देख सकते हैं, जो आपने कल रात देखा था? उपाय करके देखें! कितना भी उपाय करें, उसे दुबारा देखना बहुत मुश्‍ि कल है।

कल जिस पत्नी से आप मिले थे, आज आप उसी पत्नी से मिल सकते हैं दुबारा? आशा रखते हैं, इसी से दिक्कत होती है। कल जो स्त्री था, आज वह नहीं है। कल जिस गंगा से गुजरे थे, वही गंगा आज नहीं है। वह गंगा तो बहुत आगे निकल चुकी है। आज गंगा का पानी बह गया।

मां अपने बेटे से कहती है, शादी होने के बाद तू कैसा हो गया? कल तक मेरी गोद में सिर रखता था, अब मेरी तरफ देखता ही नहीं! लेकिन मां ने उस बेटे को पक. ड लिया और मुश्किल में पड़ गया। अब वह बेटा किसी और स्त्री की गोद में सिर र ख रहा है।

वह कब तक तुम्हारी गोद में सिर रखता रहेगा? बदलने वाले को पकड़कर हम बड़ी झंझट में पड़े हुए हैं, चौबीस घंटे। और वह बदलने वाला बदला जा रहा है, कोई उपाय नहीं है। और ऐसा नहीं है कि वही बदला जा रहा है, हम भी बदले जा रहे हैं। जहां दृश्य की दुनिया है, वहां सब बदलता जा रहा है। वहां कुछ भरोसा नहीं है। तो जो दृश्य की खोज में दौड़ रहा है, वह जिंदगी भर पीड़ा में, परेशानी में रहेगा। और असल में तो हम ही हनीं दौड़ रहे हैं। बड़े बुद्धिमान भी दौड़ जाते हैं।

रामचंद्र दौड़ गए स्वर्ण मृग के पीछे। हम भी एक दफा सोचते, कि सोने का हिरण होता भी है? लेकिन राम दौड़ गए सोने का हिरण देख कर। सीता का भी मन हुआ कि ले आओ सोने के मृग को पकड़ कर। सोने का कहीं हिरण होता है? लेकिन रा म दौड़ जाते हैं। हम भी दौड़ रहे हैं। असल में हमारे भीतर भी राम ही दौड़ रहे हैं । दौड़ेगा कौन? स्वर्ण मृग दिखाई पड़ रहे हैं। हम दौड़े चले जा रहे हैं।

एक दुनिया है, जहां हम दौड़ते-दौड़ते, न मालूम कितने अनंत काल से दौड़ते हैं। ले‍ि कन कब तक दौड़ते रहेंगे। क्या अभी काफी दौड़ नहीं हो गयी? समय नहीं आ गया कि हम उसे पहचानें जो दौड़ रहा है? उसे पहचानें, जो देख रहा है। अगर समय आ गया है उसे पहचानने का, तो नयी दौड़ न बनाए, देवी देवताओं की, इसकी-उस की। नहीं, अब नयी दौड़ नहीं चाहिए। अब तो दौड़ को ठहरना चाहिए। और उसे दे खना है, जो सारी दौड़ को सदा देखता रहा है। समाधि उसका द्वार है। आप आज र

ात्रि उसके लिए आमंत्रित हैं, एक घंटे के मौन के लिए आप सिर्फ मौन में सुनने की कोशिश करें। और कुछ न करिए। शायद जो शब्द में नहीं कहा जा सकता है, वह निःशब्द में आप तक पहुंच जाए। पहुंच सकता है। शब्द ही एकमात्र मार्ग नहीं है, पहुंचाने का।

सच तो यह है कि शब्द कोई मार्ग नहीं है। क्योंकि मौन हम नहीं हो सकते हैं, इसलिए शब्द में बात करनी पड़ती है। काश, हम चुप हो सकें, तब शब्द की कोई जरूरत नहीं रह जाती है। जब जो कहना है, वह बिना कहे भी कहा जा सकता है। देखें, शायद मौन में वह संवाद हो सके, जो शब्द से नहीं हो सकता।

समझ का द्वार

मेरे प्रिय आत्मन,

प्रश्न--एक मित्र ने पूछा है कि अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह आदि व्रतों के पालन के लिए गांधी जी ने कहा है, और पतंजलि ने भी इस पर जोर दिया है। तो क्या समाधि के पहले इनकी साधना आवश्यक है? या इनके बिना ही समाधि तक पहुंचा जा सकता है?

भगवान श्री--समाधि न मिले, तो न अहिंसक हो सकता है, न कोई अपरिग्रही; न कोई सत्य को ही उपलब्ध हो सकता है। अहिंसा, सत्य और अपरिग्रह सब परिणाम हैं, कल्याण नहीं। अहिंसा को साध कर कोई समाधि तक नहीं पहुंचता है। समाधि तक जो पहुंच जाता है, उसके जीवन में अहिंसा, फलित होती है। यह फूल की तरह है, बीज की तरह नहीं। समाधि के बीज को तो बोना पड़ता है। जीवन को समझने में अक्सर भूल हो जाती है कि क्या बीज है और क्या फूल है। अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, समाधि के पौधे में लगे फूल हैं। और अगर किसी ने सीधा फूल चाहा, तो सिर्फ बाजार से नकली फूल खरीद सकता है और कुछ भी नहीं कर सकता। पौधों कि बिना फूल नहीं होंगे। बाजार में कागज के और प्लास्टिक के मिल सकते हैं।

गांधीजी जिसे अहिंसा कहते हैं, वह मेरी दृष्टि में अहिंसा नहीं है। अत्यंत कागज की अहिंसा है। समाधि पौधे पर नहीं लगती है। इसे समझ लेना बहुत उपयोगी है; क्योंकि हमारे मन में इस तरह की बहुत भ्रांतियां हैं। गांधीजी की अहिंसा में हिंसा का तत्व निरंतर मौजूद है।

गांधीजी अपनी अहिंसा से भी वही काम ले रहे हैं, जो कोई हिंसा से लेता है। हिंसा का मतलब है दूसरे को दबाना। अगर मैं एक छुरा लेकर आपकी छाती पर खड़ा हो जाऊं, और कहूं कि मेरी बात मानो, अन्यथा छुरा तुम्हें मार दूंगा, तो यह हिंसा है। और अगर मैं छुरे की धार अपनी छाती की तरफ कर लूं और कहूं, मेरी बात मानो, अन्यथा मैं छुरा मार लूंगा, तो यह अहिंसा कैसे?

गांधीजी के सब अनशन हिंसात्मक हैं। इसलिए गांधीजी की अहिंसा की निरंतर बातचीत के बाद भी इस देश में हिंसा ही फलित हुई, अहिंसा फलित नहीं हो सकती। हिंदुस्तान भी बंटा, लाखों लोग भी मरे और गांधीजी का अंत भी हिंसा में ही हुआ। यह अहिंसा नहीं है। लेकिन गांधी भी भ्रम में हैं और उनके अनुयायी भी भ्रम में हैं।

अहिंसा का फूल लगता ही समाधि में है। दोनों बातों में बुनियादी फर्क है। अगर हम बाजार से अहिंसा खरीद लाए, तो उसमें यानी कागज के फूल में और असली फूल में कुछ बुनियादी फर्क होगा ही।

पहला फर्क तो यह है कि जब अहिंसा समाधि से निकली है, तो हिंसा से लड़ कर नहीं निकलती। जब समाधि आती है, तो हिंसा विसर्जित हो जाती है। जो शेष रह जाता है, वह अहिंसा है। अहिंसा, हिंसा के विपरीत नहीं है कि आप हिंसा से लड़े और अहिंसक हो जाएंगे।

अहिंसा का मतलब है हिंसा का अभाव। जब समाधि में आपको दिखायी पड़ता है कि मैं और तू में फर्क ही नहीं है, जब समाधि में यह बोध होता है कि मैं ही हूं, या तू ही है, एक ही है, तब फिर हिंसा का मार्ग नहीं रह जाता, उपाय नहीं रह जाता, किसे मारे और किसे सताए! अपने को तो कोई सताना चाहता नहीं।

मैं ही हूं, अगर यह बोध हो जाए, तो एक अहिंसा फलित होगी, जो बहुत भिन्न प्रकार की होगी। उसमें हिंसा का कोई नाम तक नहीं होगा एक और तरह की अहिंसा है झूठी, मिथ्या। वह अहिंसा ऐसी है कि हिंसा से लड़कर उपलब्ध होती है। हिंसा है, उसे लड़ कर दबाओ और अहिंसक बनो। हिंसा को मिटाओ और अहिंसक बनो। अब यह प्रक्रिया समझने जैसी है। अगर कोई हिंसक चित्त हिंसा को दबाने की कोशिश करके अहिंसक बन जाए, तो ऊपर से वह अहिंसक होगा, भीतर से दबी हुई हिंसा उसमें सदा शेष रह जाएगी। वह हिंसा नए-नए रूपों में निकलनी शुरू होगी। उस हिंसा के बहुत नए-नए रूप होंगे। पहचाना बहुत मुश्किल हो जाएगा। इसलिए ठीक, सच्ची हिंसा ही बेहतर है झूठी अहिंसा के बजाय, क्योंकि धोखा बहुत है, पहचान में नहीं आती।

मेरे भीतर जो हिंसा है, अगर में इससे न लड़ूं तो लड़ेगा कौन मैं ही लड़ूंगा। हिंसा को दबाएगा कौन? मैं ही दबाऊंगा मैं, जो कि हिंसा हूं, मेरे दबाने में भी हिंसा होगी। मेरे हिंसा से लड़ने में भी हिंसा होगी। और मेरी वह जो हिंसा की वृत्ति है, वह जो दूसरों से लड़ती थी, अपनी ही हिंसा से लड़ कर नयी हो जाएगी। अपने से ही मैं लड़ूंगा।

दूसरों से जब कोई लड़ता है, तो हमें दिखाई देता है। लेकिन जब कोई अपने से लड़ता है, तो हमें दिखाई नहीं देता। अपने से लड़ना भी उतनी ही हिंसा है, जितना दूसरों से लड़ना हिंसा है। असल में लड़ने में ही हिंसा है। तो, जो व्यक्ति नैतिक रूप से अहिंसक बनने की कोशिश करेगा, वह लड़ेगा। जो व्यक्ति चेष्टा करेगा ब्रह्मचर्य धारण करने की, वह करेगा क्या? वह सेक्स से लड़ेगा? वह काम की वासना को भीतर दबाएगा? वह भीतर दब कर और अचेतन में बैठ जाएगा दिन भर वह ब्रह्मचर्य में रहेगा, रात स्वप्न में अब्रह्मचर्य आ जाएगा।

गांधीजी कहते थे कि जागते में तो मैंने काम पर विजय पा ली, लेकिन नींद में नहीं। नींद में, स्वप्न में, ब्रह्मचर्य स्खलित हो जाता टूट जाता, स्वप्न आ जाते हैं जो अब्र

ह्मचर्य के हैं। आएगी ही! इसमें गांधी का कसर नहीं, गांधीजी की प्रक्रिया का कसूर है।

दिन भर दबा सकते हैं आप! रात को कौन दबाएगा? आप सो गए हैं, दबाने वाला सो गया है, पहरेदार सो गया है। जिसे दबाया है, वह रात में बाहर निकलेगा, इस लिए साधु संन्यासी सोने से भी डरने लगते हैं, नींद से घबराने लगते हैं। अब नींद जैसी निर्दोष चीज भी डराने लगती है, क्योंकि दिन भर जिस दबाया है, वह नींद में लौट आता है। वह कहीं जाता नहीं, वह भीतर छिप जाता है। वह कहता है अभी नहीं, मौका मिलेगा तक निकल आऊंगा।

जो भीतर छिप जाता है, उसकी प्रक्रिया बड़ी छिपी हो जाती है। वह नए-नए शास्त्रों से दूसरों को सताने और दबाने के मार्ग खोजने लगता है। लेकिन अच्छे रास्ते भी है सताने के, जिनको हम अच्छे लोग कहते है, वे अच्छे रास्ते से सताते हैं। वे ढंग से सताते हैं और उनका सताना इतना धार्मिक ढंग का होता है कि पकड़ना भी मुश्किल हो जाता है। वे सता रहे हैं, अपने को भी सताते हैं, दूसरों को भी सताते हैं।

एक आदमी को भूखा मारने में हम कहेंगे हिंसा है। और खुद उपवास करके भूखे मरें तो हम कहेंगे तपश्चर्या है। आत्महिंसा तपश्चर्या हो जाती है। अपने पर हिंसा करना तपश्चर्या हो जाती है। अपने को सताना तपश्चर्या हो जाती है।

दो तरह के हिंसक लोग हैं। अंग्रेजी में दो शब्द हैं सैडिस्ट मेसोयिस्ट! सैडिस्ट उसे कहते हैं, जो अपने को सताए। आत्म पीड़क और परपीड़क, दो तरह की हिंसाएं हैं। लेकिन हम आत्मपीड़क हिंसा को अहिंसा समझे बैठे हैं। पहचान मुश्किल हो जाती है। यह आत्मपीड़क हिंसा ही है, और खतरनाक भी है।

डा. अंबेडकर के खिलाफ गांधी जी ने अनशन किया था। वे कहते थे कि मेरे अनशन से दूसरे का हृदय परिवर्तन होगा, लेकिन कभी हुआ नहीं। पूरे उनके जीवन में किसी का हृदय परिवर्तन हुआ, ऐसा दिखाई नहीं पड़ा। अनशन उन्होंने बहुत बार किए, हृदय परिवर्तन किसी का भी नहीं हुआ।

अंबेडकर के खिलाफ किया। हुआ? और अंबेडकर, गांधीजी मर न जाए इसलिए झुके—झुकने को राजी हो गए, लेकिन अंबेडकर ने बाद में कहा, मेरा कोई हृदय परिवर्तन नहीं हो गया और न मैं इस बात से राजी हो गया हूं कि गांधीजी जो कहते हैं, वह ठीक है। मैं तो सिर्फ इस बात से झुक गया हूं कि नाहक मेरे ऊपर गांधीजी की हत्या का बोझ न पड़े।

गांधीजी आत्महत्या करने की तैयारी दिखा देते जल्दी से और उसे सत्याग्रह कहते। असल में कोई भी आग्रह, सत्य का कभी होता ही हनीं। सब आग्रह सत्य को होते हैं। आग्रह में ही असत्य छिपा हुआ है। जब मैं कहता हूं, आग्रहपूर्वक, कि ऐसा उसे भी करना पड़ेगा, तभी हिंसा शुरू हो जाती है। दूसरे को दबाने की चेष्टा ही हिंसा है, लेकिन कोई अपने को भी दबा सकता है।

समाधि वहां ले जाती है जहां मन ही शून्य हो जाता है—जहां से हिंसा उठती थी, वह आधार ही गिर जाता है! ऐसा नहीं है कि हिंसा के विपरीत अहिंसा पैदा हो जात

ी है। नहीं, हिंसा के न रह जाने पर अहिंसा शेष रह जाती है। इसलिए अहिंसा नकारात्मक शब्द है। अहिंसा का मतलब है, जहां हिंसा नहीं है।

स्मरण रहे—इसका कुल मतलब इतना है कि जहां हिंसा खो गयी है, वहां जो शेष रह गया है, वह अहिंसा है।

लेकिन हमारी प्रक्रिया उल्टी है। क्रोधी आदमी अक्रोधी होने की कोशिश करता है। हिंसक अहिंसक होने की कोशिश करता है। चोर अचोर होने की कोशिश कर रहा है। बेईमान ईमानदार होने की कोशिश कर रहा है। अब बेईमान ईमानदार होने की कोशिश में भी बेईमानी कर जाएगा। वह बेईमान है। हिंसक अहिंसक होने की कोशिश में ही हिंसा देखा देगा। क्रोधी अक्रोधी होने की चेष्टा में ही क्रोध को पूरा का पूरा प्रकट कर लेगा। लेकिन पहचान मुश्किल होती है।

पहचान मुश्किल होती है, क्योंकि हम इतना दबा सकते हैं अपने भीतर, कि हमें खुद भी पता न रह जाए कि हमने कहां दबा दिया? लेकिन मौके-बेमौके निकल सकता है।

गांधीजी निरंतर कहते थे कि मेरा कोई वाद नहीं है। मेरा कोई सिद्धांत नहीं है। गांधीवाद जैसी कोई चीज नहीं है। बड़ी विनम्र बात थी। और हमें लगता था कि विनम्रता से ही बात कही जा रही है।

करांची में एक कान्फरेन्स हो रही थी और गांधीजी वहां बोल रहे थे। वहां कम्युनिस्टों ने काले झंडे दिखाए और गांधीवाद मुर्दाबाद के नारे लगाए। गांधी माइक पर बैठे थे निरंतर। तो जब भी कोई कहता था, गांधीवाद, तब वे कहते थे गांधीवाद जैसी कोई चीज नहीं। लेकिन उस दिन जब लोगों ने गांधीवाद मुर्दाबाद के नारे लगाए। और काले झंडे दिखाए, तो उनके मुंह से निकल गया, गांधी मर सकता है, लेकिन गांधीवाद अमर है।

अचेतन में जो छिपा था, वह प्रकट हो गया। वह कहीं भीतर कोने में दबा था। उसका पता चलना मुश्किल है। कुछ भी पता नहीं चलता हमारे मन के कोने का, कि कहां कौन सी बात छिपी है। वह किसी मौके पर निकल सकती है। किसी क्षण में अगर पहरा न हो, तो अचानक निकल सकती है। गांधी जी की जिंदगी को बहुत ठीक से समझ लेना उपयोगी है। गांधीजी की जिंदगी एक बड़ा असफल प्रयोग है—महान असफल प्रयोग।

प्रयोग बहुत ही बड़ा है, लेकिन उतनी ही बड़ी सफलता भी है। और समझ लेना इसलिए जरूरी है, ताकि अहिंसा की हमारी जो भ्रांत धारणा है, वह मिटा जाए। अहिंसा आप साध नहीं सकते। साधेगा कौन? हिंसा अहिंसा को कैसे साधेगा? हिंसक कुछ भी करेगा, उसमें हिंसा मौजूद रहेगी।

हिंसक मिट जाए, विलीन हो जाए, तो शायद जो शेष रह जाए वह अहिंसा होगी।

मैंने गुना है—एक गांव में एक आदमी था बहुत क्रोधी, इतना क्रोधी कि उसने अपनी पत्नी को धक्का देकर मार डाला। फिर पछताया क्रोधी भी पछताया है। सच तो यह है कि क्रोधी ही पछताते हैं। जिसने क्रोध नहीं किया, वह क्यों पछताएगा? और प

छतावा जो है, वह क्रोध के विपरीत नहीं है। पछतावा जो है, वह क्रोध पर! जहां ह
मने शुरू किया था क्रोध, वहीं वापस लौट जाने का है उसी स्थान पर, ताकि फिर क्र
ोध किया जा सके। पछताया तरकीब है क्रोध के वापस लौटने की। अगर मैंने आपको
गाली दी है, तो माफी मांग आया हूं। तब आप समझ जाए अब फिर मैं तैयारी क
र रहा हूं कि पुराने संबंधों पर लौट आऊं, ताकि मैं फिर गाली दे सकूं। न मुझे पता
है, न आपको पता। लेकिन हम वापस लौट रहे हैं उसी स्थान में, जहां गाली देने
के पहले थे ताकि फिर से गाली दे सकूं। मैं वहीं लौट जाऊंगा। वापस।कोई बुद्धिमान
आदमी कभी नहीं पछताता, सिवाय निर्बुद्धियों के। क्योंकि पछताने से कुछ मिटता
नहीं है। पछताने से सिर्फ एक पुरानी स्थिति पर लौट जाते हैं। फिर वही करते हैं, ि
फर पछताते हैं, फिर वही करते हैं, फिर पछताते हैं। जिंदगी भर वह रोग की तरह
चक्कर काटता रहता है। पछतावा की क्रोध का हिस्सा है। वह आदमी बहुत पछता
या। पत्नी मर गयी थी। इतना उसने सोचा भी न था। धक्का दिया था, तब यह नह
ीं सोचा था कि मार ही डालना है। अक्सर हम नहीं सोचते कि क्या परिणाम होंगे।
परिणाम हो जाते हैं, तभी पता चलता है। दुखी हुआ। गांव में एक मुनि आए थे, अ
ाकर उनके चरणों को पकड़ लिया। उसने कहा, मुझे बचाओ, मेरी जीवन का क्या ह
ोगा? मैं तो नर्क का रास्ता तय कर रहा हूं। पत्नी को धक्का देकर मैंने मार डाला।
मैं कैसे क्रोध से मुक्त हो जाऊं?

तो, साधु संन्यासियों के पास और कोई रास्ता नहीं—उनके पास एक ही रास्ता है।
उन्होंने कहा कि संसार दौड़ दे। जैसे कि संसार छोड़ने से क्रोध क्रोध से मुक्त हो जा
ता है! अब तक तो ऐसा हुआ नहीं। संसार छोड़ने वाले लोगों की अगर कभी जांच
पड़ताल की जाए, तो वे संसार में रहने वाले लोगों से अक्सर ज्यादा क्रोधी सिद्ध हों
गे। क्योंकि यहां तो रोज-रोज क्रोध के,निकल जाने के भी उपाय रहते हैं, तो क्रोध
इकट्ठा नहीं हो पाता; वहां मौके ने होने की वजह से क्रोध इकट्ठा होता जाता है। ऋ
षि मुनियों की हम जो कथाएं पढ़ते हैं महाक्रोध की, दुर्वासा की, अभिशाप की, वह
बड़ी ठीक है। ऋषि मुनियों के लक्षण यही हैं। क्रोध को रोकेंगे, इकट्ठा हो जाएगा।
कहा मुनि ने कि तू त्यागी हो जा, छोड़ दे सब, संन्यासी हो जा। संसार में क्रोध से
मुक्त कैसे होगा? वह आदमी तो क्रोधी था। क्रोधी का मतलब यह है कि क्षण में भ
ावाविष्ट होकर कुछ भी कर लेना। अपनी पत्नी को धक्का दे सकता है, अपने को भ
ी धक्का दे सकता है। उस आदमी ने वहीं कपड़े फेंके और नंगा खड़ा हो गया, उसने
कहा कि मैंने छोड़ा संसार।

उस मुनि ने कहा कि तेरे जैसा संकल्पवान आदमी मैंने नहीं देखा, बहुत लोगों ने स
मझाया—छोड़ो! ये कहते हैं—कल छोड़ेंगे, परसों छोड़ेंगे! तू महान आत्मा मालूम होता
है। मुनि भी नहीं समझे कि महान आत्मा नहीं है। मुनि न समझो। जो एक क्षण में
पत्नी को कुएं में धक्का दे आया, वह एक क्षण में अपने को भी संन्यासी में धक्का
दे सकता है। क्रोध का ही रूप है वह भी, लेकिन क्रोध के इस रूप को पहचानना
मुश्किल है; क्योंकि इसने बड़े सुंदर वस्त्र पहन लिए हैं। वह आदमी संन्यासी हो गया,

और मुनि के बहुत शिष्य थे, लेकिन उसके मुकाबले कोई भी न रहा। क्योंकि शिष्य अगर छाया में बैठे थे, तो वह सदा धूप में खड़ा होता और शिष्य अगर दो बार भोजन करते, तो वह एक बार ही भोजन करता। और शिष्य अगर छह घंटे सोते, तो वह दो घंटे सोता और शिष्य अगर बंधे हुए रास्ते पर चलते, तो वह नीचे कांटों के रास्ते पर चलता। उसकी ख्याति फैलने लगी। गुरु फीका पड़ने लगा और उसकी तपश्चर्या की ख्याति फैलने लगी। असल में जिसको हम तप कहते हैं, वह क्रोधी ही कर सकता है, कोई शांत चित्त आदमी उस तरह की नासमझियां नहीं कर सकता, करने का कोई कारण नहीं।

वह आदमी था क्रोधी, लेकिन महातपस्वी हो गया। दूर-दूर तक उसकी ख्याति पहुंच गयी। लोग दूर-दूर से उसके चरणों में नमस्कार करने आने लगे। और जितना ही आदर मिलने लगा, उतना ही उसका तप बढ़ने लगा। तप के लिए आदर पक्का भोजन है। बिना आदर के तप नहीं बढ़ता, बढ़ ही नहीं सकता; क्योंकि तप बढ़ाने के लिए अहंकार चाहिए और आदर अहंकार को मजबूत करना है, भरता है। कहता है, तुम कहो महान!

एक आदमी को यह खयाल पैदा कर दो कि तुम हो महान! फिर उससे कोई भी मूढ़ता करवाई जा सकती है। ऐसी कोई मूढ़ता नहीं है, जो उससे न करवाई जा सके। अहंकार फिर कुछ भी करने को राजी हो जाता है। फिर वह सिर के बल शीर्षासन करता है, वह कुछ भी कर सकता है।

वह आदमी कुछ भी करने लगा, उसकी देह सूख कर कांटा हो गयी। लेकिन अब वह किसी पर क्रोध नहीं करता था, क्योंकि क्रोध की जो उष्णता, जो शक्ति थी, वह अपने पर ही निकली जा रही थी। वह अपने को ही इतना सता रहा था कि अब और किसी को सताने का कोई कारण नहीं रह गया था। सताने की जो वृत्ति है, उसकी तृप्ति हो रही थी। अपने को ही सता कर हो रही थी। सब तरह के दुख अपने को ही दे रहा था।

फिर वह किसी देश की राजधानी में पहुंचा बचपन का उसका एक मित्र, उस राजधानी में रहता था।उस मित्र ने सुना कि महाक्रोधी मेरा साथी महान तपस्वी हो गया। उसे बड़ा विरोध दिखाई पड़ा। इन दोनों बातों में बड़ा विरोध है। वास्तव में विरोध है नहीं! मन के सत्य को जो जानते हैं, वह जानते हैं, इसमें विरोध है नहीं! महाक्रोधी ही महातपस्वी हो सकता है, लेकिन उस मित्र को बड़ा चमत्कार मालूम हुआ। यह कैसे हुआ है? वह दर्शन करने गया।

तपस्वी का मंच धीरे-धीरे ऊंचा होता गया था। जैसे-जैसे तप बढ़ा, वैसे-वैसे मंच के पैर बड़े होते चले गए। तपस्वी बड़े मंच पर बैठा था। मित्र पहुंचा, तपस्वी ने पहचान तो लिया कि बचपन का साथी है, लेकिन जब क्रोध मंच पर आसीन हो जाए, तो मंच के नीचे के लोगों को कभी नहीं पहचानता। कैसे पहचाने? उस पहचानने में भी बड़ी हीनता है। उसमें यह खबर है कि कभी हम भी तुम्हारे जैसे ही नीच थे, साथी थे, मित्र थे। देख तो लिया था मित्र को, लेकिन पहचाना नहीं। मित्र भी समझ गय

ा कि देख तो लिया है, पहचान भी लिया है, लेकिन पहचान नहीं रहा है। मित्र पास जाकर बैठ गया और उस मित्र ने कहा, महाराज! मैं आपको नाम जानना चाहता हूं।

मुनि ने क्रोधी होने की वजह से और क्रोध के विपरीत दीक्षा ली थी, उसको शांति नाथ का नाम दे दिया था। मुनि ने नीचे आग सी जलती हुई आंखों से देखा आर कहा, अखबार नहीं पढ़ते हो? रेडियो नहीं सुनते हो? मेरा और नाम? नाम मेरा पता नहीं है? मेरा नाम है मुनि शांतिनाथ! लेकिन उनके कहने में ही पूरी अशांति मौजूद थी।

उस मित्र ने कहा, कोई फर्क तो मालूम नहीं होता, लेकिन फिर जगत में सब चमत्कार हो जाते हैं। मित्र थोड़ी देर चुप रहा, फिर आत्मज्ञान वगैरह की बातें चलती रहीं, जैसा कि मुनियों के पास चलती रहती हैं।

फिर थोड़ी देर बाद, दो चार मिनिट के बाद, मित्र ने कहा, माफ करिए, मैं भूल गया, आपने क्या नाम बताया?

तब तो क्रोध की सीमा न रही। एक तो जानता है मुनि भली भांति, कि परिचित है, बचपन का साथी है। मुनि ने कहा, क्या कहां? सुना नहीं? बहरे हो? मेरा नाम है मुनि शांतिनाथ! ठीक से सुन लो।

फिर आत्मज्ञान की बात चलने लगी। फिर उस मित्र ने थोड़ी देर बाद कहा, माफ करिए, नाम तो मैं भूल ही गया।

फिर तो मुनि ने डंडा उठा लिया।और मुनि ने कहा—ऐसे न मानोगे!

तो उसने कहा, अब पहचान गया, अब कोई कठिनाई नहीं है। मैं बड़ी दुविधा में पड़ गया था कि तुम और मुनि कैसे हो गए। अब मेरी शंका दूर हुई। समाधान हो गया। अब मैं जाता हूं। तुम वही हो, कुछ फर्क नहीं हुआ।

क्रोध, क्रोध को मिटाने की कोशिश से सिर्फ दब सकता है, मिट नहीं सकता। हिंसा! हिंसा को मिटाने की कोशिश से सिर्फ आत्म सूख हो सकता है, वह मिट नहीं सकती। ब्रह्मचर्य! काम को दबाने की कोशिश से वह सिर्फ मानसिक व्यभिचार बन सकता है, और कुछ भी हनीं। फिर क्या रास्ता है? रास्ता है—रास्ता यह है कि हमारा आमूल रूपांतरण हो। परंतु हम एक-एक हिस्से को बदलने की कोशिश करें।और आमूल रूपांतरण है समाधि। हम सिर्फ उसको जानने में लग जाए जो हमारे भीतर गहरे से गहरे में छिपा है। हम उसकी भी बहुत फिकर न करें कि हम कैसे कपड़े पहनते हैं, कैसा क्रोध करते हैं, कैसा भोजन करते हैं, कैसा आचरण करते हैं। हम इस परिधि पर न भटकें। हम तो उसे खोजने में लग जाए, जो भीतर छिपा है, गहरे से भी गहरे में। क्रोध के भी गहरे में जो बैठा है, हम उसकी खोज करें।

लोभी के भीतर भी परमात्मा उतना ही मौजूद है,जितना निर्लोभी के भीतर! और क्रोधी के भीतर भी परमात्मा उतना ही मौजूद है, जितना अक्रोधी के भीतर। परमात्मा की मौजूदगी में फर्क नहीं है। हम कैसे भी आदमी हो, हमारे भीतर वह परम ज

योति मौजूद हैं। हम उसकी झलक की चिंता करें, उसे हम पहचानने की चिंता करें।

समाधि उसे पहचानने का मार्ग है। और जिस दिन उस ज्योति को पहचान लेते हैं, उसी दिन सब बदल जाता है; क्योंकि उस दिन के बाद हम वही आदमी नहीं हो स कते, जो हम उसके पहले थे। क्यों? क्योंकि बड़ा बुनियादी फर्क पड़ जाता है।
एक आदमी छोटी-छोटी बातों में क्रोधित होता है। क्यों? क्योंकि उसने कभी शांति नहीं जानी।अगर वह एक बार शांति को जान ले तो उसके लिए क्रोध करना असंभव हो जाएगा।
बुद्ध एक घर में ठहरे हुए हैं। एक आदमी ने आकर उन पर थूक दिया है। उन्होंने थूक साफ कर लिया और उस आदमी से कहा और कुछ करना है? उस आदमी ने कहा, मैंने आपके ऊपर थूका है, आप क्रोधित न होंगे? बुद्ध ने कहा, दस साल पहले आते, जब मैं क्रोधित होता था। तुम बड़ी देर करके आए। उसने कहा, अभी क्या ि बगड़ा है? मैंने आपके ऊपर थूका, आप क्रोधित हो जाए। बुद्ध ने कहा,तुम्हारे क्रोध को तो मैंने चादर से पोंछ कर ही अलग कर दिया। मेरे भीतर जो अखंड शांति विर ाजमान हुई है, वह तुम्हारे थूकने से नहीं हट सकती। तुम्हारा थूकना वहां तक पहुंच ता ही नहीं। तुम कुछ भी करो, तुम वहां तक नहीं पहुंचते हो। जब मैं खुद वहां नह ीं था और घर के बाहर ही घूमता था, तब थूक मेरे तक पहुंच जाता था। क्योंकि मैं भी घर के बाहर,तुम्हारा थूक भी घर के बाहर। जब से मैं मिट गया हूं, तब से तुम्हारा थूक, मुझे मीलों फासले पर पड़ा हुआ दिखाई पड़ा हुआ दिखाई पड़ता है। ि जससे मेरा कोई लेना देना नहीं।
थूकने की व्यर्थ मेहनत की, तुम गलत, आदमी के पास आ गए। कोई ठीक आदमी खोजो।
वह आदमी बड़ी मुश्किल में पड़ गया होगा। लौटा गया, परंतु, रात भर सो न सका होगा। दूसरे दिन क्षमा मांगने आया। बुद्ध के पैरों पर सिर रख कर रोने लगा, क्षम ा कर दें।
बुद्ध ने कहा, क्षमा करूं? तो मतलब होगा, मैंने क्रोध भी किया था। क्रोध मैंने किया नहीं, सिर्फ दया खायी थी कि कैसे पागल हो! किसलिए थूक रहे हो? क्रोध तो कि या नहीं! क्योंकि क्रोध करने का कोई कारण नहीं है। अब मैं समझ गया हूं कि दूसरे की भूल के लिए अपने को दंड देना पागलपन है। तूम थूको, मैं क्रोधित होकर आग में जलूं, मैं ऐसा पागल नहीं हूं। मैं जिंदगी के गणित को समझ गया हूं। तुमने की है भूल, तुम जानो। मैं क्यों क्रोधित होऊं? तो बुद्ध बाद में कहते थे कि क्रोध करना , दूसरों की भूल के लिए अपने को दंड देना है। लेकिन यह कब दिखाई पड़े? यह तब दिखाई पड़े, जब भीतर की शांति का आकाश खिल जाए। तब फिर ऐसा नहीं है कि क्रोध छोड़ना पड़े। नहीं, क्रोध तो टूट जाता है। ऐसे ही, जैसे किसी आदमी के हाथ में रंगीन कंकर-पत्थरों को बोझ हो, मुट्ठी बोझ को पकड़े हो, फिर उसे हीरों की खदान मिल जा, और उसे पता न चले कि मुट्ठी कब खाली हो गयी, पत्थर नी

चे गिर गए और हीरे उसने भर लिए। तो क्या हम कहेंगे, तुम बड़े त्यागी हो, तुम ने पत्थर छोड़ दिए?

नहीं, त्यागी तो वह तब होता, जब पत्थर पकड़े ही रहता और हीरे की फिकर न करता। जब हीरे की खदान मिल जाए तो पत्थर छूट जाते हैं, छोड़ने नहीं पड़ते। जब भीतर की शांति का अनुभव हो जाए तो बाहर की अशांति के उपाय छूट जाते हैं, छोड़ने नहीं पड़ते। और जब भीतर एक आनंद की किरण फूट जाए, तो सेक्स से, काम से मिलने वाला सुख दुख जैसा हो जात है, उसका कोई अर्थ नहीं रह जाता। इसलिए कोई काम के सुख को तब तक नहीं छोड़ सकता, जब तक समाधि के सुख, को न पाले। और कोई हिंसा को तब तक नहीं छोड़ सकता, जब तक कि भीतर के अद्वैत को न पाले। और बाहर की संपत्ति के भार को कोई तब तक नहीं छोड़ सकता, जब तक भीतर की संपदा उपलब्ध न हो जाए।

तो मैं यह कह रहा हूं कि प्रक्रिया बिलकुल उल्टी है—जैसा हम सोचते हैं, वैसी नहीं है। प्रक्रिया यह है कि पहले परमात्मा मिले, तो संसार छूटता है। संसार छोड़ कर कोई परमात्मा को नहीं पा सकता। संसार छोड़ कर सिर्फ मुसीबत में पड़ जाना होता है, परमात्मा मिलता नहीं और संसार छूट जाता है। उसकी हालत त्रिशंकु सी हो जाती है। वह बीच में लटक जाता है। क्योंकि कंकर पत्थर भी दौड़ दिए उसने, और हीरे की खदान का कोई पता नहीं है, हाथ खाली हो गए; इसलिए यह भरे हाथों पर नाराज होता रहता है।

जिनके हाथ भरे हैं, कंकर पथर से ही, उन्हें वे गाली देते रहते हैं जिनके हाथ खाली हैं। कहते हैं—नर्क जाओगे, नर्क का इंतजाम कर रहे हो, करो तुम भी हाथ खाली! वह असल मग यह कह रहा है कि हम ही परेशानी में नहीं पड़े हैं, और लोग भी पड़ जाए, तो कम से कम आश्वासन तो आ जाए कि हम कुछ गलत नहीं कर रहे हैं।

कितने संन्यासी ने मुझे एकांत में यही कहा है कि कई बार ऐसा होता है कि कहीं हमने भूल तो नहीं कर ली। कई बार ऐसी मन में आता है, जो था वह तो छूट गया, लेकिन मिला तो कुछ भी नहीं?

संन्यासी जो क्रोध दिखा रहा है संसार पर और निंदा कर रहा है, उसका मनोवैज्ञानिक कारण है। उसका कारण यह है कि निंदा करके वह एक सुख ले रहा है कि कोई फिकर नहीं, अगर हाथ खाली हैं, तो कोई फिकर नहीं, स्वर्ग में हमारे हाथ भरे होंगे और तुम नर्क जाओगे। तो वह संसार को गोली दे रहा है, सुबह से शाम तक। उनकी निंदा कर रहा है। यह जो पापी और निंदा करने का जो रस है, उसे रस इसलिए है कि वही उसके पास है, अब और कोई रस उसके पास नहीं है।

जिस व्यक्ति को उसकी, आनंद की झलक मिल गयी हो, वह संसारी को पापी नहीं कहेगा। वह संसारी को प्रति निंदा से नहीं, अत्यंत करुणा से, भर जाएगा और सोचेगा—कैसे पागल हो! हरे की खदान पास है, तुम कंकर पत्थर पकड़े बैठे हो?

लेकिन वह यह भी नहीं कहेगा कि कंकर पत्थर छोड़ दो। वह कहेगा—आओ हीरे की खदान पर आ जाओ। कंकर पत्थर तो छूट जाएंगे, कंकर पत्थर किसको पकड़ सकते हैं? असली धन न मिले, तो नकली धन पकड़ना पड़ता है। लेकिन, हमें उनके बार ऐसी भांति होती है कि पहले भरा छोड़ना पड़ेगा। इस भांति का भी मौलिक कारण है, वह भी समझ लेना चाहिए।

अगर महावीर को, बुद्ध को एक आत्मिक आनंद मिला है, अगर भीतर समाधि मिल ी है अगर परमात्मा का मिलन हुआ है, तो उनका भीतर तो हमें दिखायी नहीं देता । उनका अंतस्तल तो हमारी आंखों की पकड़ में नहीं आता। उनके भीतर क्या हुआ , हमें पता नहीं। उनके बाहर क्या हुआ है, वही हमें दिखायी पड़ता है। उनकी घटन ा, घटना है। पहले भीतर फिर बाहर और हमें दिखाई पड़ता है बाहर पहले, और ि फर हम भीतर का अनुभव करते हैं।

उदाहरण महावीर ने वस्त्र छोड़ दिए। वे नग्न हो गए। उन्होंने संपत्ति छोड़ दी। घर छोड़ दिया, वे अपरिग्रही हो गए। हमें पता नहीं है कि उनके भीतर क्या हुआ। हम देखें भी तो कैसे? जो अपने भीतर भी देख नहीं पाते, वे महावीर के भीतर कैसे दे ख पाएंगे? और जो अपने ही भीतर देख लेंगे, वे महावीर की पंचायत में क्यों पड़ेंगे कि उनके भीतर देखने जाए।

हम अपने ही भीतर नहीं झांक पाते, तो महावीर के भीतर झांकना तो असंभव है, ि फर हमें महावीर का बाहर दिखाई पड़ता है। दिखाई पड़ता है कि महावीर नग्न हो गए। दिखाई पड़ता है महावीर ने घर छोड़ दिया, दिखायी पड़ता है महावीर ने धन छोड़ दिया, दिखाई पड़ता है महावीर हिंसा नहीं करते, दिखाई पड़ता है महावीर क्रो ध नहीं करते! यह सब हमें दिखाई पड़ता है और फिर महावीर की आंखें दिखाई प. डती है, महावीर का चेहरा दिखाई पड़ता है। और उसकी ऊपरी सीमा शांत मालूम होती है और वे किसी अनूठे आनंद में नाचते और जाते मालूम होते हैं और वे किस ी अनूठे आनंद में नाचते और जीते मालूम होते हैं। यह सब दिखाई पड़ता है, तो ह म सोचते हैं शायद हम भी कपड़ा छोड़ दे, घर छोड़ दें, धन छोड़ दें, तो हमें भी श ांति मिल जाए! उल्टी हो गयी तब तो बात।

वैसी शांति मिली इसलिए वे घर छोड़ सके। हम घर छोड़ेंगे सोचते हैं वैसी शांति ि मल जाए, उल्टा हो गया, एकदम उल्टा हो गया। यह ऐसा हो गया, जैसे गेहूं, बोए, तो भूसा पैदा हो जाता है। लेकिन कोई आदमी भूसे को बो दे, तो फिर गेहूं पैदा न हीं हो जाता। गेहूं के साथ भूसा अपने आप पैदा हो जाता है, लेकिन भूसे के साथ गे हूं पैदा नहीं होता। अगर भूसे को आप बो दें, खेत में, तो भूसा ही खराब हो जाएग ा—गेहूं तो नहीं आएगा भूसा भी नहीं आएगा—कुछ भी नहीं आएगा।

तो महावीर का भूसा दिखाई पड़ता है गेहूं दिखाई नहीं पड़ता। जो बाहर लिपटा हुअ ा है, वही दिखाई पड़ता है। हम भी भूसा बोने में लग जाते हैं। ये जो हम तपस्वी, साध है, इनके निन्यानबे प्रतिशत लोग भूसा बोते रहते हैं, और बड़ी मुश्किल में पड़ जाते हैं! न गेहूं पैदा होता है, न भूसा पूछा होता है। जो पास में था, वह भी चला

जाता है। कौन है पात्र! जो भूसा बोकर और गेहूं पैदा कर दे। लेकिन वे कहेंगे हमारी पात्रता नहीं है, अधिकारी नहीं है वे कहेगा, शायद पिछले जन्मों के कर्म बाधा डाल रहे हैं। यह तो जन्म-जन्म के कार्य का मामला है। या वे और तरह के लोग होंगे, तो कहें जब भगवान की कृपा होगी! उसकी कृपा के बिना कुछ भी नहीं होता। प्रभु की कृपा से भी अभी तक भूसे से गेहूं पैदा नहीं हुआ और आगे भी आशा नहीं है कि भगवान कुछ ऐसी कृपा करें। और जिस दिन कृपा करेगा, तो समझ लें कि दिमाग उसका खराब हो गया।

नहीं, भूसे से गेहूं पैदा होगा ही नहीं। नहीं यह नियम ही नहीं है। लेकिन भूसा दिखाई पड़ता है पहले और इससे सारी भ्रांति हो जाती है। हम सभी, लोग सत्य की किरण को उपलब्ध होते हैं, उनके बाहर घूम आते हैं, चारों तरफ देख आते हैं। अभी मैं एक गांव में मेहमान था। उस गांव का कलेक्टर मुझसे मिलने आया। उसने कहा, एकांत में बात करना है। कलेक्टर पढ़ा लिखा आदमी था। अंदर आया, दरवाजा लटका दिया और मुझसे बोला कि आपसे दो चार-पांच संवाद पूछने हैं। पहला तो यह कि मैं भी आप जैसी चादर ओढ़ने लगूं तो कुछ शांति मिलेगी?

यह पढ़ा लिखा आदमी! एक गांव का ग्रामीण पूछे तो क्षमा के योग्य है। एक कलेक्टर पूछ कि ऐसे कपड़े मैं पहन लूं तो शांति मिलेगी न! मैंने कहा, थोड़ी बहुत शांति होगी, तो वह भी खो जाएगी। क्योंकि इन कपड़ों में तो तुम मुसीबत में पड़ जाओगे। इन कपड़ों से शांति का कुछ संबंध ही नहीं है। तो उसने कहा, आपकी दिन चर्या बताइए। कब आप उठते हैं, मैं भी ऐसी दिनचर्या बना लूं तो वैसा ज्ञान नहीं होगा? मैंने कहा, दिनचर्या से क्या मतलब? सुबह पांच बजे उठेगा, बस उसे ही ज्ञान होगा? नौ बजे उठेगा उसे ज्ञान नहीं होगा? नौ बजे उठने से अगर ब्रह्मज्ञान में बाधा पड़ती हो तो ब्रह्मज्ञान बहुत कमजोर चीज हैं, और बहुत रूखी चीज है, क्योंकि जो पांच बजे उठता है उसे मिल जाती है, जो नौ बजे उठता है उसे नहीं मिलती! बचकानी बात!

कब उठते हैं? कब बैठते हैं? कब सोते हैं? क्या खाते हैं? क्या पीते हैं? इससे ब्रह्मज्ञान का क्या संबंध है? ढांचे को हम बैठा देते हैं। अपने पर, फिर उस ढांचे में हम फंस जाते हैं, क्योंकि जिनसे हमने ढांचा सीखा, बन के लिए वह कैद थी। उनके भीतर से कुछ आया था, जो बाहर फैल गया। बाहर का ढांचा हम ओढ़ लेते हैं, फिर फंस जाते हैं। इसलिए आमतौर से व्रत उपवास करने वाले बिलकुल मरे हुए, थर्ड ग्रेड के आदमी लगते हैं। ढांचा ऊपर से ओढ़ने वाले बिलकुल कार्बन कापी हो जाते हैं।

एक कहानी मुझे स्मरण आती है। एक घर में एक पति थक कर अपने आफिस से लौटा था और अपनी पत्नी को पानी लाने के लिए कहा। उतने ही क्षण में थकने के कारण वह सो गया। सुबह जब उसकी नींद खुली, तो पास खड़ी पत्नी को देखकर हैरान हो गया। उसने पूछा, पागल, तू यह क्या कर रही है? तुम यहां किसलिए खड़ी हो? वह तो भूल ही गया था कि उसने पानी मंगवाया था। उसने कहा, आप भू

ल गए? याद किया था पानी के लिए, मैं लेने गयी, तब तक आप सो गए। फिर मैं ने सोचा पता नहीं कब नींद खुलेगी, कब पानी की जरूरत पड़ जाए। तो मैं खड़ी र ही। जब जरूरत हो मैं पानी देकर सो जाऊं। फिर नींद नहीं खुली तो? इसीलिए मैं रुकी रही।

पति ने कहा, तू कैसी पागल है! लेकिन यह बात गांव भर में फैल गयी--राजा के क ान तक पहुंच गयी। राजा शाम को मिलने आया। उसने कहा, उस स्त्री का मैं दर्शन करना चाहता हूं, जो रात भर खड़ी रही। क्योंकि ऐसी स्त्रियां तो है जो पति को र ात पर खड़ा रखें, लेकिन क्या ऐसी स्त्रियां भी है, जो खुद रात भर खड़ी रहें? यह स्त्री कौन है? मैं दर्शन करने आया हूं। राजा जब दर्शन कर ने आया, तो पूरा गांव आ गया। किसी ने फूल चढ़ाया, किसीने भेंट दी, राजा एक बहुमूल्य हीरों का हार दे गया और उसने कहा, अगर ऐसा प्रेम अमर है, तो कुछ आशा बनती है।

पड़ोस की स्त्री को आग लग गयी। पड़ोस की स्त्री को कुछ काम ही नहीं है, सिवाय आग लग जाने को। पड़ोस की स्त्री ने कहा, इसमें बात ही क्या बड़ी है? पड़ोस की उस स्त्री ने अपने पति से कहा, इसमें है ही क्या? एक रात क्या, हम दस रात ख. डी रहें और आप ध्यान रखें। शाम को जब आओ, तो जरा देर से आना, थके मांदे आना। आते ही बिस्तर पर लेट जाना, एकदम से कह देना कि बहुत प्यास लगी है। जब पानी लेकर आऊं तो ध्यान रखें आंख बंद करके सो जाना। मैं रात भर खड़ी र हूं, फिर सुबह अफवाह फैला देंगे। और जब इतनी सी बात पर इतना बहुमूल्य हार मिल गया, तो हम क्यों चूके?

पति जैसे साधारणतः आज्ञाकारी होते है, यह पति भी आज्ञाकारी था। उसने आज्ञा मानी। सांझ को थका मांदा लौटा। थका मांदा तो नहीं था, लेकिन थका--मांदा प्रकट किया बाहर से। ऐसा आचरण किया, एकदम घर आकर श्वास जोर से लेने लगा, बिस्तर पर लेट गया, और कहा बड़ी जोर की प्यास लगी है! प्यास का कोई पता न हीं था।

पत्नी ने कहा, रुको! मैं अभी पानी ले आती हूं।

पत्नी भीतर गयी, पानी भर कर लायी। अभी नींद पति का आ नहीं रही थी, पर आंख बंद करके सो जाना पड़ा। रिचुअल, क्रिया-कांड जिसको कहते हैं। आंख बंद क रके पति सो गया। पत्नी थोड़ा दूर खड़ी रही, फिर उसने कहा, रात भर देखने वाल ा भी कौन है? सुबह-सुबह फिर खड़ी हो जाऊंगी, अफवाह ही तो उड़ानी है। तो ठी क ही सोचा।

जो दिमाग रिचुअल है वह चालाकी कर रहा है, धोखा दे रहा है! वह यही सोचेगा, ठीक है, जब इतना धोखा दिया जा रहा है, कि प्यास न लगी हो तो प्यास लग जा ए, थका न हो तो आदमी थका हो जाए, नींद न आए तो नींद लग जाए तो उस प त्नी ने सोचा--जब इतनी ही बस चल रहा है तो मैं क्यों रात भर खड़ी रहूं? गिला स रख कर वह सो गयी। उसने सोचा, सुबह जल्दी उठ कर वापस खड़ी हो जाऊंगी, मोहल्ले में खबर कर दूंगी। सुबह हुई, पति ने जाग कर देखा, उसकी पत्नी खड़ी न

हीं है। वह बेचारा वापस आंख बंद कर लेता, क्योंकि नियम, यम नियम का वह पा
लन कर रहा है। आखिर बड़ी देर होने लगी। धूप ऊपर आ गयी, तब पत्नी को उस
ने उठाया। पड़ोस में जाकर अफवाह भी उसने उड़वा दी। लेकिन सम्राट नहीं आया।
गांव से कोई नहीं आया। तब तो स्त्री बहुत क्रोध से भर गयी। सांझ को वह सम्राट
के द्वार पर पहुंच गयी। तब उसने क्रोध से भर गयी। सांझ को वह सम्राट के द्वार प
र पहुंच गयी। तब उसने कहा, अन्याय हो रहा है। जब एक का ऐसा सम्मान हो औ
र वही काम हम करें तो हमारा सम्मान न हो, तो आप कैसे सम्राट हैं? सम्राट ने
कहा, पागल! उसने सम्मान के लिए नहीं किया था, हो गया था। तूने सम्मान के लि
ए ही किया, इसलिए सब झूठा हो गया और वह मेरे द्वार नहीं आयी थी। तू तजो
मेरे द्वार पर ही आ गयी।

महावीर को, बुद्ध को, क्राइस्ट को, किसी को भी हुआ है। वे समाधि में डूबे हैं--अहिं
सा हुई है, प्रेम हुआ है, कृपा हुई है, यह उनका प्रयास नहीं है। और हम? हम सा
ध रहे हैं अहिंसा, साध रहे हैं--बैठ हैं, सुबह ये चर्खा कात रहे हैं, अहिंसा साध रहे
हैं अब!

संधि हुई अहिंसा बड़ी खतरनाक होती है, क्योंकि सधी हुई अहिंसा का मतलब है झू
ठी अहिंसा। जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, वह हैपनिंग की तरह होता है। उसे आप
साध नहीं सकते। तो यह जो मैंने कहा, मैं नहीं कहता हूं कि आप पहले अहिंसक
हो और फिर समाधि में जा सकते हो। मैं नहीं कहता पहले ब्रह्मचर्य साधे, फिर समा
धि सधेगी। हां! इतना मैं जरूर कहता हूं कि समाधि में डूबें। और समाधि कोई साध
ने की बात नहीं है। उसकी तरफ आंख भर उठ जाए। वह मौजूद ही है। हमारी संप
दा ही है। उसकी तरफ आंख उठ जाए तो आप पाएंगे, ब्रह्मचर्य फलित हुआ है। आ
प पाएंगे कि अपरिग्रह आ गया है। इनको लाना नहीं पड़ेगा। और ब्रह्मचर्य आता है,
तब सेक्स से बिलकुल संबंध नहीं रहता, तभी तो वह निर्दोष फलित होता है।
अहिंसक मत होना, मगर अहिंसक होना हो, ब्रह्मचारी मत बनना अगर ब्रह्मचर्य को
आने देता हो। अपनी चेष्टा से मत थोपना। समाधि में डूबे उसे लाने के लिए, और
कुछ भी न करें।

व्रत नियम के पक्ष में मैं नहीं हूं। ठीक ठाक विपक्ष में हूं। भूल से भी व्रत मत साधन
ा, अन्यथा जीवन में जो सहज आ सकता है, वह भी न आ सकेगा।

साधें कुछ नहीं, सिर्फ समझ लें। वह समझ भी ऐसी हो कि चेतना उतर जाए और
आपका निरंतर जागरण बन जाए। कुछ करें नहीं। बस वह प्रकट हो जाएगा। वह तो
है ही! यह होना ही साधना और समाधि बन जाए।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, इसके लिए अनुगृहीत हूं। और अंत में
सबके अंदर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन में अहोभाव

मैं एक नए बनते हुए मंदिर के पासूर से निकल रहा था। मंदिर की दीवालें बन गयी थीं। शिखर निर्मित हो रहा था। सैकड़ों मजदूर पत्थर तोड़ने में लगे थे। मैंने पत्थर तोड़ते एक मजदूर से पूछा, मित्र क्या कर रहे हो? उस मजदूर ने बहुत गुस्से से मुझे देखा और कहा, क्या आपके पास आंखें नहीं हैं? क्या आपको दिखाई नहीं पड़ता कि मैं पत्थर तोड़ रहा हूं। कोई क्रोध होगा उसके मन में, कोई निराशा होगी। और, पत्थर तोड़ना कोई आनंद का काम भी नहीं हो सकता।

मैं उस मजदूर को छोड़कर आगे बढ़ गया और दूसरे मजदूर से पूछा। वह भी पत्थर तोड़ रहा था। मित्र क्या कर रहे हो? उस मजदूर ने क्रोध से तो नहीं, लेकिन अत्यंत उदासी पूर्वक मेरी तरफ देखा और कहा, आजीविका कमा रहा हूं, बच्चों के लिए रोटी कमा रहा हूं। क्या आपको दिखाई नहीं पड़ता? वह भी पत्थर तोड़ रहा था; लेकिन उसने कहा बच्चों के लिए रोटी कमा रहा हूं। निश्चित ही केवल रोटी कमाना बहुत आनंद की बात नहीं हो सकती। उदास था और दुखी था, लेकिन फिर भी पत्थर तोड़ने वाले पहले मजदूर से भिन्न थी उसकी दशा क्रोधित नहीं था।

मैं और आगे बढ़ा और एक तीसरे पत्थर तोड़ने वाले से पूछा, मित्र क्या कर रहे हो? वह कोई गीत गुनगुना रहा था। उसने आंखें ऊपर उठाई। उसकी आंखों में किसी आनंद की झलक थी। उसने कहा, देखते नहीं है आप, भगवान का मंदिर बना रहा हूं? वह भी पत्थर तोड़ रहा था।

वे तीनों पत्थर तोड़ रहे थे—एक क्रोध से भरा था, एक उदासी से और एक आनंद से। वे तीनों एक ही काम कर रहे थे। लेकिन जो पत्थर तोड़ रहा था, वह क्रोध से भरेगा ही; क्योंकि जीवन तो पत्थर तोड़ने के लिए नहीं है! और जिनका जीवन पत्थर तोड़ने में ही नष्ट हो जाता है, वे अत्यंत क्रोधित हो उठते हों, तो आश्चर्य नहीं। दूसरा व्यक्ति क्रोधित तो नहीं था, लेकिन उदास था। क्योंकि जिंदगी रोटी कमाने में ही व्यतीत हो जाए, तो उदासी के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लग सकता। और वे लोग अभागे हैं, जो रोटी कमाने में ही अपना जीवन नष्ट करते हैं। लेकिन तीसरा व्यक्ति भगवान का मंदिर बनाना एक आनंद है। और धन्य हैं वे लोग जो जीवन में भगवान का मंदिर बनाने में समर्थ हो जाते हैं। इन तीन दिनों में, हम भगवान का मंदिर बनाने वाले कैसे बन सकते हैं, इस संबंध में ही थोड़ी बात आपसे करूंगा।

आज की पहली चर्चा में यह बातें बड़े दुख से मुझे कहनी पड़ती है कि पृथ्वी पर अधिकतम लोग या तो पत्थर तोड़ते हैं या ज्यादा से ज्यादा रोटी कमाते हैं। मुश्किल से कोई सौभाग्यशाली कभी भगवान का मंदिर बनाने में संलग्न हो पाता है। इसीलिए तो इतना दुख है, इतनी उदासी है! इतना क्रोध, इतना फ्रस्ट्रेशन, इतना विषाद है। लेकिन मनुष्य क्यों जीवन को भगवान का मंदिर नहीं बना पाता है? क्या कारण है कि जीवन एक आनंद नहीं हो पाता? जीवन एक नृत्य नहीं बन पाता? जीवन की वीणा पर संगीत पैदा नहीं हो पाता? जीवन एक दुख भरी रात क्यों है? जीवन के प्रकाश से भरा हुआ दिवस क्यों नहीं है? जीवन कांटों का मार्ग ही क्यों है? वह फू

लों की बगिया से गुजर जाना क्यों नहीं है? जीवन दुख और आंसू ही क्यों हो? एक आनंद और एक मुस्कुराहट क्यों नहीं है? कोई बुनियादी कारण होगा! और उस कारण में शायद एक व्यक्ति का सवाल नहीं है, पूरी मनुष्य जाति का सवाल है। किसी एक व्यक्ति की भूल नहीं। जैसे पूरी मनुष्य जाति कोई बुनियादी भूल कर रही है। उस पहली भूल पर ही मुझे आज बात कहनी है।

वह पहली भूल यह है--आज तक मनुष्य जाति के इतिहास में, मनुष्य के अगुवा और नेता होने वाले लोग, बीमार और रुग्ण रहे। मनुष्य जाति को अब तक स्वस्थ मस्तिष्क का नेतृत्व नहीं मिल सका है। मनुष्य को उन लोगों ने नेतृत्व दिया है जो अपने भीतर दुखी, रुग्ण, अस्वस्थ और विक्षिप्त थे। स्वस्थ व्यक्तित्व का नेतृत्व मनुष्य जाति को नहीं उपलब्ध हो सका। रुग्ण लोगों ने जीवन के पूरे कुएं को विषाक्त कर दिया है। वे स्वयं जीवन में जिस आनंद को नहीं पा सके, अपनी असमर्थता को उन्होंने जीवन की ही भूल समझना शुरू कर दिया।

उस लोमड़ी की कथा सबने पढ़ी है, जो अंगूर के गूच्छों को तोड़ने में संलग्न थी। बहुत उछली और कूदी, पूरी शक्ति लगायी। अंगूर के गुच्छे तो न पा सकी, लेकिन बहुत गरिमा और गौरव से, बहुत डिग्निटी से वापस लौट गयी और राह में जो लोग मिले, उसने कहा, मुझे क्या पता था कि अंगूर खट्टे हैं। मैंने सोचा था, अंगूर पक गए हैं, लेकिन निकट जाकर पता चला कि अंगूर खट्टे हैं। उन्हें तोड़ने में कोई सार नहीं।

मनुष्य जाति को भी ऐसे लोगों ने नेतृत्व दिया है, जिन्हें जीवन के अंगूर उपलब्ध नहीं हो सके और उन्होंने कहा--सारा जीवन खट्टा है। अन्यथा हम तोड़ने ही नहीं जाते। सचाई दूसरी थी। जीवन के रस से भरे फल वे उपलब्ध नहीं कर सके। लेकिन इस बात को स्वीकार करना कि जीवन के फल मुझे उपलब्ध नहीं हो सके हैं, इससे अहंकार को बड़ी चोट लगती है। इसीलिए दूसरा उपाय आसान है कि जीवन असार है और व्यर्थ है। आज तक मनुष्य के मन को जीवन की असारता की शिक्षा ने ही विषाक्त बनाया है। जमीन पर बहुत बड़ा विष फैलाने वाले लोग पैदा हुए हैं। जीवन के सारे कुओं में जहर घोल दिया गया है। यही समझाया जाता रहा है आज तक कि जीवन व्यर्थ है, जीवन दुख है। जीवन में करने जैसी एक ही चीज है और वह है जीवन से छूट जाना। आवागमन से मुक्त हो जाना।

झूठी हैं ये बातें और इनका कोई अर्थ नहीं। जीवन को छोड़ देने की बातें, जीवन को व्यर्थ कहने की बातें, जीवन को बुरा बताने की बातें, मनुष्य के मन में गहरी बैठा दी गयी हैं। और ऐसा चित्त प्रारंभ से ही इस जीवन को दुख मान लेता हो, अगर जीवन में आनंद पा सके, तो जिम्मेवार कौन है? हम सब जीवन में दुख से भरे हुए हैं। यह जीवन का दुख नहीं है। यह जीवन को देखने का हमारा गलत दृष्टिकोण है, जिसने जीवन को दुख से भर दिया है। जीवन बुरा नहीं है, हमारा मन विषाक्त है, हमारे मन रुग्ण हैं। जीवन में कांटे ही कांटे नहीं हैं, और जीवन ऐसा है कि उसे छोड़ देना ही, उससे मुक्त हो जाना ही, उससे भाग जाना ही एक मात्र लक्ष्य हो।

नहीं! ऐसा बताने वाले लोगों ने मनुष्य जाति के मन को अंधकारपूर्ण कर दिया है। ये ही लोग, जिन्होंने मनुष्य के जीवन की निंदा की है, जीवन अनुभव करने की क्षमता कम किया है। पात्रता को कम करने वाले लोग भी हैं, लेकिन इनकी शिक्षा का प्रभाव रहा है।जीवन विरोधी शिक्षाओं के प्रभाव ने ही मनुष्य की यह विकृत दशा कर दी है।

एक चर्च में एक सुबह—उस चर्च के धर्मगुरु ने सुनने वाले लोगों से कहा। हो सकता है, आप भी वहां मौजूद रहे हो, शायद आपने यह बात सुनी भी हो। उस धर्मगुरु ने यह कहा कि मेरे मित्रो, आपमें से कितने लोग स्वर्ग जाना चाहते हैं? जो स्वर्ग जाना चाहते हैं, अपने हाथ ऊपर उठाए। धर्मगुरु ने सोचा था, सभी लोग हाथ उठा देंगे। करीब-करीब सभी लोगों ने हाथ ऊपर उठाए थे। लेकिन सामने बैठा हुआ एक व्यक्ति हाथ नीच ही कि रहा। सभी स्वर्ग जाना चाहते थे। धर्मगुरु बहुत आश्चर्य हुआ—क्या ऐसा भी कोई हो सकता है, जो नर्क में जाना चाहता है! फिर उसने कहा कि अब आप अपने हाथ नीचे कर लें और अब मैं पूछता हूं कि जो नर्क जाना चाहते हैं, वे अपने हाथ ऊपर उठाए। एक भी आदमी ने हाथ नहीं उठाया। उस आदमी ने भी नहीं। जिसने स्वर्ग जाने के लिए हाथ नहीं उठाया था। धर्मगुरु हैरान हुआ। उसने कहा, मेरे भाई, तुमने न तो स्वर्ग जाने के लिए हाथ उठाया, न नर्क जाने के लिए! तुम कहां जाना चाहते हो? उस आदमी ने कहा, मैं यही रहना चाहता हूं, जीवन में! और मैं जीवन में ही स्वर्ग बनाना चाहता हूं। न मैं स्वर्ग जाना चाहता हूं, न मैं नर्क में जाना चाहता हूं; क्योंकि जो स्वर्ग जाना चाहते हैं, उन्होंने इस पृथ्वी को नर्क बना दिया है, क्योंकि उनकी आंखें किसी काल्पनिक स्वर्ग में लगी हुई हैं। और वास्तविक पृथ्वी उपेक्षित पड़ी रह गयी है।

जो लोग जीवन को छोड़ देना चाहते हैं, जीवन की किसी भूल के कारण नहीं—अपनी किसी रुग्णता, अपनी किसी बीमारी के कारण जीवन का, जीवन के रस का जीवन के आनंद का उपभोग न करने की क्षमता के कारण—वे लोग जीवन को नर्क बनाने में सहयोगी हैं।

तो उस आदमी ने कहा, जितने लोगों ने हाथ ऊपर उठाए हैं स्वर्ग जाने के लिए, इन्हीं लोगों ने पृथ्वी को नर्क बना रखा है। मैं न स्वर्ग जाना चाहता हूं, न नर्क जाना चाहता हूं। मैं इस पृथ्वी को ही स्वर्ग बनाना चाहता हूं।

आज तक मनुष्य को पृथ्वी को स्वर्ग बनाने की शिक्षा नहीं दी गयी है, इसलिए नर्क बन गयी है। हमारा जीवन नर्क बन गया है।

और मैं आपसे यह निवेदन कर दूं जो इस जीवन के स्वर्ग में नहीं हो सकते, उनके लिए कोई स्वर्ग, कहीं भी नहीं है और न हो सकता है। और जो लोग इस जीवन को स्वर्ग में परिवर्तित कर सकते हैं, उनके लिए इस जगत में, किसी लोक में नर्क नहीं है। वे जहां भी होंगे, जहां भी उनका जीवन होगा, वे स्वर्ग में होने की कला में निष्णात हो गए होंगे।

जीवन एक अवसर है—उसे जो स्वर्ग बना लेता है, वह आने वाले जीवन के स्वर्ग की बुनियाद रख देता है और जो इसी जीवन को नर्क बना लेता है, वह आगे नर्क की यात्रा शुरू कर देता है। हमने ही पृथ्वी को नर्क बनाया है।

शायद मेरी बात बहुत कठोर मालूम पड़े। लेकिन उन्हीं लोगों ने बनाया है और मज दूरी है, सत्य कहना ही पड़ेगा, उन्हीं लोगों ने, जिन लोगों ने, पृथ्वी के विरोध में, जीवन के विरोध में शिक्षाएं दी हैं।

जीवन कस निषेध और लाइफ निगेशंस सिखाया गया है, यही समझाया गया है। बुरा है जीवन, दुख है जीवन, पीड़ा है जीवन, बंधन है जीवन। पिछले जन्मों का, दुष्कम ों का फल है जीवन। जब जीवन ऐसा हो तो फिर जीवन के आनंद का मंदिर कैसे ब नाया जा सकता है? तब तो एक ही काम है हमारे हाथ में तोड़ दें इस मंदिर को, गिरा दे इसकी दीवालों को, आग लगा दें इसमें, और किसी काल्पनिक मोक्ष की त लाश करें, खोज करें।

यह मैं पहली बात आपसे कहना चाहता हूं जीवन क्रांति की दिशा में। जीवन के सृज न में पहली बार है जीवन के प्रति अहोभाव। जीवन के प्रति धन्यता का बोध, जीवन के प्रति आनंद की धारणा, जीवन के सौंदर्य और जीवन के रस के प्रति अनुग्रह, ग्रे टीटयड। जीवन के शत्रु जो हैं, उन्हें जीवन से कुछ भी नहीं मिलेगा। शत्रुता से कभी किसी को कुछ भी नहीं मिला है।

जीवन अपनी निधियों के द्वार केवल उनके लिए ही खोलता है, जो जीवन के मित्र है , जो प्रेम से जीवन के द्वार पर दस्तक देते हैं, जो प्रेम से जीवन को आलिंगन करने के लिए तत्पर होते हैं, जो प्रेम से जीवन के द्वार पर प्रार्थना करते हैं, जो प्रेम से जीवन को पुकारते हैं और बुलाते हैं। और जिनके हृदय में, जीवन के विरोध में को ई कांटा नहीं होता है। जीवन के संगीत के लिए फूलों की मालाएं होती हैं, केवल उ नके लिए ही जीवन एक मंदिर बना पाता है। अन्यथा तो जीवन पत्थर तोड़ने से ज्य ादा नहीं हो सकता है। जीवन का निषेध धातक सिद्ध हुआ है, प्वायजनस—जहरीला सिद्ध हुआ है। लेकिन धर्मों के नाम पर जीवन का निषेध ही प्रचलित हो रहा है। ह म उसी आदमी को धार्मिक कहते हैं, जो जीवन को जितना तोड़ दे, और जीवन से जितना दूर भाग जाए। जो जीवन का जितना शत्रु हो, जीवन का जितना कंडमनेश न, जितनी निंदा कर सके, जीवन को जितना कृत्सित, जीवन को जितना बुरा सिद्ध कर सके, जीवन को जितनी गाली दे सके, वह आदमी उतना ही बड़ा धार्मिक प्रती त होता है।

यही लोग हैं अधार्मिक। यही लोग हैं, जिन्होंने जीवन को धार्मिक होने से वंचित कर रखा है। लेकिन इनका प्रभाव रहा है जीवन पर और आज तक मनुष्य जाति इनकी ही अंधेरी छाया के नीचे पतली रही है। जिन्हें हमने मार्गदर्शन समझाया है, वे ही इन मार्गों को भ्रष्ट करने वाले लोग हैं। इनकी तरकीब क्या रही है? इन्होंने किस भ ांति जीवन को बुरा और निंदित कर दिया है? इन्होंने जीवन को किस भांति विकार ग्रस्त सिद्ध कर दिया? इन्होंने किस भांति मनुष्य के मन में जीवन और आवागमन

से छूटने का भाव पैदा कर दिया? इनकी तरकीब क्या है? इनकी टेकनीक क्या है? इन्होंने किस विधि का उपयोग किया है, जिससे जीवन के सब कुएं विषाक्त हो गए ?

बड़ी अदभुत तरकीब है। शायद आपके खयाल में भी न आयी हो। इनकी तरकीब है ऐनेलिसिस, इनकी तरकीब है विश्लेषण। इसे समझना बहुत जरूरी है, क्योंकि इसे समझ लें, तो जीवन कैसे नष्ट किया गया है, यह हमारी समझ में न आ जाएगा।

मैं एक जलप्रपात देखने गया। एक बड़ी सुंदर रमणीय पहाड़ी से नदी गिरती थी। उसकी मर्मर ध्वनि, उसके पास खड़े हुए वृक्षों का आनंद, उस नदी की तीव्रता और वेग, सब अदभुत थे और प्राणों के किसी अनजाने तल को छू लेते थे। एक मित्र के साथ गया था। हम दोनों गाड़ी से उतर कर पहाड़ों में प्रवेश करने लगे, तो मैंने अपने मित्र से कहा कि आप अपने ड्राइवर को भी बुला लें, वह भी देख लेगा। मैंने उस ड्राइवर से कहा कि तुम भी आ जाओ। उसने कहा, वहां क्या रखा हुआ है। पहाड़ी और पानी--और कुछ भी नहीं! वहां है क्या? वहां है क्या पहाड़ और पानी के सिवाय? और मुझे हैरानी होती है कि लोग सैकड़ों मील से चलकर देखने आते हैं। कुछ पत्थर पड़े हैं साहब। कुछ पानी गिरता है। और कुछ भी नहीं है। मैंने अपने मित्र से कहा कि तुम्हारा ड्राइवर धर्मगुरु बनने के लायक है। उसे विश्लेषण की, उसे, एनेलेसिस की कला का पता है। उसने जलप्रपात के उस सौंदर्य को, दो छोटी सी चीजों में तोड़कर स्पष्ट कर दिया है। पत्थर पड़े हैं और वहां और पानी है वहां। और क्या है? बात खत्म हो गयी, कुछ भी नहीं है वहां।

एक बहुत बड़े चित्रकार पिकासो से एक अमरीकी करोड़पति ने अपना चित्र बनवाया था। बहुत बड़ा धनपति था वह। उसने नहीं समझा कि पिकासो से पैसे ठहरा ले कि क्या लोगे। सोचता था कि कितने भी लेगा। दो बरस लग गए चित्र बनने में। बार-बार उसने कुओं। पिकासो ने कहा कि देर है। फिर दो बरस बाद उसने कहा कि चित्र बन गया है। आप ले जाए।

वह करोड़पति चित्र लेने आया। चित्र लेकर उसने कहा, कितने रुपए हुए? पिकासो ने कहा, पचास हजार डालर। समझा उस करोड़पति ने मजाक किया जा रहा है। उसने कहा, पागल तो नहीं हैं आप? मजाक करते हैं? डरवाना चाहते हैं? इस छोटे से चित्र के पचास हजार डालर? छोटा सा कैनवास का टुकड़ा और थोड़े से रंग, दस पांच रुपए के हैं। है क्या इसमें ? थोड़े से रंग हैं और थोड़ा सा कैनवास का टुकड़ा है और है क्या इसमें? पिकासो ने कहा, चित्र रख दें। मैं एक कैनवास का टुकड़ा और थोड़े रंग आपको दिए देता हूं। और उसने अपने सहयोगी से कहा, तुम जाओ और इससे भी बड़ा कैनवास का टुकड़ा ले आओ। और रंग की साबित डिबिया ले आओ और भेंट कर दो उनको। और फिर जो भी दाम देना हो दे दें। उस करोड़पति ने कहा, लेकिन कैनवास और रंग को लेकर मैं क्या करूंगा? पिकासो ने कहा, फिर भूल करते हैं आप। यह चित्र है कैनवास और रंग नहीं। कैनवास और रंग से कोई और चीज प्रकट हुई। लेकिन कोई चाहे तो कह सकता है, कि सुंदर चित्र में क्या है

? थोड़ा सा रंग है और क्या है? यह विश्लेषण, जीवन की सब चीजों को पूछता है, और क्या है?

एक सुंदर चेहरे पर धर्मगुरु पूछता है—है क्या इसमें? हड्डियां और मांस के सिवाय। आदमी को शरीर में क्या है? पीब है, मज्जा है, खून है, हड्डियां हैं और क्या है? यह एनेलिसिस और है क्या? फूल में क्या है? कुछ भी तो नहीं है। कुछ थोड़े से केमिकल्स फलोरोफील! और क्या? एक फूल के सौंदर्य की तारीफ पर धर्मगुरु कहेगा, है क्या इसमें? थोड़े से रंग हैं, थोड़े से रसायन है क्या? एक कविता को धर्मगुरु के सामने रखें, एक काव्य को। वह कहेगा, है क्या? कुछ शब्दों का जोड़ है और कुछ भी नहीं। अगर जीवन को हम इस भांति देखना शुरू करें तो जरूर असर हो जाएगा। पाया जाएगा कि जीवन में कुछ भी नहीं है।

तीन हजार वर्षा से एनेलिसिस ने, विश्लेषण ने आदमी को बड़े धोखे में बहुत इलूजन में डाला है। हर चीज को तोड़कर देखा जा सकता है, और कुछ भी नहीं पाया जाएगा। एक जिंदा आदमी को हम काट डालें और खोजें क्या है इसमें, तो हड्डियां मिलेगी, मांस मिलेगा, आदमी कही भी नहीं मिलेगा। एक मूर्ति को काट पीट डालें तो पत्थर के टुकड़े मिलेंगे। कोई सौंदर्य की प्रतिमा नहीं मिलेगी। एक कविता को तोड़ डालें, तो शब्द मिलेंगे, कोई काव्य नहीं मिलेगा, कोई पोएट्री नहीं मिलेगी। एक सुंदर चेहरे को काट पीट डालें तो क्या मिलेगा भीतर? यह, चीजों को खंड-खंड टुकड़ों में तोड़ने की कला में, सारे जीवन का असार सिद्ध करने की तरकीब, धर्मगुरुओं के हाथों में दे दी गयी थी। किसी भी चीज को तोड़ फोड़ डालें, और पूछें क्या है इसमें? प्रेम में क्या है? सौंदर्य में क्या है? स्वाद में क्या है? रस में क्या है? किसी भी चीज में कुछ नहीं है, अगर विश्लेषण किया जाए। बात असल यह है कि विश्लेषण में केवल शूद्र ही हाथ लगता है। जो सूक्ष्म है, वह विलीन हो जाता है। उसका कोई दर्शन नहीं हो पाता। विश्लेषण करने में, एनेलेसिस करने में, जो व्यर्थ है वह हाथ लगता है, जो सार्थक है वह तिरोहित हो जाता है और तब हम कह सकते हैं—कोई सार नहीं! जीवन क्या है? जन्म लेना रोटी कमाना, बच्चे पैदा करना और फिर मर जाना। और जीवन क्या है? विश्लेषण पूरा हो गया और जीवन में कुछ भी हाथ नहीं लगा—तो जीवन है असार।

फिर यही तरकीब जो धर्मगुरुओं की थी, वैज्ञानिकों के हाथ लग गयी क्योंकि तीन हजार वर्षा में धर्मगुरुओं ने विश्लेषण में, एनेलेसिस में, आदमी को दीक्षित कर दिया। फिर विज्ञान का जन्म हुआ, तो उसके हाथ में एनेलेसिस की तरकीब लग गयी। तो उसने कहा, कहां है आत्मा आदमी में? हम तो काट पीट कर देखते हैं, कहीं नहीं मिलती! आत्मा नहीं है। धर्मगुरु ने कहा था, संसार असार है। वैज्ञानिकों ने कहा आत्मा भी असार है। क्योंकि उसका भी विश्लेषण करते हैं तो पायी नहीं जाती खोजबीन करते हैं, चीजें तोड़ते हैं, कुछ भी नहीं मिलता है। धर्मगुरुओं को पता नहीं था, कि जिस तोड़ने की तरकीब से वे जीवन को असार कर रहे हैं, उसी तरकीब से ए

क दिन धर्म भी असार हो जाएगा। कोई आत्मा नहीं, क्योंकि तोड़ने से उसका पता नहीं चलता है।

एक संगीतज्ञ था। उसने अपनी वीणा पर एक सुंदर गीत गाया। एक वैज्ञानिक भी व हां बैठा सुनता रहा। उसने सोचा, जरूर वीणा में कोई बात होनी चाहिए। रात जब वह संगीतज्ञ सो गया, तो वह वैज्ञानिक घर में घुस गया। उसने पूरी वीणा तोड़ कर देख डाली, तार तार कर डाला, टुकड़े-टुकड़े कर डाले। हाथ में कुछ तार लगे, कु छ टुकड़े लगे लकड़ी के कोई संगीत पकड़ में नहीं आया। उसने कहा, सब असार है। मालूम होता है धोखा था संगीत। संगीत था नहीं, मुझे धोखा दिया गया है। वीणा को पूरी तरह खोज लें, कहीं कोई संगीत मिलता नहीं।

जीवन का सत्य, एनेलेसिस से उपलब्ध नहीं होता। जीवन का सत्य सिंथेसिस से उप लब्ध होता है। जीवन का सत्य विश्लेषण से नहीं होलनेस में, परिपूर्णता में है। सौंदर्य भी परिपूर्णता में है। सत्य भी, जीवन भी, आनंद भी। जो लोग खंडों में तोड़ते हैं, वे वंचित हो जाते है।

लेकिन उस वंचित रह जाने को वे जीवन पर थोप देते हैं, कि जीवन में कुछ भी न हीं है। और जब जीवन में कुछ भी नहीं, तो छोड़ो इस जीवन को, भागो इस जीवन से, त्यागो इस जीवन को फिर खोजो किसी परमात्मा को, खोजो किसी मोक्ष को, जहां सब कुछ हो।

लेकिन अगर ये विश्लेषण करने वाले ये लोग किसी दिन मोक्ष पहुंच गए—ऐसा कभी हुआ नहीं आज तक, फिर भी अगर किसी दिन मोक्ष पहुंच गए—तो पाएंगे कि मोक्ष भी असार है—वहां भी कुछ नहीं है। क्योंकि मोक्ष में वे क्या पाएंगे? जो भी मिलेगा उनका विश्लेषण यह सिद्ध कर देगा कि यहां भी कुछ नहीं है।

बर्ट्रेन्ड रसेल ने एक बार यह कहा कि मैं सोचता हूं कि कहीं मुझे मोक्ष मिल गया, तो मोक्ष कैसा होगा? न वहां शांति होगी, न अशांत। वहां न अंधकार होगा, न प्रक ाश। वहां प्रेम होगा, घृणा। वहां होगा क्या?

और मोक्ष से लौटने का कोई उपाय नहीं है। मोक्ष में ऐन्ट्रेनस तो होता है, एक्जिट नहीं होती। वहां भीतर जा सकते हैं, बाहर आने का मौका नहीं है। तो बर्ट्रेडर रसेल ने कहा कि वहां करेंगे क्या? वहां जो लोग पहुंच गए हैं वे अब तक बहुत घबरा गए होंगे। बहुत बोर्डम पैदा हो गयी होगी। वहां करेंगे क्या? वहां कोई अभाव नहीं, कोई दुख नहीं, कोई पीड़ा नहीं। वहां कोई कामना नहीं, कोई महत्वाकांक्षा नहीं। वह ां लोग हैं, हैं और बने रहेंगे अनंत काल तक।

बर्ट्रेन्ड रसेल ने कहा, मेरी तबीयत बहुत घबराती है ऐसे मोक्ष में। इससे तो नर्क ही बेहतर, जहां कुछ करने को तो होगा। यह मोक्ष का विश्लेषण हो गया। रसेल ने म ोक्ष का विश्लेषण कर दिया। नहीं कुछ वहां भी दिखाई पड़ता।

महावीर, बुद्ध धोखे में पड़ गए लगता है। शायद वे मोक्ष का विश्लेषण नहीं कर पा ए। रसेल ने मोक्ष का विश्लेषण किया तो पाया कि वहां भी कुछ नहीं हो सकता है। मनुष्य विश्लेषण की छाया में बैठता आया है, आज तक यह मैं पहला सूत्र आप से

कहना चाहता हूं—अगर जीवन को एक मंदिर बनाना है, तो जीवन को एक संश्लेष
ण की दृष्टि सिंथेटिक एटिटयूड से देखने की क्षमता पैदा करनी हो गीत विश्लेषण क
ी दृष्टि से नहीं। जब भी हम चीजों को तोड़ देते हैं तो स्मरण रहे, चीजें होती हैं अ
पनी पूर्णता में, और कोई भी चीज खंडों का जोड़ नहीं होती है। खंडों के जोड़ से ज
यादा होती है।

एक कविता शब्दों का जोड़ नहीं होती, शब्दों के जोड़ से कुछ ज्यादा होती है। एक ि
चत्र रंगों का जोड़ ही नहीं होता है, रंगों के जोड़े से कुछ ज्यादा होता है। संगीत के
वल वीणा वादक की उंगलियां नहीं होता, कुछ और भी होता है। और वह चीज है,
वही रहस्यपूर्ण, वही अदृश्य, वही न दिखाई पड़ने वाला जीवन का रस है, जीवन
का आनंद है। जीवन में प्रभु है, जीवन जोड़ से कुछ ज्यादा है।

गणित में जोड़ दो तो और दो चार होते हैं। जीवन में दो और दो चार नहीं होते।
दो और दो के बार चार तो हो जाते हैं। और एक नई चीज पैदा हो जाती है, जो
दो और दो में होती ही नहीं—जो उनके मिलने में होती है।

अगर मैं किसी से प्रेम करता हूं, और उसेअपने हृदय से लगा लूंगा। और एक वैज्ञाि
नक विश्लेषण करे कि दो आदमियों की छाती की जब हड्डियां मिलती हैं तो आनंद
कैसे होता होगा? तो हड्डियों के मिलने से कैसे आनंद हो सकता है? कैसे प्रेम हो स
कता है? संघर्ष से विघुत पैदा हो जाती है यह हो सकता है कि हड्डियों की गर्मी ए
क दूसरे से मिल जाती हो, लेकिन आनंद का क्या संबंध है? प्रेम का क्या संबंध है?
तो अगर वैज्ञानिक किसी आलिंगन का विश्लेषण करेगा तो पाएगा कि यह बेवकूफी
है, एब्सर्ड है बिलकुल। कुछ नहीं मिल सकता इसमें कुछ हो नहीं सकता।

लेकिन जो प्रेम में है वे जानते हैं कि आलिंगन में हड्डी होती ही नहीं, शरीर मौजूद
ही नहीं रह सकते। जब कोई किसी को प्रेम से अपने हृदय के निकट लाता है, तो
शरीर मौजूद ही नहीं रह जाते। अनुपस्थित हो जाते हैं। कोई और चीज उपस्थित हो
जाती है। जिसका शरीर से कोई वास्ता नहीं। दिखाई पड़ता है कि दो शरीर निकट
आए, लेकिन निकट कोई और चीज आती है। लेकिन शरीर के विश्लेषण से आत्मा
को नहीं खोजा जा सकता। तो वह झूठी हो जाती है, असत्य हो जाती है, असार
हो जाती है।

धर्म ने यह काम किया, पहले के सारे जीवन तो असार करने के लिए हर चीज का
विश्लेषण कर दिया। फिर वैज्ञानिकों के हाथ में विश्लेषण की ताकत आ गयी। उन्ह
ोंने सब चीजों का विश्लेषण करके धर्म को भी असार कर दिया और अब आदमी अ
केला खड़ा रह गया है। उसके हाथ में कुछ नहीं बचा है। न प्रेम, न परमात्मा—न सं
सार, न मोक्ष! सब चीजों का विश्लेषण हो गया है। और आदमी खाली हाथ खड़ा ह
ो गया है। यह आदमी अगर दुख से भर जाए, यह आदमी अगर जीवन के प्रति उदा
सी से न भर जाए, अगर यह आदमी जीवन को समाप्त करने के लिए तत्पर न हो
ने लगे, तो क्या करे?

विश्लेषण ने आदमी को आत्महत्या सिखाई है, सूइसाइड सिखाया है। आत्महत्या दो तरह से हो सकती है—या तो आदमी होलसेल आत्महत्या कर ले इकट्ठी, या फूटकल—फुटकल आत्महत्या करे। एक आदमी सीधा जाए और पहाड़ से कूद जाए और मर जाए। एक आदमी छुरी मार ले—जहर पीले—या एक आदमी धीरे-धीरे मरे। पहले घर छोड़े, फिर वस्त्र छोड़े, फिर समाज छोड़े, संन्यासी हो जाए।

धीरे-धीरे मरने के नाम को हम अब तक संन्यास कहते रहे हैं, ग्रेज्युअल सूइसाइड को! धीरे-धीरे मरो। और आदमी इस मरने की प्रक्रिया में जितना आगे निकल जाए, जितना सूख जाए, जितना सुखी पत्तियों की भांति हो जाए जीवन का आनंद, जिसे जीवन के हर हर को गंदा करने की क्रूरता से भर दे, उस आदमी का हम उतना ही आदर देते हैं। धर्म के तथाकथित झूठे प्रभावों में हमने जीवन को नहीं, मृत्यु को आदर दिया है। और जो समाज मृत्यु को आदर देता हो, उसके जीवन में आनंद कैसे हो सकता है? आत्मघात को हमने सम्मान दिया है। हमने अब तक केवल मृत्यु के देवता के मंदिरों की पूजा की है। हमने दीए जलाए हैं मृत्यु के सामने, जीवन के सामने नहीं।

धर्म के हाथों में मैंने कहा, व्यक्तिगत आत्महत्या की सूझ मिली आदमी को, और विज्ञान के हाथों में सामूहिक आत्महत्या का उपाय मिल गया है। धर्म ने कहा—छोटे जीवन को! आवागमन से मुक्ति चाहिए। जीवन ठीक नहीं शुभ नहीं, पाप है। यह एक मात्र पाप है जीवित होना। मैं पिछले जन्मों के पापों के कारण जीवित हूं। आप भी पिछले जन्म के पापों के कारण जीवित हैं। जिस दिन पाप नहीं रह जाएंगे, जीवन की कोई जगह नहीं रह जाएगी, आप जीवित नहीं रहेंगे। आप जीवन में नहीं होंगे।

जो लोग पाप से मुक्त हो जाते हैं, वे जीवन से भी मुक्त हो जाते हैं। जीवन और पाप पर्यायवाची है, एक ही अर्थ रखते हैं। जीवित होने और पापी होने का एक ही अर्थ है। क्योंकि जो पाप से मुक्त हो जाते हैं, वे जीवन से भी मुक्त हो जाते हैं। तो जीवन है पाप, फिर क्या करें हम? जीवन से हटें? जीवन को छोड़ें? जीवन से मुक्त हों? आगमन से बाहर जाने की कोशिश करें?

जीवन से हट जाने की सारी कोशिश मृत्यु में जाने की कोशिश ही हो सकती है, और कोई विकल्प नहीं, और कोई आल्टरनेटिव नहीं। या तो जीवन की राह और आनंद में प्रवेश है, या फिर जीवन से पीठ फेरने में है, जीवन से भागना है, जीवन से हटना है।

जिसे हम संन्यास कहते हैं, वह मृत्यु की ओर मुख करने का नाम है, जीवन की और पीठ फेर लेने का; मृत्यु की तरफ गति करने का नाम है। धर्मों ने व्यक्तिगत आत्मघात सिखाया। विज्ञान और आगे बढ़ गया। असल में विज्ञान हर चीज को सामूहिक बनाने का उपक्रम है।

एक व्यक्ति जिसका उपभोग करता है, विज्ञान की कोशिश है कि सभी उसका उपभोग कर सकें। अकबर के महल में जितनी रोशनी होती थी, विज्ञान ने व्यवस्था कर द

ी कि उतनी रोशनी बंबई की झोपड़ी में भी हो। अकबर जितना अच्छा भोजन करता था, विज्ञान कोशिश करता है कि हर आदमी उतना अच्छा भोजन कर सके। सम्राट ों के पास जितने तीव्र वाहन थे, विज्ञान ने कोशिश की कि दरिद्रतम आदमी के पास भी उतने तीव्र वाहन हो जाए। विज्ञान जीवन की घटनाओं को सामूहिक करने की कोशिश करता है। उसने मृत्यु को सामूहिक करने की व्यवस्था कर दी है। एक-एक आदमी क्यों आवागमन से मुक्त हो? सारी पृथ्वी एक ही साथ आवागमन से मुक्त क यों न हो जाए? इसलिए हाइड्रोजन बम और एटमबम ईजाद किया। सभी को इकट्ठा मोक्ष क्यों न मिल जाए? सभी जीवन से छूट क्यों न जाए? जब जीवन दुख है तो जीवन को बचाने की जरूरत क्या है? और जब जीवन पीड़ा है और उससे छुटकारा ही एकमात्र लक्ष्य है तो सभी सामूहिक रूप से क्यों न प्रवेश पा जाए? एक-एक आ दमी कब तक मुक्त होता रहेगा? एक-एक आदमी को मोक्ष जाने में कितना समय लग जाएगा। इकट्ठा, टोटल, हम क्यों न मुक्त हो जाए?

तो विज्ञान ने मृत्यु को भी सामूहिक, कलेक्टिव करने का उपाय कर दिया है। इन द ोनों बातों में विरोध नहीं है। विश्लेषण मृत्यु पर ही ले जाता है। चाहे धार्मिक विश्ले षण हो, चाहे वैज्ञानिक विश्लेषण हो। एनेलेसिस मौत पर ही ले जाती है, जीवन पर नहीं ले जाती। क्योंकि एनेलेसिस का मतलब है तोड़ना-तोड़ना, खंड खंड करना। जो चीज तोड़ी जाती है वह मर जाती है, जिसे हम खंड-खंड करते हैं वह नष्ट हो जाती है। जीवन का अर्थ है जोड़ना जोड़ना, अखंड करना! मृत्यु का अर्थ है तोड़ना।

आप मरते हैं तो होता क्या है आपके भीतर जो चीज सिंथेटिक थी वह टूट जाती है अपने एलीमेन्टस। आपके भीतर जो चीज थी, वह खंड-खंड में बंट जाती है। और क्या होता है? मृत्यु का और क्या अर्थ है? मृत्यु का अर्थ है, जो जुड़ा था वह बिख र गया। जो संयुक्त था, वह वियुक्त हो गया। जो साथ-साथ था, वह अलग हो गया ।

जीवन की प्रक्रिया है अखंडता में! इंट्रीगेशन में, सिंथेसिस में! और मृत्यु की प्रक्रिया है खंड-खंड होने में विश्लिष्ट होने में, टूट जाने में! जो भी विश्लेषण का मार्ग पकड़े गा—चाहे धर्म, चाहे विज्ञान, अंत में मृत्यु हाथ में आएगी। धार्मिकों ने भी एक तरह की मृत्यु हाथ में ला दी थी, वैज्ञानिकों ने दूसरी तरह की मृत्यु हाथ में ला दी है, लेकिन जीवन अब तक हाथ में नहीं आ सका।

न तो जीवन का धर्म पैदा हुआ है, न जीवन का विज्ञान पैदा हुआ है। जोड़ने का, इ कट्ठापन का, समग्रता का, होलनेस का अब तक कोई भाव जीवन का नहीं प्रकट हो सका। इसलिए हम दुख में जीते हैं, इसलिए हम पीड़ा से जीते हैं, इसलिए हम अं धकार में जीते हैं। इसलिए जीवन के साथ हमारा कोई संपर्क नहीं हो पा रहा है। न हम आनंद को जान पाते हैं, न आलोक को, हम कुछ भी नहीं जान पाते। हम बिन ा जाने जीते हैं, और बिना जाने मर जाते हैं।

पहली बार आपसे कहना चाहता हूं। अगर जीवन के मंदिर बनाने वाले बनना हो, प त्थर तोड़ने वाले नहीं, रोटी रोजी कमाने वाले नहीं! अपमान जनक है ये बातें, कि कोई आदमी सिर्फ रोजी रोटी कमाता है या पत्थर तोड़ता है। उसे पता ही नहीं उस आनंद का, उस गीत का, जो परमात्मा के मंदिर के बनाने में उपलब्ध होता है। ज ो किसी क्रिएटिविटी में--जो किसी सृजन में उपलब्ध होता है, जो खुद से जीवन को रोज-रोज बनाने में उपलब्ध होता है, उसे पता ही नहीं उस ग्रेटर सिंथेसिस की तरह , उस बड़े समन्वय की तरह, जहां भीतर का जीवन और नए-नए जोड़ को उपलब्ध होता है। रोज नया शिखर छूता है, रोज नई ऊंचाई छूता है, उसे पता ही नहीं। भगवान कहीं बना बनाया रेडिमेड नहीं बैठा है कि आप पहुंच गए और मुलाकात हो गयी। भगवान क्रिएट करना होता है अपने भीतर! भगवान को जानना और पहचान ना, निरंतर सता सृजन से गुजरने का नाम है, कास्टेंड क्रिएटिविटी से गुजरने का ना म है। जो अपने जीवन को नए नए संयोगों में जोड़ता है, श्रेष्ठतर संयोगों में जोड़ता चला जाता है, जोड़ता है, उस अल्टीमेट यूनिटी तक, जिसके आगे फिर कोई जोड़ नहीं रह जाता, कोई सिंथेसिस नहीं रह जाती उस दिन वह जानता है कि परमात्मा क्या है।

जैसे हम एक मंदिर बनाते हैं, तो नींव बहुत बड़ी भरनी पड़ती है। फिर हम ईंटें जो. डते जाते हैं, फिर मंदिर ऊपर उठने लगता है और छोटा होने लगता है। शिखर पर पहुंचकर फिर बहुत ईंटें नहीं रह जाती, एक ही ईंट रह जाती है। छोटा होता चला जाता है शिखर, फिर अकेली ईंट रह जाती है, वही शिखर आ जाता है।

जीवन के मंदिरों में बड़ी विस्तृत भूमि होती है, बुनियाद में आधार में। फिर जोड़ते चलते हैं हम और छोटी इकाई, और छोटी इकाई पैदा होती चली जाती है। जिस ि दन जोड़ आखिरी हो जाता है, उस दिन जिसका अनुभव होता है, वही आत्मा है! मनुष्य के भीतर जो श्रेष्ठतम एकता पैदा होती है, जो महानतम यूनिटी पैदा होती है , जो बड़े से बड़ा समन्वय पैदा होता है, वही जीवन के देवता का अनुभव है। लेकि न हम तो जीवन को तोड़ते हैं।

हम तो एक मंदिर में जाकर कह सकते हैं कि क्या है यहां? कुछ ईंट लगा दी हैं अ ौर जोड़ हो गया है, और क्या है? मेरे कपड़े को कह सकते हैं कि क्या है इस कपड़े में। कुछ भी तो नहीं है, कुछ धागे आड़े और सीधे डाल दिए हैं और कुछ तो नहीं है? कपड़े सिर्फ धागे नहीं हैं, क्योंकि धागे से कोई शरीर नहीं ढक सकता। कपड़े धागे से कुछ ज्यादा हैं, क्योंकि धागे जो नहीं करते हैं, वह कपड़े करते हैं, नहीं तो पागल था धागे से ही काम चला लेता। कपड़े की कोई यूनिटी है? कोई सिंथेसिस है, कोई समन्वय है, कोई जोड़ है और उस जोड़ में कुछ नई उपयोगिता पैदा हो जाती है। कोई नया अर्थ पैदा हो जाता है।

वह जो नया अर्थ है उसकी तलाश में उसकी खोज ही धर्म है।

लेकिन निषेध के धर्म यह नहीं कर पाए। उन्होंने मनुष्य को मरना सिखाया है, जीना नहीं।और जो आदमी जितना कुशलता से मर सकता है, उसको उतना सम्मान दिय

ा है। जो आदमी मरने में बड़ा ग्रणीय हो सकता है उसे शहीद कहा है। लेकिन जो जीवन को जीता है कुशलता से, उसे आज तक कोई शहीद कहने वाला नहीं मिला बदल देने चाहिए ये वेल्यूज, ये मूल्य। मरने वाले को शहीद कहने की क्या जरूरत है ? लेकिन जो जीते हैं और जीवन को पूरे अर्थों में जीते हैं, वे ही शहीद हैं। मरना बहुत आसान है, जीवन बहुत कठिन है। क्योंकि मरने में सिर्फ मरना पड़ता है, और कुछ भी नहीं करना पड़ता है।

जीने में बहुत कुछ करना पड़ता है। तोड़ना बहुत आसान है, क्योंकि सिर्फ तोड़ना प. डता है। जोड़ना बहुत कठिन है, क्योंकि जोड़ने के लिए कला चाहिए। तोड़ तो कोई भी सकता है।

मंदिर गिराने के लिए हम किसी बड़े आर्चिटेक्ट को खोजने नहीं जाते। गांव का कोई भी मजदूर यह काम कर देगा। लेकिन एक मंदिर बनाना हो, तो गांव के मजदूर काम नहीं देते। किसी आर्चिटेक्ट को खोजना पड़ता है जो बनाना जानता हो, बनाने की कला जानता हो, जोड़ने की कला जानता हो।

अब तक धर्म के नाम पर केवल तोड़ना सिखाया है, छोड़ना सिखाया है, भागना सि खाया है। यह कोई भी कर सकता है। इसके लिए जीवन की कला जानना जरूरी न हीं है। लेकिन वह धर्म अब तक पैदा नहीं हो सका। जो जोड़ना सिखाए। जीवन का आर्चिटेक्ट जीवन की कला सिखाए, जीवन निर्माण का सूत्र सिखाए।

पहला सूत्र—आज की सांझ मुझे आपसे बात करनी है और वह यह है कि जीवन को विश्लेषण की दृष्टि से देखना बंद कर दें, अन्यथा आपके हाथ में राख के सिवाय कु छ भी नहीं लगेगा। जीवन को देखें संश्लेषण की दृष्टि से और आपको रस उपलब्ध होना शुरू हो जाएगा। और सब कुछ निर्भर करता है इस पर कि आप कैसे देखते हैं । जीवन वही हो जाता है, जो आपके देखने की दृष्टि हो जाती है।

जापान से एक आदमी ने अफ्रीका के लिए यात्रा शुरू की। उसी जहाज में एक अमरी की भी यात्रा कर रहा था। दोनों एक ही जहाज से अफ्रीका पहुंचे। एक ही समय पहुं चे। एक ही काम से पहुंचे, यह उन्हें पता नहीं था। अमरीकी युवक जूते की एक बहु त बड़ी कंपनी का बेचने वाला एजेन्ट था सेल्समैन था। वह भी अफ्रीका गया था कि अपनी कंपनी के जूते वहां बिकने की व्यवस्था हो सके और जापानी भी जापान के जूतों की एक कंपनी का विक्रेता था।

दोनों ही, एक ही जहाज से अफ्रीका में उतरे। एक ही होटल में ठहरे।

अमरीकी ने वहां से अमेरिका केबल किया, मैं लौटते जहाज से वापस आ रहा हूं। अ फ्रीका में जूते नहीं बिक सकेंगे, क्योंकि यहां कोई जूता पहनता ही नहीं है। यहां लो ग नंगे पैर हैं। यहां हमारा आना सब व्यर्थ है, मैं वापस लौट रहा हूं।

जापानी ने भी उसी वक्त केबल किया जापान कि एक लाख जूते की जोड़ी फौरन भे ज दें, यहां बिक्री की बहुत संभावना है। कोई भी जूता नहीं पहने हुए है। एक भी अ ादमी के पास जूते नहीं हैं। फौरन एक लाख जोड़े तो भेज ही दें; क्योंकि एकदम वि क्री शुरू हो जाएगी।

अमेरिकी वापस लौट गया, क्योंकि कोई आदमी जहां जूता ही नहीं पहनता; वहां जूते खरीदेगा कौन? जहां जूते पहनने का रिवाज ही नहीं वहां जूते का सवाल ही क्या उठाना है?

दोनों की दृष्टि भिन्न-भिन्न थी। एक ने बाजार खोज लिया, एक ने बाजार खो दिया। जीवन के बाजार में हम सब उतरते हैं। कुछ लोग बाजार खो देते हैं, कुछ लोग बाजार उपलब्ध कर लेते हैं। जो लोग विश्लेषण से देखते हैं, उन्हें जीवन असार दिखायी पड़ता है। वे फौरन केवल करते हैं परमात्मा को आवागमन से छुटकारा दिलाओ, हम वापस आना चाहते हैं, जीवन व्यर्थ है! यहां कोई सार नहीं। हे पतितपावन! हमें जल्दी वापस बुला लो। यहां हम नहीं रहना चाहते। लेकिन जो जीवन को संश्लेषण की दृष्टि से देखते हैं, वे परमात्मा से कहते हैं, धन्यवाद है तुझे, कि जीवन में हमें भेजने का मौका तूने दिया और इस योग्य समझा। जीवन में बड़ा आनंद है, जीवन में बड़े मौके हैं, जीवन एक बड़ी अपार्चनिटी एक बड़ा अवसर है। अनुगृहीत हैं हम तेरे, कि तूने इस योग्य समझा, कि हमें इस जीवन में भेजा।

रविंद्र नाथ ने मरने के दो दिन पहले एक गीत लिखा था। और उस गीत में कहा कि हे परमात्मा! मैं किन शब्दों में तुझे धन्यवाद दूं, कि तूने मुझे जीने का मौका दिया। तेरा जीवन बहुत अदभुत था। और अगर कुछ दुख भी मुझे इस जीवन में मिले होंगे, तो वह मेरी भूल से मिले होंगे, तेरे जीवन के कारण नहीं।

फिर से दोहराता हूं, रविंद्र नाथ ने गाया कि अगर तेरे जीवन से कुछ दुख भी मुझे मिले होंगे, तो वह मेरी भूल से मुझे मिले। तेरे जीवन के कारण नहीं! तूने जीवन दिया, बहुत धन्यवाद! और मेरी एक ही प्रार्थना है कि अगर तूने मुझे इस जीवन में देखकर अपात्र न समझ लिया हो, तो बार-बार मुझे जीवन के दर्शन का मौका देना। मैं बार-बार लौट आना चाहता हूं। शायद अगली बार मैं आऊं तो ज्यादा पात्र होकर आऊं। जो भूलें मैंने आज की, वे कल न करूं! जीवन तूने दिया, धन्यवाद और आगे भी जीवन देना इसकी प्रार्थना है।

इस हृदय को मैं धार्मिक हृदय कहता हूं। इस हृदय को मैं जानने वाला हृदय कहता हूं। इस हृदय ने जीवन के मंदिर को बनाया और जाना, ऐसा मैं कहता हूं जीवन का निषेध नहीं, लाइफ निगेशन नहीं जीवन का स्वीकार है, लाइफ उफरमेशन है।

पहला सूत्र है जीवन की क्रांति की दिशा में। जो लोग अपने जीवन को बदलना चाहते हैं, पहले तो उन्हें जीवन से मित्रता साधनी होगी, शत्रुता नहीं। पहले तो उन्हें जीवन से आलिंगन लेना होगा, पीठ नहीं फेर लेनी होगी। पहले तो उन्हें जीवन के रस विभोर होना होगा।

लेकिन हम तो जीवन को देखते ही नहीं। सूरज उगता है, आपने कभी उसे धन्यवाद दिया है? और चल पड़े परमात्मा की खोज में और चल पड़े आनंद की खोज में? सुबह आंख खुलती है और जीवन उसके भीतर करवट लेता है। कभी आपसे धन्यवाद दिया है। जीवन को कि एक दिन मुझे और मिला है, अनुगृहीत हुआ मैं? कृतज्ञता ज्ञापन किया कभी?

आकाश में चांद तारे होते हैं। मुक्त, बिना आपसे कुछ लिए, रोज निकल आते हैं। फूल बिना कुछ आपसे मांगे रोज खिल जाते हैं। सारांश, बिना किसी चीज के व्यय िकए, आपके भीतर आनंद की बहुत खबर लाते हैं, लेकिन हम वे लोग हैं, जो जीव न में देखते ही नहीं। न हवाओं में, न चांद तारों में, न सूरज में, न आदमी की आं खों में, न बच्चों की आंखों में, न स्त्री की आंखों में, न बूढ़ों की आंखों में। हम तो जीवन को देखते ही नहीं। हम तो ऐसे जीते हैं, जैसे एक बोझ ढोते हों, जैसे कोई सजा काटते हो।

मैं कारागृहों में गया था एक बार। वहां मैंने लोगों से पूछा, कैसे जी रहे हो? उन्हों ने कहा, जीने का कोई सवाल नहीं! हम केवल सजा काट रहे हैं। मैंने कहा, अगर तुम ही सजा काटते हो तो भी ठीक था। मैं बाहर की बड़ी जेल से आ रहा हूं। वहां भी लोग सजा ही काट रहे हैं। वहां भी कोई जी नहीं रहा है, क्योंकि जीने के प्राथ मिक सूत्रों का भी कोई बोध नहीं।

पहला सूत्र है—जीवन के प्रति अहोभाव! ग्रेटीटयूड! जीवन के प्रति अनुग्रह का भाव! और जिस दिन आप अनुग्रह से देखेंगे, उसी दिन वे द्वार खुल जाएंगे, जो बंद रहे हैं, अब तक। और आप हैरान हो जाएंगे। यह भी मौजूद था जो मैंने कल तक देखा न हीं! और मैं क्या देख रहा था?

दो कैदी एक कारागृह में बंद थे। वे कारागृह के सींखचे पकड़े खड़े थे। सींखचे के सा मने ही एक गंदा डबरा था, जिसमें तरह-तरह के कीड़े-मकोड़े पल रहे थे, और जि ससे बेहद बदबू उठ रही थी।

एक कैदी उस डबरे को देखे जा रहा था और गाली दे रहा था कि कैद में रखा गय ा वह, तो ठीक! लेकिन इस डबरे के पास?

दूसरा कैदी भी उसके पास ही खड़ा था। उसकी आंखें आकाश की तरफ उठीं थीं। अ ाकाश में पूर्णिमा का चांद निकल आया था और उसमें अमृत की वर्षा हो रही थी। उस कैदी ने अपने बगल के पड़ोसी को हिलाया और कहा, पागल लेकिन चांद भी है , तू चांद को देखता ही नहीं! किसने कहा कि तू डबरे को देखे? डबरा है, यह तो ठीक, लेकिन किसने कहा कि तू डबरे को देख? तू खुद ही चुनाव कर रहा है डबरे को देखने का, क्योंकि चांद भी मौजूद है। और पागल, जब मैंने चांद को देखा और चांद को देखकर मेरी आंखें डबरे पर गयी तो मैं हैरान हो गया। वह डबरा भी बद ल गया, उस में चांद की प्रतिछाया बन रही थी। उस डबरे में मुझे चांद दिखाई पड़ा । क्योंकि चांद को मैंने देखा, चांद से मैं परिचित हुआ, फिर उस डबरे में मुझे कीड़े -मकोड़े पता ही नहीं चले। चांद की प्रतिछवि ही मुझे दिखाई पड़ी, और तू डबरे को देख रहा है? और मैं जानता हूं कि अगर तू चांद को भी देखेगा तो डबरे की प्रति छवि चांद में दिखायी पड़ेगी, यह बिलकुल स्वाभाविक है।

हमारी दृष्टि, हमारे जगत को निर्मित करती है। धर्मगुरुओं ने मनुष्य जगत को विषा क्त कर दिया, असार दुखपूर्ण कह कर! और उन्होंने कहा और हो गया, उनका अि भशाप फलित हो गया है।

क्या हम इस दुनिया को ऐसे ही जिए? या जीवन की दृष्टि को बदले? परमात्मा अगर कहीं है, तो जीवन के मंदिर में विराजमान है। और जिन्हें भी उस मंदिर में प्रवेश करना है, वे अहोभाव, जीवन के प्रति धन्यता का बोध, जीवन के प्रति कृतज्ञता का बोध लेकर ही प्रवेश कर सकते हैं।

पहली सीढ़ी है जीवन के प्रति अहोभाव! और उस सीढ़ी तक पहुंचने की दृष्टि है संश्लेषण, सिंथेसिस होलनेस! एनालेसिस नहीं, विश्लेषण नहीं, खंड-खंड कर देना नहीं! अखंड से देखें खंड-खंड से नहीं। जो अखंड को देखता है वह धार्मिक है, जो खंड को देखता है, वह अधार्मिक है। यह जीवन क्रांति की दिशा में पहला सूत्र है।

एक छोटी सी कहानी, और मैं अपनी बात पूरी करूंगा।

स्वर्ग में, स्वर्ग के एक रेस्त्रां में बुद्ध, कंफ्यूशियस और लाओत्से तीनों बैठकर गपशप कर रहे हैं। स्वर्ग में भी रेस्त्रांत होते हैं, क्योंकि जो आदमी जमीन से जाते हैं, वे जमीन की बहुत सी चीजें वहां ले जाते हैं। नहीं ले जाते, तो वहां बना लेते हैं। फिर बुद्ध, कंफ्यूशियस और लाओत्से तीनों पृथ्वी पर शायद ही किसी रेस्त्रां में गए हों। तीनों रेस्त्रां में बैठकर गपशप करते हैं। एक अप्सरा एक बहुत सुंदर सुराही में, जीवन का रस लेकर आती है।

बुद्ध यह देखते ही, कि जीवन का रस है, आंख बंद कर लेते हैं और कहते हैं, बस जीवन दुख और असार है, हटो यहां से! अन्यथा मैं यहां से हट जाऊंगा। कंफ्यूशियस कहता है, थोड़ा सा चख कर देख लूं, कि कैसा है! क्योंकि बिना चखे कुछ भी कहना उचित नहीं। एक घूंट देख लूं कैसा है, क्योंकि बिना घूंट कोई निर्णय देना उचित नहीं। छोटी सी प्याली में एक घूंट जीवन का रस लेकर वह चखता है और कहता है, नहीं, कोई सार नहीं है, कोई सार नहीं है। वह भी आंख बंद कर लेता है। लाओत्से कहता है कि पूरी सुराही मुझे दे दो। क्योंकि जब तक मैं पूरी को नहीं चख लूं, कुछ भी कहना उचित नहीं। हो सकता है, जो एक घूंट में न हो, वह पूरे में हो। हो सकता है जो खंड में न हो, वह अखंड में हो। तो मैं पूरे ही जीवन को पी जाऊं, तब कुछ कहूं। पूरी प्याली पी जाता है, और नाचने लगता है। और बुद्ध से कहता है कि तुमने बिना चखे कहा, कि कुछ भी नहीं है। और कंफ्यूशियस, तुमने एक घूंट लिया और कह दिया व्यर्थ है। लेकिन जीवन तो उसकी पूर्णता में ही जाना जा सकता है। कि सार भूत जो कुछ है, सब जीवन में है! परमात्मा जीवन में है, और मोक्ष भी। लेकिन पूरे जीवन को जो जानते हैं, वे ही केवल इस सत्य को अनुभव कर पाते हैं।

जीवन को उसकी पूर्णता में जान लेना ही प्रार्थना है पूजा है। जीवन को उसकी पूर्णता में जान लेना एक संन्यास है, साधुता है। जीवन को उसकी पूर्णता में जान लेना ही मनुष्य का अंतिम और चरम लक्ष्य, अनन्य और चरम उददेश्य है। धर्म उसका द्वार है। पहला सूत्र!

दो सूत्रों की कल आपसे बात करूंगा। तेरी बातों को इतने प्रेम और आनंद से सुना, ऐसी बातों को, जिनके विरोध में हमेशा साधु और संन्यासी बोलते रहे हैं! आपकी

बड़ी कृपा है, बहुत धन्यवाद! जो मैंने कहा वह शब्दों का जोड़ ही नहीं है, उसका ि वश्लेषण मत कर लेना अन्यथा सभी व्यर्थ हो जाएगा। जो मैंने कहा, उसे पूरा का पू रा देखना। उसमें शब्दों से कुछ ज्यादा भी मैंने कहने की कोशिश की है, कोई इशारा किया है, जो शब्दों के पार ले जाता है। काश, वह दिखाई पड़ जाए, तो परमात्मा का मंदिर दूर नहीं। अंत में सबके भीतर बैठे जीवन के देवता को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

मेरे प्रिय आत्मन

जीवन ही परमात्मा है। जीवन के अतिरिक्त कोई परमात्मा नहीं। जो जीवन को जी ने की कला जान लेते हैं वे प्रभु के मंदिर के निकट पहुंच जाते हैं और जो जीवन से भागते हैं, वे जीवन से तो वंचित होते ही हैं, परमात्मा से भी वंचित हो जाते हैं। इस संबंध में कल मैंने थोड़ी सी बात आपसे कही। पहला सूत्र मैंने आपसे कहा है—ज ीवन के प्रति अहोभााव! जीवन के प्रति आनंद और अनुग्रह का भाव!

लेकिन आज तक ठीक इससे उल्टी बात समझायी गयी है। आज तक यही समझाया गया है—जीवन से पलायन एस्केप जीवन से पीठ फेर लेना, जीवन से दूर हट जाना, जीवन से मुक्ति की कामना। आज तक यही सिखाया गया है। और इसके दुष्परिणाम हुए हैं। इसी कारण पृथ्वी नर्क और दुख का स्थान बन गयी है। जो पृथ्वी स्वर्ग बन सकती थी, वह नर्क बन गयी है।

मैंने सुना है—एक संध्या स्वर्ग के द्वार पर किसी व्यक्ति ने जाकर दस्तक दी। पहरेदार ने पूछा, तुम कहां से आ रहे हो? उसने कहा, मंगल ग्रह से आ रहा हूं। पहरेदार ने कहा, तुम नर्क जाओ। यह द्वार तुम्हारे लिए नहीं है। स्वर्ग के दरवाजे तुम्हारे लि ए नहीं है। अभी नर्क जाओ। वह आदमी अभी गया भी न था, कि उसके पीछे एक और आदमी ने भी द्वार खटखटाया। पहरेदार ने फिर पूछा, तुम कौन हो? कहां से आते हो? उसने कहा, मैं एक मनुष्य हूं और पृथ्वी से आता हूं। द्वारपाल ने दरवाजा खोल दिया और कहा, तम आ जाओ। यू हैव बीन थ्रो हैल आलरेडी—तम नर्क से ह ी आ रहे हो। अब तुम्हें और किसी नर्क में जाने की जरूरत नहीं है।

मनुष्य ने पृथ्वी की जो दुर्गति कर दी है, वह बड़ी हास्यास्पद और देखने जैसी है। अ ौर बहुत भले लोगों ने इस दुर्गति में हाथ बंटाया है। वे सारे लोग, जिन्होंने जीवन क ी निंदा की है और जीवन को कंडमनेशन किया है, जिन्होंने जीवन को असार और बुरा कहा है, जिन्होंने जीवन के प्रति घृणा सिखायी है, उन सारे लोगों का पृथ्वी को नर्क बनाने में हाथ है।

कल मैंने आपसे कहा कि दुर्भाव छोड़ना होगा। धार्मिक मनुष्य के मन में, जीवन के प्रति एक धन्यता का, एक ग्रेटीटयड का भाव लाना होगा। जीवन उसे असार नहीं दि खाई पड़ता। और अगर कहीं जीवन असार मालूम होता है, तो वे समझते हैं कि उ नकी कोई भूल होगी, जिससे जीवन गलत दिखाई पड़ रहा है। जब भी जीवन गलत दिखाई पड़ता है, तो धार्मिक मनुष्य अपने को गलत समझते हैं। लेकिन मनुष्य की पुरानी भूलों में से एक यह है कि अपनी भूल को दूसरे पर थोप देने की उसकी पुरा

नी प्रवृत्ति है। अपनी गलती को, अपने दोष को, अपनी व्यर्थता को, अपनी मीनिंगने सनेस को हम जीवन पर थोप कर मुक्त हो जाते हैं। जीवन ही दुख है। हम क्या क रें?

सच्चाई दूसरी है। हम जिस चित्त को लिए बैठे हैं, वह दुख का सृजन करने वाला चित्त है। हम जिस मन को लिए बैठे हैं, हम जिन प्रवृत्तियों को लिए बैठे हैं, वे दुख को पैदा करने वाली हैं। पृथ्वी वैसी ही हो जाती है, जैसे हम है। हम, हम है मौलिक रूप से केंद्रीय, पृथ्वी नहीं।

एक छोटे से गांव के बाहर एक सुबह, एक बैलगाड़ी आकर रुकी। बैलगाड़ी में बैठे हुए आदमी ने उस गांव के द्वार पर बैठे हुए एक बूढ़े से पूछा, इस गांव के लोग कैसे हैं? मैं इस गांव में हमेशा के लिए स्थायी निवास बनाना चाहता हूं। उस बूढ़े ने कहा, मेरे मित्र, अजनबी मित्र! इसके पहले कि मैं तुम्हें बताऊं, कि इस गांव के लोग कैसे हैं, क्या मैं पूछ सकता हूं कि उस गांव के लोग कैसे थे, जहां से तुम आ रहे हो?

उस आदमी ने कहा, उनका नाम और उनका खयाल ही मुझे क्रोध और घृणा से भर देता है। उन जैसे दुष्ट लोग इस पृथ्वी कहीं भी नहीं होंगे। उन दुष्टों के कारण ही, पापियों के कारण ही तो मुझे वह गांव छोड़ना पड़ा है। मेरा हृदय जल रहा है! मैं उनके प्रति घृणा से और प्रतिशोध से भरा हुआ है! उनका नाम ही न लें। उस गांव की याद ही न दिलाए!

उस बूढ़े ने कहा, फिर मैं क्षमा चाहता हूं। आप बैलगाड़ी आगे बढ़ा लें। इस गांव के लोग और भी बुरे हैं। मैं बहुत वर्षों से जानता हूं।

वह बैलगाड़ी आगे बढ़ी भी नहीं थी, कि एक घुड़सवार आकर रुक गया और उसने भी यही पूछा उसे बूढ़े से कि इस गांव में निवास करना चाहता हूं। कैसे हैं इस गांव के लोगों?

उस बूढ़े ने पूछा, उस गांव के लोग कैसे थे, जिस गांव से तुम आ रहे हो? घुड़सवार की आंखों में आंसू आ गए। उसकी आंखें किसी दूसरे लोक में चली गयी। उसका हृदय किन्हीं की स्मृतियों से भर गया और उसने कहा, उनकी याद भी मुझे आनंद से भर देती है। कितने प्यारे लोग थे। और मैं दुखी हूं कि उनको छोड़कर मुझे मजबूरियों में आना पड़ा है। लेकिन एक सपना मन में है कि कभी फिर उस गांव में वापस लौट कर बस जाऊं। वह गांव ही मेरी कब्र बने, यही मेरी कामना है! बहुत भले थे वे लो। उनकी याद मत दिलाना। उनकी याद से मेरा दिल टूट जाता है। उस बूढ़े ने कहा, इधर आओ। हम तुम्हारा स्वागत करते हैं। इस गांव के लोगों को तुम उस गांव के लोगों से भी अच्छा पाओगे। मैं इस गांव के लोगों को भली भांति जानता हूं।

काश! वह पहला बैलगाड़ी वाला आदमी भी यह बात सुन लेता। लेकिन वह जा चुका था।

लेकिन आपको मैं दोनों बात बताए देता हूं। इसके पहले कि आपकी बैलगाड़ी पृथ्वी के द्वार से आगे बढ़ जाए, मैं आपसे यह कह देना चाहता हूं कि इस पृथ्वी पर आप वैसे ही लोग पाएंगे, जैसे आप हैं। इस पृथ्वी को आप आनंदपूर्ण पाएंगे, अगर आपके हृदय में आनंद की वीणा बजनी शुरू हो गयी हो। और इस पृथ्वी को आप दुख से भरा हुआ पाएंगे, अगर आपके हृदय का दिया बुझा है और अंधकारपूर्ण है। आपके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है यहां! जरूर वही है, जो आप है।

जीवन को हम किस दृष्टि से देखते हैं? धार्मिक व्यक्ति जीवन से भागने वाला व्यक्ति नहीं है। भागने वाले होने चाहिए और होंगे कमजोर! भागने वाले होने चाहिए और होंगे सुस्त और आलसी! भागने वाले होने चाहिए और होंगे डरपोक और कायर! इन्हें जीवन का सामना करने का साहस और हिम्मत नहीं है।

धार्मिक व्यक्ति से ज्यादा साहसी तो कोई होता ही नहीं। उससे ज्यादा करेज तो किसी के भीतर होता ही नहीं। धार्मिक व्यक्ति भागता नहीं है, स्वयं को बदलता है। और स्वयं की बदलाहट के साथ ही पाता है कि सारा जीवन बदल गया है। जिस दिन वह खुद को बदल लेता है, उस दिन वह पाता है कि सारे जीवन की पूरी स्थिति बदल गयी है, जीवन कुछ और हो गया है।

हमारी आंखों पर निर्भर है वह, जिसे हम देखते हैं। हमारे प्राणों पर निर्भर है वह, जिसका हम अनुभव करते हैं। एक बात मैंने कल आपसे कही—आनंदभाव! जीवन के प्रति अहोभाव! जीवन के प्रति अनुग्रह का बोध! यह धार्मिक व्यक्ति की पहली जीवन—क्रांति का सूत्र है। आज दूसरे पर मुझे बात करनी है।

दूसरा सूत्र है जीवन के प्रति आश्चर्य का बोध! तीन हजार वर्षों में अगर मनुष्य ने कोई चीज खो दी है, तो वह आश्चर्य है। आश्चर्य के साथ ही खो गया है धर्म! आश्चर्य के साथ ही खो गया है जीवन का रहस्य। आश्चर्य के साथ ही खो गया है वह सब जो मिस्टीरियस है, वह सब जो महत्वपूर्ण है।

आश्चर्य हमने कैसे खो दिया? छोटे बच्चे तो आज भी आश्चर्य को लेकर पैदा होते हैं। लेकिन मां बाप उनके आश्चर्य का गला घोट देते हैं। हम उनके आश्चर्य को उनका बोध जगने के पहले नष्ट कर देते हैं। हमारी सारी शिक्षा संस्थाएं, हमारी सारी संस्कार व्यवस्था, हमारी सुविधा, हमारी संस्कृति, एक चीज की बुनियादी शत्रु है, और वह चीज है आश्चर्य का भाव!

पहले तो धर्मों ने आश्चर्य के भाव को नष्ट कर दिया। कैसे किया? जीवन में जो-जो अज्ञात था, अननोन था और अज्ञात ही नहीं, जो-जो अज्ञेय था, अननोएबल था, धर्मों ने यह घोषणा कर दी है कि हम यह सब जानते हैं। धर्मों ने कह दिया कि सृष्टि कैसे बनी, हमें पता है। कितने दिन में बनी है, हमें पता है। किस तारीख, सदी में और किस सन में बनी है, यह हमें पता है। धार्मिक लोगों ने बहुत असत्य कहा है। दुनिया में इससे बड़ा असत्य हो सकता है कि हमें पता है कि जीवन कैसे जन्मा? या हमें पता है कि परमात्मा क्या है?

परमात्मा और जीवन है अज्ञात। अज्ञात ही नहीं, अज्ञेय है। अननोन ही नहीं अननोए बल है।

लेकिन धर्मों ने यह घोषणा की है कि हमें पता है। धर्म गुरुओं ने यह घोषणा की कि हमें ज्ञात है। उन्होंने इसका बड़े जोर से दावा किया। और फिर उन्होंने यह भी कहा कि अगर कोई कहेगा कि हमें पता नहीं है, और यह कोई अगर सिद्ध करना चाहेगा कि तुम अज्ञानी हो, तो हम अपनी दलील को तलवार से सिद्ध करके बता देंगे कि हम जो कहते हैं वह ठीक है। जिसके हाथ में तलवार है, वह जो कहता है, वह सब ठीक है। मनुष्य को पता नहीं है कुछ भी। मनुष्य को अज्ञान बहुत गहरा है। लेकिन कुछ अहंकारी लोग थे, कुछ ऐसे लोग थे, जो यह स्वीकार नहीं कर सकते थे कि हम नहीं जानते। क्योंकि न जानने की स्वीकृति बहुत बड़ी हयूमैलिटी है, बहुत बड़ी नम्रता है। जो वस्तुतः धार्मिक होता है, उसी में यह विनम्रता नहीं होती। उसकी घोषणा यहां होती है कि मैं जानता हूं। न केवल यही, बल्कि वह तो कहता है कि दूसरे लोग गलत जानते हैं। ठीक तो केवल मैं ही जानता हूं। मेरी किताब ठीक, मेरा संप्रदाय ठीक, मेरा तीर्थंकर ठीक, मेरा पैंगबर ठीक, मेरा अवतार ठीक। मैं जो जानता हूं, वही ठीक है और बाकी सब गलत है। इस तरह की घोषणाओं की निरंतर पुनुरूक्ति से, और बच्चों के मन में बचपन से ही इन बातों को प्रविष्ट करा देने से, जीवन में जो अज्ञात था, वह विलीन हो गया, छिप गया। हमें लगने लगा कि हम सब कुछ जानते हैं। जब मनुष्य को लगता है कि मैं सब कुछ जानता हूं, तो आश्चर्य की कोई संभावना नहीं। तब विस्मय का कोई कारण नहीं रह जाता। तब मिस्ट्रीयस के प्रविष्ट होने का कोई द्वार नहीं रह जाता। आदमी अपने ज्ञान के कारागृह में ही बंद हो जाता है। चारों तरफ जो अज्ञात मौजूद है, उसके लिए कोई दरवाजा, कोई खिड़की नहीं रह जाती कि उससे प्रवेश किया जा सके।

पहले, धर्मों ने मनुष्य के आश्चर्य की हत्या की--धर्म शास्त्रों ने, धर्म गुरुओं ने। फिर उनके बाद आया विज्ञान। विज्ञान ने मनुष्य को यह भी खयाल दे दिया। कि हम सब जानते हैं। विज्ञान ने भी फिक्शन खड़े किए। धर्म ने भी खड़े किए थे। विज्ञान ने भी कल्पना के लोक खड़े किए।

क्राश्चियन्स कहते हैं कि परमात्मा ने चार हजार सौ वर्ष पूर्व दुनिया की रचना की! छह दिन में सृष्टि की और सातवें दिन विश्राम किया, रविवार के दिन। यह सब इन्हें पता है!

विज्ञान आया और विज्ञान ने पुरानी कल्पनाओं के लिए तो कहा कि ये कल्पनाएं हैं, फिक्शंस हैं! लेकिन नयी कल्पनाएं खड़ी कर दी। वैज्ञानिक कहते हैं कि यह तो पता नहीं परमात्मा ने सृष्टि की लेकिन अरबों वर्ष पहले धुएं की नीहारिकाएं थीं। उन्हीं नीहारिकाओं से सूरज का जन्म हुआ, सूरज से पृथ्वी का जन्म हुआ। पृथ्वी पर जो बड़े-बड़े यह जो हिंदू महासागर है, पैसिफिक है, अटलांटिक है ये गड्ढे इसलिए पैदा हो गए कि पृथ्वी से चांद का टुकड़ा अलग हो गया। पृथ्वी से चांद पैदा हुआ है। ये सब बातें भी अत्यंत झूठी और बेबुनियाद हैं। इन बातों के लिए भी न कोई कारण

है और न कोई वैज्ञानिक आधार है। लेकिन आदमी अपने अज्ञान को स्वीकार ही न हीं करना चाहता। किसी न किसी भांति वह यह भ्रम पैदा करना चाहता है कि वह सब जानता है।

एडिसन का नाम सुना होगा। एक हजार अविष्कार किए उसने। शायद दुनिया में कि सी एक आदमी ने इतने अविष्कार नहीं किए। विद्युत की बात को एडिसन जितना जानता था, उतना शायद कोई नहीं जानता था।

एडिसन अमरीका के एक छोटे से गांव में गया। उस गांव के स्कूल के बच्चों ने एक प्रदर्शनी सजायी थी। उसमें कुछ विद्युत के खेल खिलौने बनाए थे, जो विजली से चल ते थे। मोटर बनी थी, जहाज बनाया था! एडिसन भी देखने गया। बच्चों को क्या प ता था कि जो देखने आया है, विद्युत के विषय में जानने वाला दुनिया में सबसे बड़ा विचारक है। एडिसन उन बच्चों के खिलौनों को देखकर खुश खुश हुआ। उसने पूछा , बच्चों, ये चलते कैसे हैं? बच्चों ने कहा, इलेक्ट्रिसिटी से, विद्युत से। एडिसन ने पू छा, क्या मैं पूछ सकता हूं—यह विद्युत क्या है? बच्चे ठगे से रह गए। बच्चों के अध यापक भी ठगे से रह गए, प्रधान अध्यापक भी। उनमें से किसी को पता नहीं कि व ही एडिसन है।

फिर एडिसन ने कहा, आप घबराएं नहीं, मेरा नाम एडिसन है। आपने सुना होगा! वह बोले, सुना है! आप ही ने तो विद्युत की इतनी खोज बीन की है, अविष्कार कि ए हैं।

एडिसन ने कहा, तुम निश्चित रहो। चिंता की बात नहीं। मैं भी नहीं जानता हूं। मैं भी उत्तर नहीं दे सकता हूं, व्हाट इज दी इलेक्ट्रिसिटी! मुझे भी पता नहीं कि विद्युत क्या है।

हम केवल विद्युत का उपयोग करना सीख गए हैं। विद्युत क्या है, हमें पता नहीं। अ णु क्या है, हमें पता नहीं। अणुबम जरूर हम बनाना सीख गए हैं।

एक माली बगीचे में एक बीज बो देता है, और पौधा बड़ा हो जाता है। पूछें माली से, पौधा क्या है? पूछे माली से, बीज पौधा कैसे बन जाता है? माली कहेगा—मुझे पता नहीं। हालांकि बीज वह बो देता है, और पौधा बन जाता है। माली बीज से पौ धा बनाना सीख गया है। लेकिन पौधा क्या है, बीज क्या है, उसे पता नहीं।

विज्ञान भी इस पौधे में काम करने वाले मालियों जैसा है, जो बीज से पौधा बनाना सीख गया है। लेकिन जीवन क्या है, इसका विज्ञान के पास भी कोई उत्तर नहीं है। और मैं आपसे कहता हूं इसका मतलब यह न समझ लें कि धर्मों के पास इसका उ त्तर है। धर्मों के पास भी उत्तर नहीं है।

आज तक आदमी के लिए जीवन का जो चरम प्रश्न है, उनका कोई भी उत्तर उपल ब्ध नहीं है। पहले धार्मिक लोग धोखा देते रहे कि हमें उत्तरों का पता है। अब वैज्ञा निक धोखा दे रहे हैं, कि हमें उत्तरों का पता है। चाहे धार्मिक धोखा दें, चाहे वैज्ञानि क, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। आदमी को धोखा दिया जाता रहा है।

आज जब इस सीधे से सत्य का हम स्वीकार करने का साहस नहीं कर सके, कि ह
में ज्ञात नहीं है कि सत्य क्या है। सत्य अज्ञात है। जीवन और परमात्मा--सब अज्ञात
हैं। प्रार्थना करना चाहता हूं। अगर दुनिया में चाहते हैं आप कि धर्म वापस लौट अ
ाए; तो रहस्य कि बिना, मिस्टिरियम के बिना, विस्मय के विना आश्चर्य के बिना, ध
र्म वापस नहीं लौट सकता।

पंडितों ने, दार्शनिकों ने, फिलासफरों ने कल्पना के बड़े जाल रचे, शब्द के जाल रचे
, अनुमानों के जाल रचे और इतने तर्क दिए उन अनुमानों के कि सामान्य मनुष्य क
ो भ्रम हो जाता है कि शायद ये लोग जानते हैं, शायद इन्हें पता है। इस जानने के
भ्रम में, इस खयाल ने कि हम जान गए है, जीवन के प्रति हमारे जो कदम उठ स
कते थे, रहस्य के, आश्चर्य के विस्मय के, उनका उठना बंद हो गया। बचपन से ही
हम बच्चे के आश्चर्य की हत्या कर देते हैं।

शायद आपको खयाल भी न हो, बच्चों के साथ किए जाने वाले बहुत बड़े-बड़े अपरा
धों में यह बड़ा अपराध है। बच्चे पूछते हैं, वृक्ष क्या है? दरख्त हरे क्यों हैं? आका
श में तारे क्या हैं? तारों में रोशनी क्यों है? आदमी कहां से पैदा होता है? यह फू
ल इतना रंगीन क्यों है? तितली इतनी सुंदर क्यों है?

और हम सब सिर उठाकर इस भांति उत्तर देते हैं, जैसे हमें सब पता है और छोटे
बच्चे समझ लेते हैं कि पिता जो कहते हैं, ठीक कहते हैं। मां जो कहती है, ठीक क
हती है गुरु जो कहते हैं, ठीक कहते होंगे।

छोटे बच्चों को धोखा दिया जा रहा है, उनके इनोसेन्स का, उनकी निर्दोषता का शो
षण किया जा रहा है। ईमानदार मां बाप और ईमानदार शिक्षक कहेंगे कि यह हमें
कुछ भी पता नहीं। हम भी तितलियों के मामले में, आकाश और तारों के मामले में
उतने ही बच्चे हैं, जितने तुम हो। हमें कुछ भी पता नहीं। जीवन के संबंध में हम
भी उतने ही अज्ञानी हैं, जितने तुम हो। तो बच्चों के भीतर आश्चर्य और विस्मय
का विकास होगा। तब वे युवा होते-होते अत्यंत आश्चर्य से भर जाएंगे। उनके हृदय
में आश्चर्य लहरें लेने लगेगा। वे विस्मय से भर जाएंगे। वे जीवन के प्रति जानते हैं,
इस भाव से नहीं, नहीं जानते हैं इस भाव से जीवन को देखेंगे।

एक मां बच्चे को जन्म देती है। निश्चित ही अपने पेट में बड़ा करती है, लेकिन क्या
वह जानती है कि जो पेट में बड़ा हो रहा है वह क्या है? अगर मां इस भूल मग
पड़ जाए, तो गलती करती है। यद्यपि उसके ही पेट में जन्म ले रहा है, बड़ा हो रह
ा है, उसके ही खून और मांस मज्जा से पल रहा है। फिर भी वह उसके लिए अज्ञा
त है, अननोन है। वह उसे लिए पता नहीं कौन है और क्या है। वह बच्चा पैदा होग
ा। मां सोचती होगी, मैं जानती हूं अपने बच्चे को।

झूठी है यह बात। कोई मां अपने बेटे को नहीं जानती। कोई बाप अपने बेटे को नहीं
जानता। लेकिन परिचय हो जाता है, तो हम सोचते हैं कि हम जानते हैं। फिर हम
नाम रख लेते हैं राम और कृष्ण या और कुछ। सोचते हैं कि पहचान गए। असल
मग उसका कोई नाम नहीं है, जो पैदा हुआ है। सब नाम झूठे हैं जो हम दे रहे हैं।

और इन्हीं नामों को हम देंगे। और हम ही इन नामों को पुकारेंगे, और कहेंगे कि ह म भली भांति जानते हैं कि यह राम है।

यह राम नाम भी झूठा है। वह जो पीछे है, वह अनाम, नेमलेस है। उसका हमें कोई पता नहीं है, कि उसका क्या नाम है। जो घर में जन्म लेता है, हम उसे अपरिचित हैं, लेकिन रोज-रोज उसे देखते हैं, पहचानते हैं, तो लगता है कि उसे जानते हैं। पति सोचता है कि वह पत्नी को जानता है, पत्नी सोचती है कि वह पति को जान ती है। कोई किसी को नहीं जानता। पति और पत्नी तो बहुत दूर, हम स्वयं अपने को भी नहीं जानते। जिन्हें स्वयं का ही पता नहीं है, उन्हें और किस चीज का पता हो सकता है?

हमारा अज्ञान बहुत गहरा है, लेकिन इस ज्ञान का हम ज्ञान के शब्द सीख कर छिपा लेते हैं और ज्ञानी बन जाते हैं। अज्ञान से भी खतरनाक वह ज्ञान है, जो अज्ञान क ो छिपाने में सहयोगी बनता है। ज्ञान के व वस्त्र जो अज्ञान को छिपा लेते हैं बहुत खतरनाक हैं। आदमी ने जीवन मग जो भी सत्य है, सुंदर है और श्रेष्ठ है, उसे ज्ञान के वस्त्रों में ही खो दिया है।

पता है आपको सौंदर्य क्या है? पता है आपको सत्य क्या है? पता है आपको शुभ क या है? कुछ भी पता नहीं है। लेकिन चूंकि किसी को भी कुछ पता नहीं है, और ह म सभी यह घोषणा करते हैं कि हमें पता है इसलिए मनुष्य जाति में कोई उंगली उ ठा कर नहीं कहता कि झूठ बोल रहे हो। हम सब एक नाव पर सवार हैं, एक ही बीमारी से पीड़ित हैं, इसलिए हमें पता भी नहीं चलता कि कोई बड़ा झूठ जीवन में बोला जा रहा है। बहुत बड़े झूठ प्रचलित हुए हैं, लेकिन अगर झूठ सभी पकड़ लें, तो पता चलना बंद हो जाता है।

एक बार ऐसा हुआ कि एक गांव में कोई जादूगर आया। उसने गांव के कुएं में एक मंत्र पढ़ा और कोई चीज उसमें डाल दी और कहा कि जो इस कुएं का पानी पीए गा वह पागल हो जाएगा। सांझ होते-होते गांव के सभी लोगों ने उस कुएं का पानी पी लिया। क्योंकि प्यास नहीं सही जा सकती थी। इसे पागलपन कहा जा सकता है। मजबूरी थी, जानते हुए कि पागल हो जाएंगे—सारा गांव सांझ होते-होते पागल हो ग या। सिर्फ राजा, उसकी रानी और वजीर बच गए। उनके मकान में दूसरा कुआं था। वे गांव के कुएं का पानी नहीं पीते थे। वह बड़े प्रसन्न थे, कि हम अच्छे बच गए हैं । पूरा गांव तो पागल हो गया है। लेकिन सांझ को उन्हें पता चला कि भूल हो गयी हमारे बचने में। पूरे गांव के लोग जलूस बना कर घर के सामने आ गए और नारा लगाने लगे और उन्होंने कहा, ऐसा मालूम होता है कि राजा का दिमाग खराब हो गया है। यह राजा नहीं चल सकता। यह लोकतंत्र का जमाना है। पागल राजे नहीं चल सकते। उतरो नीचे महल से। तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। हम तुम्हारा इ लाज करेंगे।

राजा बहुत घबराया। उसके सिपाही भी पागल हो गए थे। उसके नौकर चाकर भी प ागल हो गए थे। उसके सैनिक भी पागल हो गए थे। उसने अपने वजीर से कहा, क्य

ा करें हम? बात उल्टी है। पागल ये लोग हो गए हैं। लेकिन भीड़ जब पागल हो जा
ती है तो बताना बहुत कठिन है कि वह पागल है। क्या करें हम?
वजीर ने कहा कि एक ही रास्ता है। पीछे के दरवाजे से हम भागे, जितनी तेजी से
भाग सकें। और उस कुएं का पानी पी लें, जिस कुएं का पानी इन लोगों ने पीया है।
तभी हम बच सकते हैं। वह राजा और वजीर भागे। उन्होंने जाकर उस कुएं का प
ानी पी लिया। उस रात उस गांव में बड़ा जलसा बनाया गया, गांव के लोगों ने बड़ी
खुशी मनायी और भगवान को धन्यवाद दिया कि राजा का दिमाग ठीक हो गया।
जब सारा समूह एक ही पागलपन से पीड़ित होता है, तो पहचानना कठिन हो जाता
है कि पागलपन क्या है? अगर कोई आदमी पहचान ले, तो उल्टे वही आदमी पाग
ल मालूम होता है, भीड़ पागल नहीं मालूम पड़ती।
जीसस क्राइस्ट पागल मालूम पड़ते हैं। इसलिए भीड़ ने उन्हें सूली पर लटका दिया।
सुकरात पागल मालूम पड़ता है, इसीलिए भीड़ ने उसे जहर पिला दिया। मंसूर पाग
ल मालूम पड़ते हैं, इसीलिए भीड़ ने उसकी चमड़ी खींच ली। गांधी पागल मालूम प.
डते हैं, भीड़ ने गोली मार दी। आज तक जितने लोगों ने भीड़ के कुएं का पानी नह
ीं पीया, उनके साथ यही व्यवहार हुआ और भीड़ निश्चित है। भीड़ को शक पैदा न
हीं होता, क्योंकि चारों तरफ सभी लोग गवाह होते हैं कि ठीक हैं हम।
मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं कि मनुष्य जाति की विक्षिप्तताओं में, मैंडनेसेस
में, पागलपन में ज्ञान का पागलपन सबसे बड़ा है। इस ज्ञान के कुएं से हम सभी ने
पानी पी लिया है। उस ज्ञान के कुएं का नाम चाहे हिंदुओं का कुंआ हो, चाहे मुसल
मानों का कुंआ हो चाहे जैनों का कुआं हो! इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कुएं का न
मा कुछ भी हो, लेकिन ज्ञान के कुएं से जिन्होंने भी पानी पी लिया है, उनके जीवन
से आश्चर्य का भाव नष्ट हो जाता है। जहां आश्चर्य गया, वहां धर्म गया, वहां दर्श
न गया! जहां विस्मय गया, जहां विस्मय गया, जहां जीवन व विस्मय से देखने वाली
आंखें चली गयी, वहां सब कुछ चला गया। वहां फिर कुछ भी शेष नहीं रह जाता।
फिर परमात्मा की कोई खोज भी नहीं हो सकती, क्योंकि परमात्मा अगर कुछ है,
तो वही है, जिसे हम मिस्टीरियस कहते हैं, जिसे मापने और जांचने का कोई उपाय
नहीं, जिसे तौलने की कोई तराजू नहीं, जिसका इशारा करने के लिए कोई शब्द न
हीं, जिसको बताने के लिए कोई शास्त्र नहीं, कोई सिद्धांत नहीं है। लेकिन शास्त्रों, ि
सद्धांतों और ज्ञान की दीवालें बीच में खड़ी हो जाती है और जीवन एक तरफ रह
जाता है।
चीन के एक गांव में बहुत बड़ा मेला लगा था। हजारों लोग वहां जमा थे। कहीं इक
ट्ठे होने का मौका भर मिल जाए, फिर लोग इकट्ठे होने से चुकते नहीं हैं। जरूर इक
ट्ठे हो जाते हैं। असल में, अकेले-अकेले होने से आदमी इतना घबराया होता है कि
जहां भी भीड़ का मौका मिलता है, पहुंच जाता है। एक कुंआ था उस मेले के किना
रे। उस कुएं पर कोई पाट नहीं था, कोई घेरा नहीं था। एक आदमी उस कुएं में गि
र गया। वह बहुत जोर-जोर से कुएं के भीतर से चिल्लाने लगा कि मुझे बचाओ—मैं

मरा जा रहा हूं। लेकिन उस मेले में इतना शोर था कि कौन सुनता उसकी चीख पुकार! एक बौद्ध भिक्षुक कुएं के पास से निकला। उसे सुनाई पड़ा कि कोई कुएं के भीतर से चिल्ला रहा है। उस भिक्षु ने झांक कर नीचे देखा और कहा, मेरे मित्र, ज ीवन में आनंद ही क्या है, जो तुम बचने की कामना करते हो? जीवन एक दुख है, जीवन पाप है। बचने से क्या प्रयोजन? और यह जो तृष्णा बचने की, यह जो लस्ट फार लाइफ है, यही अगले जन्म का कर्म बंधन हो जाएगा! शांत रहो! उस आदमी ने कहा, मुझे उपदेश नहीं चाहिए। कृपा करके मुझे बाहर निकालिए। लेकिन भिक्षु ने कहा, मैं किसी के कर्मों के बीच में बाधा नहीं बन सकता। तुमने कुछ किया होगा । किसी को कुएं में गिराया होगा, इसीलिए तुम गिरे हो। तुम भी पिछले जन्म का कर्मफल भोगते हो मित्र। सुनी नहीं तुमने यह सिद्धांत की बात? और अब मरते क्ष णों में मोह छोड़ो जीवन का! शांति से मरो, तो निर्वाण हो जाएगा, नहीं तो फिर लौट-लौट कर आना पड़ेगा। भिक्षु आगे बढ़ गया।

उसके पीछे ही कनफ्यूशियस का एक संन्यासी आया। उसने भी कुएं में चिल्लाते हुए आदमी की आवाज सुनी। वह किनारे गया और झांका! उसने कहा कि समझ गया, कनफ्यूशियस ने लिखा है अपनी किताब में, कि वही राज्य श्रेष्ठ है, जो अपने कुओं पर पाट बांध देता है! जो कुओं पर पाट नहीं बांधता है, वह राजा अन्यायी है। तुम घबराओ मत! हम आंदोलन खड़ा करेंगे, हम जनता को समझाएंगे! अभी हम मेले में जाते हैं। अभी हम राजा के महल पर पहुंचते हैं। हर कुएं पर पाट होना ही चाहि ए, ताकि कोई गिर न सके।

उस आदमी ने कहा, वह बाद में करना। मैं मरा जा रहा हूं। पहले मुझे बाहर निका लो। लेकिन उसने कहा, सवाल तुम्हारा नहीं, सवाल जनता जनार्दन का है। एक आ दमी बचता है, मरता है, यह सवाल नहीं है। कुएं पर पाट होना चाहिए। और तुम घबराओ मत, निश्चित रहो, तुम्हारे बच्चे ऐसी दुनिया में रहेंगे, जहां कुएं पर पाट होंगे।

उसने कहा, बच्चों का सवाल नहीं है। मरा तो मैं जाता हूं।

उस संन्यासी ने कहा, बच्चों के लिए एक बड़ी कुर्बानी मां-बाप को करनी पड़ती है। तो तुम मरो, लेकिन बच्चे ऐसी दुनिया में रहेंगे, जहां कोई कुएं में नहीं गिर सकेगा। तुम बेफिक्र रहो।

वह कंफ्यूशियस का संन्यासी आगे बढ़ गया। उसने आकर भीड़ में शोरगुल मचाया। एक मंच पर सवार हो गया और समझाना शुरू कर दिया, कि ऐसे कुएं नहीं रहने चाहिए, जिन पर पाट न हों।

उन दोनों के चले जाने के बाद एक ईसाई मिशनरी वहां से निकला। कुएं में किसी को चिल्लाता देखकर वह तत्क्षण कुएं में कूद पड़ा और उस आदमी को बाहर निका ल लाया। उस आदमी ने कहा, बहुत बहुत धन्यवाद! तुम्हीं सच्चे धार्मिक आदमी मा लूम पड़ते हो। एक बौद्ध भिक्षु निकला था, उसने कहा कि अपने कर्मों का फल भोग

रहे हो और कंफ्यूशियस के भिक्षु ने कहा था कि हम राज्य में परिवर्तन लाने के लिए आंदोलन चलाएंगे! लेकिन तुम्हीं सच्चे धार्मिक हो!

उस ईसाई मिशनरी ने कहा, नहीं मित्र, माफ करो। मैंने तो तुम्हें इसलिए निकाला है कुएं से, क्योंकि जीसस क्राइस्ट ने कहा है, जो सेवा करता है उसको स्वर्ग मिलता है। हम तो यही चाहते हैं कि रोज-रोज लोग कुएं में गिरते रहे और हम उन्हें निकालते रहे। जितने ज्यादा लोग कुएं में गिरेंगे, उतनी ही हमारी सेवा, उतना ही स्वर्ग पर हमारा अधिकार। वह किंगडम आफ गोड जो है, उसके हम मालिक हो जाएंगे। तुम रोज-रोज गिरो! अपने घर के लोगों को भी समझाओ, क्योंकि सेवा करना बहुत जरूरी है। बिना सर्विस से कोई परमात्मा तक पहुंचता ही नहीं है।

आदमी कुएं में मर रहा है, लेकिन उसे देखने वाला कोई नहीं है, क्योंकि शास्त्र बीच में आ जाते हैं। जीवन चारों तरफ है, लेकिन उसे देखने वाला कोई नहीं है, क्योंकि शब्द बीच में आ जाते हैं। परमात्मा हर क्षण मौजूद है, लेकिन उससे पहचान नहीं होती, क्योंकि ज्ञान बीच में आ जाता है।

जीवन और मनुष्य के बीच ज्ञान से बड़ी चीज, कोई बड़ा अवरोध, कोई हिण्डरेन्स, कोई पहाड़ नहीं है। लेकिन हम समझते हैं कि ज्ञान बड़ी ऊंची बात है। हम समझते हैं कि ज्ञान अर्जित कर लिया, तो बहुत कुछ कमाई कर ली।

ज्ञान वही है जो इस सरलता से कहते हैं कि हम नहीं जानते हैं। केवल वे ही विनम्र लोग, केवल वे ही विनम्र चित्त, वे ही हंबल माइंडस जो जानते हैं कि हमें कुछ भी पता नहीं, वे ही उस परम सत्य के निकट पहुंच पाते हैं और उसे जान पाते हैं। ज्ञान के भ्रम वाले लोग कभी ज्ञान को उपलब्ध नहीं होते। वे अज्ञान में ही जीते और नष्ट हो जाते हैं। यह बात बड़ी उल्टी मालूम होती है। मैं आपसे कह रहा हूं कि अगर अपने अज्ञान का परिपूर्ण बोध हो जाता है, तो जीवन में ज्ञान का जन्म हो सकता है।

लेकिन, वह ज्ञान बहुत भिन्न है उस ज्ञान से, जो शास्त्र से मिलता है—गीता, पुराण, और बाइबिल से, उपनिषदों और वेदों से, महावीर और बुद्ध से मिलता है। शब्दों से जो ज्ञान मिलता है, वह ज्ञान नहीं। शब्द हैं डेड, बेजान। उनका कोई मूल्य नहीं, यानि कोई जीवन नहीं।

खुद के प्राणों के साक्षात से जो मिलता है, वह बात और ही है। उसे जानने के लिए अज्ञान का स्पष्ट बोध होना चाहिए। जिसे अज्ञान का बोध हो जाता है, जो जानता है कि मैं नहीं जानता उसके लिए रहस्य के द्वार खुल जाते हैं। लेकिन हमने संग्रह बहुत कर रखा है। हमने कंठस्थ कर रखे हैं ग्रंथ। हमने शब्द सीख रखे हैं। हम तोतों की भांति हैं, जिन्हें सब कुछ सिखा दिया गया है, और याद करा दिया गया है। हम इन्हीं शब्दों को दोहराते रहते हैं।

कोई पूछे आपसे, ईश्वर है? कौन सा उत्तर आता है आपके बीच? मैं आपसे पूछता हूं, ईश्वर है? कोई उत्तर आता है, आपके भीतर से ?

किसी के भीतर आता होगा, है—अगर उसकी किताबों में ऐसा लिखा है, अगर उसके गुरुओं ने ऐसा बताया है। किसी के भीतर आता होगा, नहीं है—अगर उसकी किता बों में ऐसा लिखा है और गुरुओं ने ऐसा बताया है।

हिंदुस्तान में पूछो, ईश्वर है? तो बताते हैं, है! और रूस मग पूछा, तो वे लोग बता ते हैं, नहीं है! हम सोचते हैं कि हिंदुस्तान बड़ा आस्तिक है और रूस बड़ा नास्तिक है। नहीं साहब! दोनों रटे हुए तोते हैं। हिंदुस्तान के तोते को बताया जा रहा है कि ईश्वर है तो वे कहते हैं कि ईश्वर है। रूस के तोते को बताया जा रहा है कि ईश्व र नहीं है तो वे कहते हैं कि ईश्वर नहीं है। जो सीखी हुई बातें दोहरा रहा है, वह आदमी के पद से नीचे गिर रहा है, अपने को तोता बना रहा है, अपने को मशीन बना रहा है। लेकिन अगर मैं पूछूं—ईश्वर है? और आपके भीतर कोई उत्तर न उठे, न हां, न ना; मैं पूछूं—ईश्वर है? और आपके भीतर सन्नाटा छा जाए।

और यह सन्नाटा छा जाना ही सत्य होगा। क्योंकि आप नहीं जानते हैं कि ईश्वर है या नहीं। मैं पूछूं ईश्वर है? और आपके भीतर साइलेंस हो जाए, आपके भीतर कोई उत्तर न आए, आप मौन रह जाए, आपके भीतर कोई शब्द घनीभूत न हो, आपके भीतर कोई रिस्पोंस न हो, आपके भीतर नो रिस्पोंस की स्थिति हो जाए।

मैं पूछूं—ईश्वर है? और आपके भीतर सब सन्नाटा हो जाए! इस स्थिति को मैं कह रहा हूं—अज्ञान का बोध! कि मुझे पता नहीं है! और इसी सन्नाटे में उसकी पगध्वनि यां सुनाई देना शुरू होती है, जो परमात्मा है। इसी मौन में, इसी साइलेंस में जीवन का संस्पर्श उपलब्ध होता है।

और तब फिर उसे खोजने हिमालय में नहीं जाना पड़ता है, गंगा के तट की यात्राएं नहीं करनी पड़ती हैं। और तक खोजने काशी और मक्का और मदीना नहीं जाना पड़ता है, येरूशलम की यात्रा नहीं करनी होती है। मंदिर और मस्जिद में सिर नहीं टेकने पड़ते हैं।

इतने शांत मन से, ऐसे मन से, ऐसे माइंड से जिसके पास उत्तर नहीं है—क्योंकि उ त्तर सब सीखे हुए हैं और मैं तो कुछ भी नहीं जानता हूं। अगर आपको मन उस अ वस्था में आ जाएगा, जहां से उत्तर नहीं आता है, फिर चुप्पी और मन रह जाता है, तो आप एक अदभुत द्वार को खोलने में समर्थ हो जाएंगे, जिसकी कल्पना भी नहीं हो सकती। उस विनम्र मौन में, उस हंबल साइलेंस में कुछ घटित होता है, कोई क्र ांति हो जाती है और एक नए मनुष्य का जन्म हो जाता है।

अब तक जिन लोगों ने जाना है, उन्होंने ज्ञान से नहीं जाना है, मौन से जाना है। ज्ञा न बहुत बकवाद है, मुखर है। परमात्मा के निकट तो वे पहुंचते हैं, जो सब भांति मौन और शांत हो जाते हैं—जिनके भीतर कोई उत्तर नहीं।

इसलिए मैं आज की रात में आपसे सब उत्तर छीन लेना चाहता हूं। सब उत्तर आप यही छोड़ जाए। अपनी ज्ञान की झोली में जितने कंकड़-पत्थर हों, वे यहीं छोड़ जा ए। आम तौर से साधु समझाते हैं कि हमने जो समझाया है, उसे अपनी गांठ में बां ध कर ले जाना यहां मत छोड़ जाना। मैं उल्टी बात समझाता हूं। मैंने जो समझाया

है, वह और मुझसे पहले जिन्होंने समझाया वह सब, कृपा करके यहीं छोड़ जाए। और आप खाली, बिलकुल रिक्त मन को लेकर, अगर आज रात ही सो सकें, तो आप निद्रा में ही कोई द्वार खोल सकते हैं। अगर आज ही सारे ज्ञान को छोड़कर बिस्तर पर चुपचाप लेट सकें, तो हो सकता है कि कोई अनजान अतिथि आपके द्वार खटखटाने लगे--खोलो, मैं आ गया। क्योंकि जो आदमी अपने ही ज्ञान से भरा है, उसके भीतर परमात्मा के ज्ञान के लायक अवकाश नहीं होता, स्पेस नहीं होती। जो अपने ज्ञान को छोड़ देता है, उसमें परमात्मा के ज्ञान का अवतरण शुरू हो जाता है। आकाश से वर्षा होती है। वर्षा के दिनों में पहाड़ों पर भी पानी गिरता है, झीलों में भी गिरता है, गड्ढों में भी गिरता है, लेकिन पहाड़ पानी से खाली रह जाते हैं, क्योंकि वे पहले से ही भरे हुए हैं। लेकिन गड्ढे जो पानी से भर जाते हैं, क्योंकि वे पहले से ही खाली हैं।

बादल कुछ भेद नहीं करते कि कोई पहाड़ है कि गड्ढा है। वे दोनों पर पानी गिरा देते हैं। लेकिन गिरा हुआ पानी व्यर्थ जाता है। पहाड़ खाली के खाली रह जाते हैं, कयोंकि अपने में भरे हैं।

जीवन क्रांति का दूसरा सूत्र हैं--स्वयं को ज्ञान से खाली कर लो। बड़ी मुश्किल है यह बात। आदमी और सब कुछ छोड़ सकता है, ज्ञान छोड़ने में प्राण कांपते हैं। धन छोड़ सकते हैं। हजारों लोग धन छोड़कर त्यागी हो जाते हैं। पत्नी बच्चों को छोड़ सकते हैं। सैकड़ों लोग संन्यासी हो जाते हैं। लेकिन ज्ञान नहीं छोड़ा जाता। एक आदमी संन्यासी हो जाता है, फिर भी मुसलमान बना रहता है, हिंदू बना रहता है।

मैं तो हैरान हूं कि कैसे पागलों की यह दुनिया है। गृहस्थ हिंदू हो, मुसलमान हो, ईसाई हो, जैन हो, तो समझ में आता है। लेकिन साधु जैन, हिंदू मुसलमान या ईसाई कैसे हो सकता है? जिसने समाज ही छोड़ दिया उसको समाज का ज्ञान नहीं छोड़ पाया अब तक। समाज ने जो ज्ञान दिया है, उसको वह पकड़े बैठा है। एक साधु भी कहता है कि मैं जैन हूं, हिंदू हूं, मुसलमान हूं। ये बीमारियां साधुओं के पास नहीं होनी चाहिए।

ज्ञान मनुष्य के अहंकार की बड़ी गहरी पकड़ है। न पद है अहंकार, न धन है अहंकार। ज्ञान अहंकार की सूक्ष्मतम, गहरी से गहरी पकड़ है। इसलिए जिनको यह खयाल हो जाता है कि हम जानते हैं, वे भटक जाते हैं। उनके जानने के रास्ते बंद हो जाते हैं।

सुकरात बूढ़ा हो गया था। बुढ़ापे में सुकरात ने बहुत अजीब बात कहना शुरू कर दिया था। कहने लगा कि मैं कुछ नहीं जानता हूं एक आदमी ने कहा कि हम तो यह सुन कर आए थे कि आप परम ज्ञान हैं।

सुकरात ने कहा, किसी ने गलती से कह दिया होगा। जब मैं जवान था तब मुझे ऐसा भ्रम था। ऐसा इलूजन मुझे भी था कि मैं जानता हूं। लेकिन जैसे-जैसे मेरा अनुभव बढ़ा, जैसे-जैसे मैंने जीवन का संपर्क पाया, जैसे-जैसे जीवन में मेरी गति हुई, जैसे-जैसे मैं जीवन की धारा में डूबा, वैसे-वैसे मुझे पता चला कि मैं क्या जानता हूं। मैं

कुछ भी नहीं जानता हूं। आज मैं कह सकता हूं कि मुझे कुछ भी पता नहीं। मुझ से बड़ा अज्ञानी कोई नहीं। सुकरात ने जान लिया होगा। सुकरात जान ही लेगा। सुक रात के जानने के बीच की सारी बाधाएं गिर गयी। एक ही बाधा थी—इस बात का खयाल कि मैं जानता हूं। मैं जानता हूं—यह इतना बड़ा और कठोर पाषाण खड़ा कर देता है मनुष्य के भीतर। फिर और जाने का सवाल ही नहीं रहा।

एक फकीर मर रहा था, वह मरण शय्या पर पड़ा था। कुछ महाशय इकट्ठे थे। जिंदा फकीर के पास कभी कोई इकट्ठा नहीं होता। या तो मरते हुए फकीरों के पास लोग इकट्ठा होते हैं, या मरे हुओं के पास इकट्ठा होते हैं। आदमी मुर्दे का बड़ा पुराना पू जक है। मरते हुए उस फकीर के पास लोग इकट्ठा थे और पूछने लगे कि तुमने ज्ञान कहीं पाया? तुम्हें ज्ञान कैसे मिला? तुमने कैसे जाना जीवन को? तुम प्रभु को कैसे उपलब्ध हुए हो? उसने कहा, यह बड़ा कठिन्न मामला है। मैं एक गांव से गुजर रह ा था। मैंने बड़े-बड़े गुरुओं की शरण ली, लेकिन कोई गुरु, गुरु साबित न हुआ। अस ल में जो भी कहते हैं। हम गुरु हैं, वे दुकानदार हैं, वे कभी गुरु नहीं हो सकते। तो बहुत-बहुत गुरु खोजे, कहीं कोई ज्ञान नहीं मिला। बहुत शास्त्र देखे, बहुत सिद्धांत याद हो गए, लेकिन जीवन में कोई फर्क न हुआ, रोशनी न उतरी। एक भ्रम पैदा ह ो गया कि मैं भी जानता हूं।

तो वह फकीर एक गांव से गुजर रहा था। जिस आदमी को यह भ्रम हो जाता है, मैं जानता हूं, उसके बाद दूसरी चीज शुरू होती है। कोई फंस भर जाए उसके चंगुल में, वह बिना उपदेश दिए रह नहीं सकता। तो फकीर इस तलाश में था कि कोई एकाध श्रद्धालु मिल जाए, तो उसे उपदेश दे दे। कोई भी नहीं मिला। एक छोटा सा बच्चा मिल गया। वह एक हाथ में दिया लिए मंदिर में दिया रखने जा रहा था। उ सने उस बच्चे से पूछा, बेटे ठहर, पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दे दे। इस दिए में रोशन ी कहां से आयी है, बता सकता है?

उस फकीर ने कहा, मैंने सोचा था कि बच्चा उत्तर नहीं दे सकेगा, फिर मुझे उपदेश देने का मौका मिल जाएगा। लेकिन बच्चे ने मुझे बड़ी मुश्किल में डाल दिया। वह बच्चा हंसने लगा और उसने फूंक मार कर दिया बुझा दिया और कहा, स्वामी जी, ज्योति कहां चली गयी? आप उपदेश दे सकते हैं? अगर आप बता देंगे कि ज्योति कहां चली गयी तो मैं भी बता दूंगा कि ज्योति कहां से आयी है! मेरे सारे पढ़े लिखे शास्त्र व्यर्थ हो गए। गुरुओं से पायी मेरी सारी शिक्षा दो कौड़ी की हो गयी। मैं नि पट अज्ञानी की तरह खड़ा हो गया। और मुझे खयाल आया, मैं यह भी नहीं बता स कता कि ज्योति कहां चली गयी! मैं तो यह भी बताता हूं कि सृष्टि कहां से आयी और सृष्टि कहां विलीन हो जाएगी। मैं तो यह भी बताता हूं कि परमात्मा क्या है। और मुझे यह भी पता नहीं कि ज्योति कहां चली गयी? मैंने उस बच्चे के चरणों में सिर रख दिया मैं कृतार्थ हो गया। वही मेरा पहला गुरु है।

क्या आप अपने ज्ञान को छोड़ देने का साहस कर सकते हैं? अगर कर सकते हैं, तो आपके भी जीवन में क्रांति हो सकती है। क्योंकि ज्ञान का भाव छूटते ही जीवन भ

र जाएगा एक रहस्य से। सब अपरिचित हो जाएगा। और सब अज्ञात। जिस वृक्ष के पास से आप रोज-रोज गुजरते हैं, आज जब आप फिर उसके पास से निकलेंगे, तो पाएंगे कि यह वही वृक्ष नहीं है जो कल देखा था, ये वे ही पत्ते नहीं हैं।
जब घर लौटेंगे और उन्हीं बच्चों को देखें जिनको कल देखा था, तो आप पाएंगे कि ये वे ही बच्चे नहीं हैं। गंगा में बहुत पानी बह गया। जीवन की गंगा कभी बहुत बदल जाती है। सब नया हो जाएगा, सब आश्चर्य से भर जाएगा।
और उस दिन ही उसकी गंध मिलना शुरू होनी है, उसकी संगीत ध्वनि आती है, जिसे हम प्रभु कहते हैं। परमात्मा के मंदिर के निकट केवल वे ही पहुंचते हैं, जिनकी आत्माएं आश्चर्य से भर उठती हैं। यह दूसरा सूत्र है जीवन क्रांति का। कल मैंने कहा, अहोभाव धन्यता और आज कहता हूं। आश्चर्य, विमस्य रहस्य!
कल तीसरे सूत्र की बात करूंगा। आप भी हाथ में दिए लेकर आए हैं। मैं फूंक मार कर बुझा देता हूं उनकी ज्योति, और पूछता हूं, ज्योति कहां चली गयी है? और अगर कोई उत्तर नहीं मिले, कोई उत्तर ज्ञात न हो और उसी अनुत्तर, उसी निरुत्तर दिशा में आप घर बिदा हो जाए, तो दूसरे सूत्र की झलक मिलना शुरू हो जाएगी।
मेरी बातें इतने प्रेम और शांति से सुनी, इसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।
जीवन में जागरूकता
मेरे प्रिय आत्मन
एक छोटी सी कहानी से आज की चर्चा आरंभ करूंगा।
एक पूर्णिमा की रात एक छोटे से गांव में एक बड़ी अदभुत घटना घट गयी थी। कुछ जवान लड़कों ने शराबखाने में जाकर शराब पी ली थी, और जब वे शराब के नशे में मदमस्त हो गए थे, और शराबखाने से बाहर निकले थे, तो चांद की बरसती हुई चांदनी में यह खयाल आ गया कि हम जाए नदी पर और नौका विहार करें। रात बड़ी सुंदर थी और नशे से भरी हुई थी। वे गीत गाते हुए नदी किनारे पहुंच गए। वहां नाव बंधी थी। मछुवे नाव बांधकर घर जा चुके थे। आधी रात हो गयी थी। वे सब एक नाव में सवार हो गए। पतवार उठा ली और नाव खेना शुरू कर दिया। देर रात तक नाव खेते रहे। सुबह होने को आयी। सुबह की ठंडी हवाओं ने उन्हें सचेत किया। उनका नशा कुछ कम हुआ और उन्होंने सोचा कि हम न जाने कितने दूर निकल आए हैं, आधी रात से हम नाव चला रहे हैं।
उनमें से एक ने सोचा कि उचित है कि मैं नीचे उतर कर देख लूं कि हम किस दिशा में आ गए हैं, क्योंकि नशे में जो चलते हैं, उन्हें दिशा का कुछ भी पता नहीं रहता है कि हम कहां पहुंच गए हैं और किस जगह हैं। जब तक यह न समझ लें तब तक हम वापस भी कैसे लौटेंगे? और फिर सुबह भी होने वाली है, गांव के लोग चिंतित हो जाएंगे। एक युवक नीचे उतरा और जोर से हंसने लगा। दूसरे युवक ने पूछा, हंसते क्यों हो, बात क्या है? उसने कहा, तुम भी नीचे उतर जाओ और तुम भी हंसो। वे सारे युवक नीचे उतरे और हंसने लगे। बात क्या थी? अगर आप भी

उस नाव में होते और नीचे उतरते तो आप भी हंसते। बात कुछ ऐसी ही थी। वे व
ही के वही खड़े थे, नाव कहीं भी नहीं गयी थी। असल में वे नाव की जंजीर खोलन
ा भूल गए थे। जंजीर किनारे से बंधी थी। उन्होंने बहुत पतवार चलायी और बहुत
श्रम किया, लेकिन सारा श्रम व्यर्थ हो गया था, क्योंकि किनारे से बंधी हुई नावें को
ई यात्रा नहीं करती।

मैंने दो दिनों की चर्चाओं में मनुष्य की आत्मा की नाव किस खूंटियों में बंधी है, उन
दो खूंटियों की आपसे बात की—वे लोग जो ज्ञान से बंध जाते हैं और जिनके जीवन
में विस्मय नहीं होता। ऐसे लोगों की आत्मा की नाव कभी परमात्मा तक नहीं पहुं
च पाती। वे वही खड़े रह जाते हैं, जहां से यात्रा शुरू हो जाती है। श्रम वे बहुत क
रते हैं, पतवार वे बहुत चलाते हैं, समय वे बहुत लगाते हैं, लेकिन नाव कही पहुंच
ती नहीं है, वे वहीं रह जाते हैं।

जिन लोगों की दृष्टि जीवन के प्रति दुख की होती है, संताप की होती है, जो जीवन
को अंधकारपूर्ण आंखों से देखते हैं, जिन्हें जीवन के प्रति अहोभाव का, आनंद के भ
ाव का कोई अनुभव नहीं होता, जो जीवन को आनंद की आंखों से देखने की क्षमता
और पात्रता नहीं जुटा पाते उनकी नाव भी किनारे से बंधी रह जाती है। वे भी क
भी जीवन के सागर में नौका को खे नहीं पाते।

आज मैं तीसरी खूंटी की बात करूंगा कि कौन से लोग बंधे रह जाते हैं। जीवन को
दुख से देखने वाले, जीवन का अंधकारपूर्ण दृष्टि से देखने वाले, जीवन के सत्य को
शास्त्रों से सिखाने वाले, स्वयं के अज्ञान को शब्दों और सिद्धांतों में छिपा लेने वाले
ये बंधे रह जाते हैं। आज मुझे आखिरी खूंटी की भी बात करनी है जिससे आदमी बं
धा रह जाता है। और जो उस खूंटी से बंधा रह जाता है, वह एक कोल्हू के बैल क
ी तरह चक्कर लगाता है, घूमता है, एक ही जगह पर घूमता है। घूमते-घूमते नष्ट
और समाप्त हो जाता है। लेकिन किसी कोल्हू के बैल की तरह चक्कर लगाता है।
सारा जीवन इन्हीं चक्करों में व्यर्थ चला जाता है।

मैं एक गांव में गया था। एक बैल जीवन भर कोल्हू चलाने का काम करता रहा। ि
फर वह बूढ़ा हो गया और उसके मालिक ने उसे काम के योग्य न समझ कर छोड़ ि
दया। खुला ही घूमता रहता था। लेकिन मैं बड़ा हैरान हुआ। वह गोल चक्कर लगा
ता था। जीवनभर की उसकी यह आदती थी। आज कोई बीच में खूंटी भी नहीं थी।
आज किसी कोल्हू में भी वह नहीं जुता था। लेकिन जो जीवन भर के बोल चक्करों
में घूमा है, वह गोल चक्करों में घूमने की आदत के कारण, गोल-गोल ही घूमता
है। गांव के लोगों ने उस बैल को समझाने की बहुत कोशिश की कि इस तरह मत
घूमो! लेकिन बैल कहीं किसी की सुनते हैं? बैल तो दूर, आदमी ही नहीं सुनते, तो
बैल कैसे सुनेंगे? उस गांव के लोग जैसे नासमझ थे, उस बैल को समझाते थे कि
सीधे चलो, गोल-गोल घूमने की जरूरत नहीं है, क्योंकि जो गोल-गोल घूमता है, व
ह कहीं भी नहीं पहुंचता है। जिसे पहुंचना हो, उसे सीधे जाना होता है, गोल नहीं
घूमना होता है। मुझे हंसी आयी थी गांव के उन लोगों पर। मैं भी उस गांव के लोग

ों को समझाने गया था। गांव के एक बूढ़े आदमी ने कहा कि तुम हम पर हंसते हो कि हम बैलों को समझाते हैं। हम तुम पर हंसते हैं कि तुम आदमी को समझाते हो। न बैल सुनते हैं, न आदमी सुनता है। और बैल तो सुन भी सकते हैं कभी, क्योंकि बैल सीधे और सरल होते हैं, परंतु आदमी तो बहुत तिरछा है, वह नहीं सुन सकता है।

फिर भी चाहे यह गलती ही सही, नासमझी ही सही, आदमी को समझाना ही पड़ेगा। वह सुने या न सुने, उसे कहना ही पड़ेगा। क्या कहना है उस?

अंतिम खूंटी की बात आज मैं आप से कहना चाहता हूं। क्या कहना चाहता हूं? वह कैसी खूंटी है कि जिसके पास आदमी एक कोल्हू का बैल बन जाता है, एक अमृत मयी आत्मा नहीं? एक बंधा हुआ पशु बन जाता है? शायद आपको पशु शब्द का अर्थ पता न हो! पशु शब्द का अर्थ है, जो पास में बंधा हो। बंधे हुए होने को ही पशु कहते हैं। जो बंधा है और गोल-गोल घूमता है, वही पशु है। पशु का अर्थ है जो पास में बंधा है, वही पशु है। हम सारे लोग ही बंध हैं। हमारे भीतर मनुष्य का भी जन्म नहीं हो पाता, परमात्मा तो बहुत दूर की मंजिल है! आदमी भी होना बहुत कठिन है।

डायोजनीज का नाम सुना होगा। यह भी हो सकता है कि डायोजनीज कहीं न कहीं आपको मिल गया हो। सुनते हैं, दो हजार साल पहले वह पैदा हुआ था और दिन की भर रोशनी में जलती हुई लालटेन लेकर गांवों में घूमा करता था और हर आदमी के चेहरे के पास लालटेन ले जाकर देखता था।

लोग चौंक जाते थे कि क्या बात है! क्या देखना चाहते हैं, और दिन की रोशनी में? जब कि सूरज आकाश में है, तो लालटेन किसलिए लिए हुए हैं? दिमाग खराब हो गया है? डायोजनीज कहता, दिमाग मेरा खराब नहीं हुआ है। मैं आदमी की तलाश में हूं। मैं हर आदमी के चेहरे को रोशनी में देखने की कोशिश करता हूं कि यह आदमी है या नहीं है? क्योंकि चेहरे बहुत धोखा देते हैं। चेहरों से ऐसा मालूम होता है कि सब आदमी है और भीतर आदमियत का कोई निवास नहीं होता।

आदमी ही होना कठिन है, परमात्मा तो दूर की मंजिल है। लेकिन यह भी आपसे कहूं जो आदमी हो जाता है, उसके लिए परमात्मा की मंजिल भी बहुत निकट हो जाती है। कौन सी चीज है, जो हमें बांधे है, जिसके कारण हम पशु हो जाते हैं।

एक छोटी सी कहानी कहूं। उससे शायद इशारा खयाल में आ सके कि कौन सी चीज हमें बांधे हुए हैं! कौन सी चीज के इर्द गिर्द हम जीवन भर घूमते हैं और नष्ट होते हैं2 कुछ ऐसी चीजें हैं, जिनके पीछे हम पागल की तरह चक्कर लगाते हैं और व्यर्थ हो जाते हैं।

एक जंगल के पास एक छोटा सा गांव था। और एक दिन सुबह एक सम्राट शिकार खेलते-खेलते भटक गया और उस गांव में आया। रात भर का थका मांदा था और उसे भूख लगी थी। वह गांव के पहली ही एक झोपड़ी पर रुका, और उस झोपड़ी के बूढ़े आदमी से कहा, क्या मुझे दो अंडे उपलब्ध हो सकते हैं? थोड़ी चाय मिल सक

ती है? उस बूढ़े ने कहा, जरूर! स्वागत है आपका! आइए। वह सम्राट बैठ गया उस झोपड़ी में। उसे चाय और दो अंडे दिए गए। नाश्ता कर लेने के बाद उसने इन अंडों का दाम पूछा। बूढ़े आदमी ने कहा, ज्यादा नहीं केवल १०० रु। सम्राट सुन कर तो हैरान हो गया। उसने बहुत महंगी चीजें खरीदी थीं, लेकर कभी सोचा भी न था कि दो अंडे के दाम भी १०० रु हो सकते हैं। सम्राट ने बूढ़े आदमी से पूछा, आर एग्ज सो रेयर हियर--क्या इतना कठिन है अंडे मिलना यहां? बूढ़ा बोला नहीं! एग्ज आर नाट रेयर सर, बट किंग्ज आर--अंडे तो बहुत दुर्लभ नहीं हैं, बहुत होते हैं, लेकिन राजा मिलना बहुत मुश्किल है। कभी-कभी राजा मिलते हैं। सम्राट ने १०० रु निकाल कर उस बूढ़े को दे दिए और अपने घोड़े पर सवार होकर चल दिया।

उस बूढ़े की औरत ने कहा, कैसे जादू किया, कि दो अंडे के सौ रुपए वसूल कर लिए? क्या तरकीब थी तुम्हारी? बूढ़े ने कहा, मैं आदमी की कमजोरी जानता हूं। जिसके आसपास आदमी जीवन भर घूमता है, वह खूंटी मैं जानता हूं। उस खूंटी को छू दो और आदमी का घूमना एकदम शुरू हो जाता है। मैंने खूंटी छू दी और राजा एकदम घूमने लगा। उसकी औरत ने कहा, मैं समझी नहीं! कौन सी खूंटी? कैसे घूमना?

उस बूढ़े ने कहा, तुझे मैं एक घटना और सुनाता हूं अपनी जिंदगी की। शायद उससे तुझे समझ में आ जाए।

जब मैं जवान था, तब मैं एक राजधानी में गया। मैंने वहां एक सस्ती सी पगड़ी खरीदी, जिसके दाम तीन चार रुपए थे। लेकिन पकड़ी बड़ी रंगीन और चमकदार थी। जैसी कि सस्ती चीजें हमेशा रंगीन और चमकदार होती हैं। जहां रंगीनी हो और बहुत चमक हो, समझ लो, भीतर वह सस्ती होगी। सस्ती थी, लेकिन बहुत चमकदार थी। रंगीन थी। मैं वह पगड़ी लगा कर सम्राट के दरबार में पहुंच गया। सम्राट की आंख एकदम से उस पगड़ी पर पड़ी। क्योंकि दुनिया में ऐसे लोग बहुत कम हैं जो, कपड़े के अलावा कुछ और भी देखते हों। आदमी को कौन देखता है? आत्मा को कौन देखता है? पगड़ियां भर दिखाई पड़ती हैं। तो सम्राट ने कहा, कितने में खरीदी है? बड़ी सुंदर रंगीन है। मैंने सम्राट से कहा, पूछते हैं कितने में खरीदी है? पांच हजार रुपए खर्च किए हैं इस पगड़ी के लिए।

सम्राट तो एकदम हैरान हो गया, लेकिन इससे पहले कि सम्राट कुछ कहता, वजीर ने उसके सिंहासन के पास झुक कर सम्राट के कान में कुछ कहा। उसने सम्राट के कान में कहा--सावधान। आदमी धोखेबाज मालूम होता है। दो चार पांच रुपए की पगड़ी का दमा पांच हजार रुपए बता रहा है। बेईमान है। लूटने के इरादे हैं।

बूढ़े ने अपनी पत्नी से कहा, मैं फौरन समझ गया कि वजीर क्या कह रहा है। जो लोग किसी को लूटते रहते हैं, वे दूसरे लूटने वाले से सचेत हो जाते हैं। लेकिन मैं भी हारने को राजी नहीं था। मैं वापस लौटने लगा। मैंने उस सम्राट से कहा, क्या मैं जाऊं? क्योंकि मैंने जिस आदमी से यह पगड़ी खरीदी है, उसने मुझे यह वचन दिया था, कि इस पृथ्वी पर एक ऐसा सम्राट भी है जो इस पगड़ी के पचास हजार भी

दे सकता है। मैं उसी सम्राट की खोज में निकला हुआ हूं। तो मैं जाऊं? आप वह स म्राट नहीं हैं? यह राजधानी वह राजधानी नहीं है? यह दरबार वह दरबार नहीं है, जहां यह पगड़ी बिक सकेगी? लेकिन कहीं बिकेगी, मैं जाता हूं।

उस सम्राट ने कहा, पगड़ी रखो। पचास हजार रुपए ले लो। वजीर बहुत हैरान हो ग या। जब मैं पचास हजार रुपए लेकर लौटने लगा, तो दरवाजे पर वजीर मुझे मिला और कहा, हद कर दी! हम भी बहुत कुशल हैं लूटने में, लेकिन यह तो जादू हो ग या! मामला क्या है? तो मैंने वजीर के कान में कहा कि तुम्हें पता होगा कि पगड़ि यों के दाम कितने होते हैं? मुझे आदमियों की कमजोरियों का पता है, मुझे उस खूं टी का पता है, जिसे छू दो और आदमी एकदम घूमने लगता है।

पता नहीं, वह बूढ़ी समझ पायी या नहीं अपने पति की यह बात। लेकिन आप समझ गए हैं। आपके हंसने से मुझे अंदाजा लगा है कि आदमी किस खूंटी से बंधा है। अहंकार के अतिरिक्त और कोई खूंटी नहीं है। जो अहंकार से बंधा है, वह और भी हजार तरह से बंध जाएगा। और जो अहंकार से मुक्त हो जाता है, वह और सब भांति भी मुक्त हो जाता है।

एक ही स्वतंत्रता है जीवन में, एक ही मुक्ति है, एक ही मोक्ष है और एक ही द्वार है प्रभु का और वह है अहंकार की खूंटी से मुक्त हो जाना। एक ही धर्म है, एक ही प्रार्थना है, एक ही पूजा है और वह है, अहंकार से मुक्त होना। जिस हृदय में अहं कार नहीं, वही मंदिर है, वही मस्जिद है, वही शिवालय है। आज इस अंतिम दिन इस तीसरे भ्रम के संबंध में थोड़ी बात मुझे आपसे कहनी है।

जीवन को देखने की दो ही दृष्टियां हैं और जीवन को जीने के दो ही ढंग हैं। या तो अहंकार के इर्द-गिर्द जियो या निरंकार के! या तो इगो के आसपास घूमो, या ईगो लेसनेस के। ईगोलेसनेस के। ईगोलेसनेस, निरहंकार—आकाश में उड़ जाओ। जो अहंक ार से बंध है, वह पृथ्वी से बंधा रह जाता है। आकाश की स्वतंत्रता उनकी हो जाती है—जीवन में विराट तक पहुंचने का मार्ग खुल जाता है। क्यों?

क्योंकि जो क्षुद्र से मुक्त होता है, वह विराट से संयुक्त हो जाता है। यह तो गणित जैसा सीधा सा नियम है। यह तो एक युनिवर्सल, एक सार्वभौम नियम है। जो शूद्र से बंधा है, वह विराट से वंचित हो जाएगा। और जो शूद्र से मुक्त हो जाता है, वह ि वराट में प्रविष्ट हो जाता है।

पानी की एक बूंद थी। वह समुद्र होना चाहती थी। वह मुझसे पूछने लगी, मैं समुद्र कैसे हो जाऊंगी? मैंने उस बूंद से कहा, बड़ी छोटी, और एक ही तरकीब है। बूंद अ गर बूंद रहने को राजी है—बूंद ही बनी रहने का सुख मानती है, तो समुद्र से मिलने का कोई रास्ता नहीं है। लेकिन अगर तू मिटने को राजी हो जाए, तो मिटते ही स ागर हो जाएगी। तो, उस बूंद ने मेरी बात मान ली। वह सागर में कूद गयी। उसने खो दिया अपने को। उसने अपने अहंकार को धो डाला। वह सागर से एक हो गयी। इसे कोई खोना कहेगा? इसे कोई मिटना कहेगा? अगर यही मिटना है, तो फिर पा ना और क्या हो सकता है?

हम अहंकार की खूंटी से बंधे हुए हैं और परमात्मा के सागर को खोजने निकल पड़े हैं! हम अहंकार के छोटे क्षुद्र बिंदु बने हुए हैं, और विराट के, असीम के साथ एक होने की कामना ने हमें पीड़ित कर रखा है। हम भी इनके किनारे से बंध हुए हैं औ र सागर की यात्रा, अज्ञात सागर की यात्रा को हमने स्वीकार कर लिया है। इन्हीं द ोनों के बीच खिंच-खिंच कर आदमी नष्ट हो जाता है। वह अहंकार को भी बचा लेन ा चाहता है, और प्रभु को भी पा लेना चाहता है।

कबीर कहते थे, उसकी गली बहुत संकरी है। वहां दो नहीं समा सकेंगे—या तो वही हो सकता है या फिर हम हो सकते हैं। हमारा सारा जीवन अहंकार को परिपुष्ट कर ने में व्यतीत होता है, विसर्जित करने में नहीं। हम उसे मजबूत करते हैं, जो हमारी पीड़ा है। हम उसी घाव को गहरा करते हैं, जो हमारा दुख है। हम उसी बीमारी को पानी खींचती हैं, जो प्राण ले लेती है। अहंकार को खींचने के सिवाय हम जीवन भर और क्या करते हैं? अहंकार को खींचने के सिवाय हम जीवन भर और क्या करते हैं? किसलिए यह उठाते हैं मकान, आकाश को छू लेने वाले? आदमी को रह ने के लिए? झूठी है यह बात। अहंकार का निवास बनाने के लिए। आदमी के रहने के लिए छोटे झोपड़े भी काफी हैं, लेकिन अहंकार के लिए बड़े से बड़े मकान भी छो टे हैं। अहंकार उठाता है बड़े मकानों को कि आकाश छू ले।

किसलिए विजय यात्राएं चलती हैं? किसलिए सिकंदर, नेपोलियन और चंगेज पैदा हो ते हैं। जीने से चंगेज का, सिकंदर का, नेपोलियन का क्या वास्ता है? लेकिन नहीं, अहंकार की यात्राएं बड़ी दूर तक ले जाती हैं आदमी को। सिकंदर जिस दिन मरने को था, बहुत उदास था। किस ने पूछा, तुम इतने उदास क्यों हो? सिकंदर ने कहा, मैं इसलिए उदास हूं कि सारी दुनिया मैंने करीब-करीब जीत ली। अब बड़ी कठिना ई में पड़ गया हूं। दूसरी कोई दुनिया ही नहीं है, जिसे मैं आगे जीतूं और मेरे भीतर बड़ा खाली-खालीपन महसूस होता है। क्योंकि जब तक मैं जीतता न रहूं, तब तक मुझे कोई चैन नहीं और दुनिया समाप्त होने के करीब आ गयी है। दूसरी कोई दुनि या नहीं है। मैं क्या जीतूं? अहंकार एक दुनिया को जीत ले तो फिर दूसरी दुनिया को जीतने की आकांक्षा शुरू हो जाती है। किसलिए धन इकट्ठा होता है? इसलिए ि क जीवन में कोई आनंद मिल सके?

अमरीका का एक बहुत बड़ा करोड़पति मरण शैय्या पर पड़ा था—कारनेगी। एक मित्र ने उससे पूछा, कितनी संपत्ति तुमने जीवन में इकट्ठी ही है? उससे कहा, ज्यादा नह ीं केवल दस अरब। मित्र ने कहा, दस अरब? और कहते हो, ज्यादा नहीं? कारनेग ी ने कहा, मेरे इरादे तो सौ अरब इकट्ठा करने के थे, लेकिन बुढ़ापा निकट आ गया योजना अधूरी ही हर गयी। क्या आप सोचते हैं कि कारनेगी सौ अरब इकट्ठा कर लेता, तो कोई फर्क पड़ जाता? जरा भी फर्क नहीं पड़ने वाला था। आदमी को हम भली भांति जानते हैं। कारनेगी के पास सौ अरब हो जाते, तो इसके इरादे हजार अ रब पर पहुंच जाते।

आदमी का इरादा उसके आगे चलता है। आदमी की वासना उसके आगे चलती है और आदमी हमेशा पीछे रह जाता है! मंजिल, जिसको वह छूना चाहता है और आगे सरक जाती है। अहंकार दौड़ता है, दौड़ता है, लेकिन कहीं भी पहुंचता नहीं है।
एक छोटी सी कथा है बच्चों की। अलाइस नाम की एक लड़की स्वर्ग में पहुंच गयी, परियों के देश में? पृथ्वी से स्वर्ग पहुंचते पहुंचते बहुत थक गयी थी। भूख लग आयी थी। स्वर्ग पहुंचते ही, परियों के देश पहुंचते ही उसे दिखाई पड़ा कि दूर आम की घनी छाया के नीचे परियों की एक रानी खड़ी है और उसके पास फलों और मिठाइयों के थाल सजे हैं, और वह रानी उस भूखी अलाइस को बुला रही है। पास जाती है। वह दिखाई पड़ रही है। उसकी आवाज पड़ती है कि अलाइस आ जा! इलाइस दौड़ना शुरू कर देती है। सुबह है। सूरज निकल रहा है। दौड़ शुरू हो जाती है। फिर दोपहर हो जाती है। सूरज ऊपर आ गया है और अलाइस दौड़ी चली जा रही है! वह थक गयी है। उसने खड़ी होकर चिल्ला कर पूछा, कैसी दुनिया है तुम्हारी? सुबह से मैं दौड़ रही हूं, लेकिन मेरे तुम्हारे बीच का फासला पूरा नहीं होता? तुम उतनी ही दूर मालूम पड़ती हो रानी!
रानी ने चिल्लाकर कहा, घबरा मत! दौड़ती आ। जो दौड़ते हैं वे पहुंच जाते हैं। खड़ी होकर समय मत खो। थोड़ी देर में सूरज ढल जाएगा और सांझ आ जाएगी। दौड़, जल्दी आ।
अलाइस और तेजी से दौड़ने लगी। सूरज जैसे-जैसे नीचे उतरने लगा, अलाइस और तेज दौड़ रही है। लेकिन न मालूम कैसी पागल दुनिया है। रानी उतना ही दूर—रानी और उसके बीच का फासला कम नहीं होता है। फिर वह थककर, चकनाचूर होकर गिर पड़ती है। और चिल्लाती है—मामला क्या है! ये कैसे रास्ते हैं परियों के देश के कि मैं सुबह से दौड़ रही हूं। सूरज डूबने के करीब आ गया है। मैं अब तक तुम्हारे पास पहुंच नहीं पायी। तुम उतनी ही दूर खड़ी हो, जितना सुबह थी।
वह रानी खूब हंसने लगी। उसने कहा, पागल अलाइस! परियों के देश में ही रास्ते ऐसे नहीं है, आदमियों के देश में भी रास्ते ऐसे ही हैं। लोग दौड़ते हैं लेकिन पहुंचते कभी नहीं। फासला उतना ही बना रहता है।
जन्म के साथ आदमी जहां होता है, मरने के साथ भी वही पाता है। कोई फासला पूरा नहीं होता। कोई यात्रा पूरी नहीं होती। जिस अहंकार को हम छोड़ने चले हैं, वह एकदम झूठी इकाई है। फाल्स इनटाइटी है। वह होती, तो भर भी जाती। वह होती तो हम उसे पूरा भी कर लेते। वह होती तो हम उसकी पूर्ति का कोई न कोई रास्ता खोज लेते। लेकिन अहंकार है झूठी इकाई। आदमी के भीतर अहंकार से ज्यादा बड़ा असत्य नहीं है। वह है नहीं। मैं जैसी कोई भी चीज शब्दों के अतिरिक्त और कहीं भी नहीं है। और जिस दिन शब्दों को छोड़कर हम भीतर झांकेंगे, तो वहां किसी मैं को नहीं पाएंगे। कभी किसी ने नहीं पाया है।
मैं एक शब्द मात्र है, मैं एक संज्ञा मात्र है—एक कामचलाऊ शब्द! हमारे सभी शब्द कामचलाऊ हैं। एक आदमी का नाम हम राम रख लेते हैं, एक का कृष्ण रख लेते

हैं। नाम झूठे हैं। दूसरे लोग पुकारें, तो पता चले कि किसे पुकार रहे हैं। दूसरे को पुकारने के लिए होता है नाम, और खुद को पकड़ने के लिए होती है मैं की इकाई, अन्यथा हम क्या पुकारें अपने आपको! कहते हैं—मैं। यह शब्द काम दे देता है जीव न में। लेकिन यह शब्द बड़ा झूठा है। इसके पीछे कोई सब्स्टेन्स नहीं, यह बिलकुल शै डो है। इसके पीछे कोई भी वस्तु नहीं, कोई पदार्थ नहीं। यह बिलकुल झूठी छाया है और इस छाया को हम धरने में, दौड़ने में लगे रहते हैं। छाया को ही पकड़ने में लगे रहते हैं।

एक संन्यासी घर के सामने से निकल रहा था। एक छोटा सा बच्चा घुटने टेककर च लता था। सुबह थी और धूप निकली थी और उस बच्चे की छाया आगे बढ़ रही थी। वह बच्चा अपने सिर को पकड़ने के लिए हाथ ले जाता है, लेकिन जब तक उसक ा हाथ पहुंचता है छाया आगे बढ़ जाती है। बच्चा थक गया। और रोने लगा। उसकी मां उसे समझाने लगी कि पागल, यह छाया है! छाया पकड़ी नहीं जाती। लेकिन ब च्चे समझ सकते हैं कि क्या छाया है? और क्या सत्य है? जो समझ लेता है कि क या छाया है, और क्या सत्य, क्या सब्स्टेन्स है और क्या शैडो—वह बच्चा नहीं रह जा ता। वह प्रौढ़ हो जाता है। उसे मेच्योरिटी उपलब्ध हो जाती है। बच्चे कभी नहीं सम झते कि छाया क्या है, सपने क्या है, झूठ क्या है! वह बच्चा रोने लगा। कहा कि मु झे तो पकड़ना है इस छाया के सिर को!

वह संन्यासी भीख मांगने आया था। उसने उसने बच्चे की मां से कहा, मैं पकड़ा देत ा हूं। वह बच्चे के पास गया। उस रोते हुए बच्चे की आंखों से आंसू टपकते थे। सभ ी बच्चों की आंखों से टपकते हैं। जिंदगी भर दौड़ते हैं और पकड़ नहीं पाते। उसे प कड़ने की झूठी योजना बनायी जाती है।

बड़े भी रोते हैं और बच्चे भी रोते हैं। वह बच्चा भी रो रहा था, तो कोई ना समझ ी तो नहीं कर रहा था। संन्यासी ने उसके पास जा कर कहा, बेटे रो मत। क्या तुझे छाया पकड़नी है?

बच्चे ने कहा, मैं सुबह से परेशान हो गया, थक गया। उस संन्यासी ने कहा, जीवन भर की कोशिश करके थक जाएगा। परेशान हो जाएगा। छाया को पकड़ने का यह र ास्ता नहीं है। तो बच्चे ने पूछा फिर रास्ता क्या है? संन्यासी ने उस बच्चे का हाथ पकड़ा और उसके सिर पर रख दिया। इधर हाथ सिर पर गया, उधार छाया के सि र पर भी हाथ गया। संन्यासी ने कहा, देख पकड़ ली तूने छाया। छाया कोई सीधा पकड़ेगा, तो नहीं पकड़ सकेगा। लेकिन अपने को पकड़ ले, तो छाया पकड़ में आ ह ी जाती है।

जो अहंकार को पकड़ने के लिए दौड़ता है, वह कभी नहीं पकड़ पाता। अहंकार मात्र छाया है। लेकिन जो आत्मा को पकड़ लेता है, उसे अहंकार पकड़ना आ जाता है। वह तो छाया है, उसका कोई मूल्य नहीं। केवल वे ही लोग तृप्ति को, केवल वे ही लोग आत्मकामता को उपलब्ध होते हैं, जो आत्मा को उपलब्ध होते हैं। आत्मा और अहंकार के बीच चुनाव है। आत्मा और अहंकार के बीच सारा विकल्प है। आत्मा

और अहंकार के बीच जीवन की सारी व्यवस्था, सारी पीड़ा है। जो अहंकार की तर फ जाते हैं वे भटक जाते हैं। वे गलत खूंटी के आस-पास जीवन को चकरीला बना लेंगे। लेकिन जो अहंकार से पीछे हटते हैं वे पाल लेते हैं। जो उसकी तरफ जाते हैं, वे भटक जाते हैं।

जो भीतर है, जो मैं हूं वस्तुतः, जो मेरा अत्यंतिक बीइंग है, जो उसी तरफ जाते हैं , वे उपलब्ध हो जाते हैं। और उनके लिए छायाएं देखने को नहीं रह जाती। दुनिया में दो तही तरह की यात्राएं हैं--एक अहंकार को भरने की यात्रा है। और दूसरी अ ात्मा को उपलब्ध करने की यात्रा है। जो अहंकार से बंध जाते हैं, वे आत्मा से वंचि त रह जाते हैं।

क्या हम यह अहंकार छोड़ने की कोशिश करें? नहीं, अगर छोड़ने की कोशिश की, तो अहंकार से कभी मुक्त नहीं हो सकेंगे। छाया न तो पकड़ी जा सकती है और न छोड़ी जा सकती है। जो चीज छोड़ी जा सकती है, न पकड़ी जा सकती है। अहंकार न पकड़ा जा सकता है, न छोड़ा जा सकता है। इसलिए पकड़ने वाले तो भूल में प. डते ही होंगे। छोड़ने वाले और भी बड़ी भूल में पड़ जाते हैं।

मैं कुछ दिन एक संन्यासी के पास रुका था। वह मुझसे कहते थे, मैंने लाखों रुपयों प र लात मार दी। मैंने उनसे पूछा, यह लात कब मारी थी आपने? कहने लगे, कोई तीस वर्ष हो गए। तो मैं ने कहा, आप नाराज न हों तो एक बात कहूं और नाराज होने का इसलिए कह देता हूं, क्योंकि संन्यासियों की नाराज होने की बहुत पुरानी अ ादत है। बड़ी पुरानी परंपरा है। अभिशाप दे सकते हैं। जन्म-जन्म बिगाड़ सकते हैं। तो अगर नाराज न हों, तो एक बात पूछूं। मेरे इतना कहते ही, नाराज तो वे हो ह ी गए। फिर भी उन्होंने कहा, हां, कहिए क्या कहते हैं?

मैंने कहा, तीस वर्ष पहले यह लात मारी थी आपने। तो लात ठीक लग नहीं पायी थी। नहीं तो तीस वर्ष तक उसकी स्मृति, उसकी याद की कोई जरूरत नहीं थी। ती स वर्ष पहले आपका अहंकार कहता होगा लाखों रुपए हैं मेरे पास। मैं कुछ हूं। समब डी हूं। फिर आपने लात मारी। आपने सोचा कि लाखों रुपए छोड़ दिए, तो अहंकार चला जाएगा। नहीं, जिस दिन से आपने लाखों रुपए छोड़े, उसी दिन से आपके अहं कार में नयी वाणी बननी शुरू हो गयी। वह कहने लगे, मैंने लाखों रुपए छोड़ दिए। लाखों रुपए थे, तो भी सड़क पर अकड़ कर चलते थे। लाखों रुपए छोड़ दिए, तो और भी ज्यादा अकड़ कर चलने लगे। रुपए की अकड़ तो दिखायी पड़ती है, वह ब. डी स्थूल है। लेकिन त्याग की अकड़ दिखाई भी नहीं पड़ती, बड़ी सूक्ष्म है। धन छोड़ देने से अहंकार नहीं छूटता। पद छोड़ देने से अहंकार नहीं छूटता। घर छोड़ देने से अहंकार नहीं छूटता। अहंकार है भी नहीं, कि छोड़ा जा सके। तो जो भी आप छोड़ें गे, अहंकार उसी छोड़ने को अपना उपकरण बना लेगा और कहेगा, मैंने छोड़ा! मैं हूं छोड़ने वाला! अहंकार के रास्ते बड़े सूक्ष्म हैं। छाया बड़ी सूक्ष्म है। पकड़ में नहीं आ ती, छोड़ने में नहीं आती। जो लोग सोचते हैं कि अहंकार छोड़ देंगे, और भी बड़ी

भूल में गिर जाते हैं। आज तक किसी ने अहंकार को छोड़ा भी हनीं है। फिर अहंकार पकड़ा भी नहीं जा सकता और छोड़ा भी नहीं जा सकता।

तो हम क्या करें? अहंकार जाना जा सकता है। अहंकार पहचाना जा सकता है। अहंकार की रिकगनीशन हो सकती है। अहंकार की प्रतिभिज्ञा हो सकती है। अहंकार का बोध हो सकता है। अहंकार के प्रति जागरूक हो सकते हैं। जो आदमी अहंकार के प्रति जागरूक हो जाता है उसका अहंकार विसर्जित हो जाता है। मनुष्य की निद्रा में अहंकार है, मनुष्य के जागरण में नहीं। जैसे ही कोई जाग कर देखने की कोशिश करता है कि कहां है अहंकार, वैसे ही हटने लगता है।

एक गांव में एक घर था। उस घर में बड़ा अंधेरा था। कोई हजार साल से अंधेरा था। गांव के लोग उस घर में नहीं जाते थे। मैं उस गांव में गया। मैंने कहा, इस घर को ऐसा ही क्यों छोड़ रखा है? गांव वालों ने कहा, इस घर में हजारों सालों से अंधेरा है। मैंने कहा, अंधेरे की कोई ताकत होती है? दिया जलाओ और भीतर पहुंच जाओ! उन्होंने कहा, दिया जलाने से क्या होगा? यह रात का अंधेरा नहीं है, हजारों साल का अंधेरा है। हजारों साल तक दिए जलाओ, तब कहीं खतम हो सकता है!

गणित बिलकुल ठीक था, बिलकुल लाजिकल, तार्किक थी यह बात। मैं भी डरा। बात तो ठीक ही थी। हजारों साल से घिरा अंधकार! कहीं एक दिया जलाने से वह दूर हो सकता है? फिर भी मैंने कहा—एक कोशिश भी तो करके देख लें। क्योंकि जिंदगी में कई बार गणित काम नहीं करता और तर्क व्यर्थ हो जाता है। जिंदगी बड़ी अनूठी है। वह तर्कों के पास चली जाती है और गणित से दूर निकल जाती है। गणित में हमेशा दो और दो चार होते हैं। जिंदगी में कभी पांच भी हो जाते हैं, और तीन भी हो सकते हैं। जिंदगी गणित नहीं है। तो चलें, देख लें। वे लोग राजी नहीं हुए और कहा, जाने से फायदा क्या है? हमें नहीं पसंद है यह बात! हमारे बाप दादे भी यही कहते थे। उन्होंने कहा है कि दिया मत जलाना। हजारों साल का अंधेरा है। बाप दादों ने भी यही कहा था। और आप तो परंपरा के बड़े विरोधी मालूम होते हैं? आप शास्त्रों को नहीं मानते? बुजुर्गों को नहीं मानते? वे ना समझ थे? हमारे गांव में तो लिखा हुआ रखा है कि इस घर में दिया मत जलाना! यह हजारों साल का पुराना अंधेरा है, मिट नहीं सकता। फिर भी मैंने उन्हें बमुश्किल राजी किया, कि चलो देख तो लें। अधिक से अधिक यही होगा कि हम असफल होंगे। मुश्किल से वे जाने को राजी हुए। दिया जलते ही, वहां तो कोई भी अंधेरा नहीं रहा था। वे बहुत हैरान हुए। उन्होंने कहा, यह अंधेरा कहां गया?

मैंने कहा, दिया हाथ में है। और खोजें कि कहां है अंधेरा। और अगर किसी दिन मिल जाए, तो मुझे खबर कर दें। मैं फिर तुम्हारे गांव में आऊंगा। अभी तक उनकी कोई खबर नहीं आयी। खोज रहे होंगे वे लोग दीए लेकर अंधेरे को! और कहीं दीए के सामने अंधेरा आता है? कहीं दीए में अंधेरा मिलता है?

अहंकार एक अंधकार है, एक छाया है। जो अपने भीतर दिया लेकर जाता है, वह उसे नहीं पाता। न तो उसे छोड़ता है, न उससे भागता है। एक दिए जलाना है और उसे देखना है। उस दीया की रोशनी से कि वह कहां है। अब हमें भीतर जाग कर देखना है कि कहां है अंधकार! नहीं पाया जाता है वहां। और जहां अहंकार नहीं पा या जाता है, वहां जो मिल जाता है, उसी को परमात्मा कहता है, कोई आत्मा कह ता है, कोई सत्य कहता है, उसी को कोई सौंदर्य कहता है, उसी को कोई और ना म देता है।

नामों के भेद होते हैं। अहंकार जहां नहीं है, वहां भी मिल जाता है जो सबका प्राणों का प्राण है, जो प्यारे से प्यारा है। वह जो विलीह्व है, वह जो प्रीतम है, वह विलुप्त हो जाता है। लेकिन हम उससे बंधे हैं और उसी के साथ जीते और मरते हैं, इस लिए उसकी तरफ आंख नहीं ले जा पाते। इसे देखना जरूरी है, इसे छोड़ना जरूरी नहीं है। इससे भागना जरूरी नहीं है, इसे पहचानना जरूरी है।

अहंकार को देखने की प्रक्रिया का नाम ध्यान है, मेडिटेशन है। कैसे देखें इसे, जो कि हमें घेरे हुए है और पकड़े हुए हैं? क्या है रास्ता? कोई घड़ी आधी घड़ी किसी मंदिर में बैठ जाने से यह नहीं देखा जा सकता। मंदिर में बैठने वालों को तो यह और भी मजबूत हो जाता है, क्योंकि उन्हें खयाल होता है, कि हम धार्मिक है। बाकी सारा जगत अधार्मिक है। क्योंकि हम मंदिर आते हैं और हमारा स्वर्ग बना जाता है और बाकी सब नर्क में खड़े हैं।

क्या आपको पता है कि ईसाई मजहब के हिमायतियों की राय है कि जो लोग संत हैं, जो धार्मिक है, वे स्वर्ग के आनंद उठाएंगे। जो पापी हैं वे नर्क में कष्ट भोगेंगे। स्वर्ग में जो धार्मिक लोग जाएंगे, उन्हें एक विशेष प्रकार के सुख की भी सुविधा रहेगी और वह यह कि नर्क में जो पापी कष्ट भोग रहे हैं, उनको देखने का मजा भी वे ले सकेंगे। वहां से वे देख सकेंगे कि कितने पापी नर्क में पड़ गए हैं और कष्ट झेल रहे हैं। जिन लोगों ने यह खयाल किया होगा, पुण्यात्माओं ने, धार्मिकों ने, कि पापियों को नर्क में कड़ाहों में जलते दुखने का मजा भी हम लेंगे, वे कैसे लोग रहे होंगे इसे आप भली भांति सोच सकते हैं। और यह ईसाइयत का ही सवाल नहीं है। दुनिया के सारे धार्मिक--तथाकथित धार्मिक लोगों ने अपने को स्वर्ग में ले जाने की और दूसरों को नर्क में डालने की पूरी योजना और व्यवस्था कर रखी है! क्योंकि वे यह कह सकते हैं भगवान से कि मैं रोज तुम्हारे नाक की माला फेरता था और इस आदमी ने माला नहीं फेरी, इसको डालो कड़ाहे में। मैं रोज मंदिर आता था, एक दिन भी नहीं चुका। ठंड पड़ती थी, तब भी आता था। गर्मी पड़ती थी, तब भी आता था। यह आदमी कभी मंदिर में नहीं दिखाई दिया। डालो इसको कड़ाहे में। मैं गीता पढ़ता था कुरान पढ़ता था, बाइबिल पढ़ता था, रोज तुम्हारे भजन कीर्तन करता था। व्यर्थ गए वे सब। मुझे बैठाओ स्वर्ग में। लेकिन मजा इतने में नहीं आयेगा की मैं स्वर्ग मैं बैठ जाऊं। जो मेरे पड़ोस में रहते थे उन सब लोगों को बिना नर्क में डाले कोई आनंद उपलब्ध नहीं हो सकता। उन सबको डालो नर्क में! जर्मन कवि था हेस।

हेस ने एक कविता लिखी है कि एक रात भगवान ने मुझसे पूछा, कि तुम चाहते क्या हो जिससे खुश हो जाओ। तो मैंने कहा, मैं बहुत बड़ा मकान चाहता हूं, ऐसा कि गांव में दूसरा मकान न हो। भगवान ने कहा, ठीक है, यह हो जाएगा। और क्या चाहते हो? एक बहुत शानदार बगीचा चाहता हूं; जैसा कि पृथ्वी पर न हो। भगवान ने कहा, ठीक, यह भी हो जाएगा। और क्या चाहते हो? मैं जो भी जिस क्षण चाहूं उसी वक्त मुझे मिल जाए। भगवान ने कहा, यह भी हो जाएगा और क्या चाहते हो?

हेस ने कहा, अगर आप मानते ही नहीं और मेरे दिल की मुराद पूरी ही करना चाहते हैं, तो एक काम और कर दें। मेरे बगीचे के जो दरख्त हों, मेरे पड़ोसी उन दरख्तों से लटके रहें, तो मुझे पूरा आनंद उपलब्ध हो जाएगा।

नींद खुल गयी हेस की और उसने बाद में लिखा कि वह बहुत घबराया कि मेरे भीतर कैसी-कैसी कामनाएं हैं। लेकिन अगर आप धार्मिक आदमियों के मन में खोजेंगे। तो सबके मन में यह कामना मिलेगी कि पड़ोसी नर्क में चले जाए और हम स्वर्ग में चले जाए। हम स्वर्ग में जाने के लिए सारा आयोजन करते हैं।

मंदिर में बैठने वाले अहंकार से मुक्त नहीं होते। स्वर्ग में जाने की कामना रखने वाले अहंकारी ही हैं। मुझे परमात्मा मिल जाए। मैं परमात्मा को भी पजेस कर लूं! इस मेरी संपत्ति बन जाए। यह भी अहंकार की दौड़ है।

फिर कैसे?

चौबीस घंटे जागरूक होना पड़ता है और देखना पड़ता है कि जीवन की किन-किन क्रियाओं में अहंकार खड़ा होता है। क्या वस्त्रों के पहनने से खड़ा होता है? आंख के देखने के ढंग में खड़ा होता है? पैर के उठने में खड़ा होता है, बोलने में खड़ा होता है, कि चुप रह जाने में खड़ा रहता है? कहां-कहां अहंकार खड़ा होता है? किन-किन जगहों से सिर उठाता है? चौबीस घंटे एक अवेयरनेस, एक होश चाहिए कि कहां खड़ा हो रहा है! कैसे खड़ा होता है? क्या है उसकी कोशिश? उसके खड़े होने की प्रक्रिया क्या है? कैसे निर्मित होता है भीतर? कैसे संघटित होता है? क्या मार्ग है उसके बन जाने का?

अगर कोई चौबीस घंटे देखता रहे, देखता रहे, खोजता रहे, खोजता रहे—लोग बहुत हैरानी, बहुत आश्चर्य, बहुत चमत्कार अनुभव करेंगे। जिन-जिन जगहों पर खोज लेंगे, कि यहां-यहां अहंकार खंड होता है वहीं-वहीं से अहंकार बिदा हो जाएगा, और जिस दिन जीवन के किसी पहलू में और चित्त के किसी हिस्से में अहंकारों की खोज पूरी हो जाएगी, तो कोई अनजान, अपरिचित होना बाकी नहीं रहेगा मन का और माइंड का! उसी दिन अहंकार बाहर हो जाते हैं।

एक सम्राट था। एक फकीर ने उस सम्राट से कहा—तू अगर चाहता है कि परमात्मा को पा ले, तो एक ही रास्ता है। मेरे झोपड़े पर आ जा और कुछ दिन मेरे पास रह जा। उस सम्राट की बड़ी तीव्र प्यास और आकांक्षा थी। उस फकीर के झोपड़े पर चला गया। उस फकीर ने कहा, कल सुबह तेरी शिक्षा शुरू होगी और शिक्षा बड़ी अ

जीव किस्म की है। वह यह है कि कल सुबह तू जो कुछ भी कर रहा होगा और मैं लकड़ी की तलवार लेकर तेरे पीछे से हमला कर दूंगा। तू खाना खा रहा होगा। तू झोपड़े में बुहारी लगा रहा होगा, तू कपड़े धो रहा होगा, तू स्नान करता होगा और मैं तेरे ऊपर तलवार से हमला कर दूंगा। लकड़ी की तलवार होगी। हमेशा सावधान रहना कि मैं कब हमला कर दूं! क्योंकि मेरा कोई ठिकाना नहीं! मैं खोज खबर नहीं दूंगा। पहले रेडियो में सूचना नहीं निकालूंगा। अखबार में, स्थानीय कार्यक्रम में सूचना नहीं होगी कि आज से यह करने वाला हूं। किसी भाषा में, कोई सिलसिला नहीं होगा। किसी भी क्षण मैं हमला कर दूंगा। तैयार रहना।

उस सम्राट ने कहा, लेकिन इससे आपको मतलब क्या है?

वह फकीर बोला, अहंकार इसी भांति चौबीस घंटे न मालूम कहां-कहां से हमले कर दे। तो मैं हमला करूंगा! मेरी तलवार का खयाल रखना। सात दिन में सम्राट की हड्डी पसलियां टूट गयी। क्योंकि चौबीसों घंटे वह बूढ़ा फकीर न मालूम कब हमला कर दे! वह सम्राट किताब पढ़ता, लेकिन सात दिन में यह भी उसके खयाल में आ गया कि सावधानी जैसी भी कोई चीज, अलर्टनेस जैसी भी कोई चीज है। जिंदगी में पहली दफा उसे पता चला कि मैं अभी तक सोया–सोया जीता रहा। अभी तक मैं होश से नहीं जीया। कभी मैंने होश का खयाल ही नहीं किया, लेकिन सात दिन बराबर चुनौती मिली। चोट लगी भीतर, कोई चीज जागने लगी और खयाल रखने लगी कि हमला होने को है। पंद्रह दिन पूरे हो गए थे। हमले की खबर उसे मिलने लगी। गुरु के पैर की धीमी सी आहट भी उसे सुनाई पड़ जाती थी। वह अपनी ढाल संभाल लेता और हमले से बच जाता। तीन महीने पूरे हो गए। हमले का करना भी मुश्किल हो गया। किसी भी हालत में हमला किया जाए, वह हमेशा सावधान रहता और रोक लेता

उसके गुरु ने कहा, एक पाठ तेरा पूरा हो गया! कल से दूसरा पाठ चलेगा। और उसने पूछा कि इन तीन महीनों में तुझे क्या हुआ? सम्राट ने कहा, दो बातें हुई। मैं हैरान हो गया। पहले तो मैं डर गया था कि इस लकड़ी की तलवार से चोट पहुंचाने का और परमात्मा से मिलने का क्या वास्ता है, क्या संबंध है? यह फकीर पागल तो नहीं है? मैं किसी पागल के चक्कर में तो नहीं पड़ गया हूं? लेकिन तीन महीने बाद मुझे पता चला कि जितना मैं सावधान रहने लगा, उतना ही निर्विचार हो गया। जितना ही मैं होश से जीने लगा, उतना ही मन के विचारों की धारा क्षीण हो गयी। क्योंकि मन एक ही साथ दो काम नहीं कर सकता–या तो विचार कर सकता है या जागरूक हो सकता है। दोनों चीजें एक साथ नहीं हो सकती।

इसको थोड़ा देखना। जब विचार होंगे सावधानी क्षीण हो जाएगी। जब सावधानी होगी, विचार क्षीण हो जाएंगे।

अगर मैं एक छुरी लेकर आपकी छाती पर आ जाऊं, तो विचार एकदम बंद हो जाता है। क्योंकि खतरे से चित्त पूरी तरह सावधान हो जाएगा कि पता नहीं क्या होगा

? इस समय विचार करने की सुविधा नहीं है, इस समय तो होश बनाए रखने की जरूरत है कि पता नहीं क्या होगा!

एक क्षण में कुछ हो सकता है, तो आप जाग जाएंगे। तीन महीने में उस सम्राट ने कहा कि मैं एकदम जागा हुआ हो गया हूं। विचार शांत हो गए, अहंकार का कोई पता नहीं चलता। दूसरा पाठ क्या है?

उस वृद्ध फकीर ने कहा, कल रात फिर हमला शुरू होगा। कल तू रात में सोया रहे गा तब भी दो चार दफा सामने आऊंगा। अब रात को भी सावधान रहना। उस सम्र ाट ने कहा, जागने तक भी गनीमत थी। अब यह बात जरा ज्यादा हो जाती है। नीं द में मैं क्या करूंगा? मेरा क्या बस है नींद में? वृद्ध ने कहा, नींद में भी बस है, तु झे पता नहीं। सपने में भी जब तू देखता है, तो वही देखता है। नींद में भी बस है। नींद में भी तेरे भीतर कोई जगा हुआ है और होश में है। चादर सरक जाती है औ र किसी को नींद में पता चल जाता है कि चादर सरक गयी है। एक छोटा सा मच छर काटने लगता है और नींद में कोई जान जाता है कि मच्छर आ गया है।

एक मां रात में सोचती है कि मेरा बच्चा बीमार है। आकाश में बादल गरजते रहें या प्रधानमंत्रियों के हवाई जहाज उड़ते रहें, ऊंचे से कोई खबर नहीं मिलती, लेकिन बच्चा बीमार है। वह जरा सी आवाज करता है और मां जाग जाती है और हाथ फेरने लगती है और पुचकारने लगती है कि सो जा! कोई भीतर होश से भरा हुआ है कि बच्चा बीमार है।

हम इतने लोग आए हैं, हम सो जाए आज रात यहीं, और फिर आधी रात में आक र कोई बुलाने लगे, राम! राम! सारे लोग सो रहे हैं, किसी को सुनायी नहीं पड़ेगा। लेकिन जिसका नाम राम है, वह आंख खोलकर कहेगा, कौन बुलाता है? आधी रा त को कौन परेशान करता है?

एक आधी रात की निद्रा में भी किसी को पता है कि मेरा नाम राम है। इस नींद में भी कोई होश, कोई कांशसनेस सरकती है भीतर! कोई अंदर करेंट है, चेतना है, कोई अंतरधारा है।

उस बूढ़े ने कहा, फिकर मत कर। हम वो चुनौती खड़ी करेंगे। भीतर जो सोया है, वह जागना शुरू हो जाएगा। जागने का एक ही सूत्र है, चैलेंज, चुनौती! जितनी बड़ी चुनौती भीतर हो, उतना बड़ा जागरण होता है। कितने धन्यभागी हैं वे लोग जिन के जीवन में बड़ी चुनौतियां होती हैं। दूसरे दिन से हमला शुरू होगा।

रात सम्राट सोता और हमले होते। आठ दस दिन में फिर वही हालत हो गयी। फिर हड्डी-हड्डी दुखने लगी। लेकिन एक महीना पूरा होते-होते सम्राट को पता चला कि बूढ़ा ठीक कहता है।

बूढ़े अक्सर ठीक कहते हैं। लेकिन जवान सुनते ही नहीं। और जब तक उन्हें समझ आती है, तब तक वे भी बूढ़े हो जाते हैं। फिर दूसरी जवानी उनमें लौट नहीं सकत ी। तो समझा और उसने कहा, ठीक कहते थे शायद आप! अब नींद में भी मेरे हाथ संभलने लगे। रात, नींद हमें जरूर आती, दबे, चोर पाव!

वह सम्राट नींद मग भी जाग जाता और बैठ जाता और कहता, ठीक है! माफ की जिए! मैं जाग गया हूं। अब कष्ट मत उठाइए मारने का।
नींद में भी हाथ, रात भर उसकी ढाल पर ही बना रहता था। नींद में भी ढाल उठती है। तीन महीने पूरे हुए और तब नींद में भी हमला करना मुश्किल हो गया। गुरु ने कहा, क्या हुआ इन तीन महीनों में? दूसरा पाठ पूरा होता है।
उस सम्राट ने कहा, बड़ा हैरान हूं। पहले तीन महीनों में विचार खो गया, दूसरे तीन महीनों में सपने खो गए, नींद खो गयी, रात भर सपने नहीं। मैं तो सोचता था कि बिना सपने के नींद ही नहीं हो सकती। अब मैं जानता हूं कि सपने वालों की भी कोई नींद होती है। अदभुत शांति छा गयी है भीतर! एक शून्यता, एक साइलेंस पैदा हो गयी। मैं बड़े आनंद में हूं।
उसके गुरु ने कहा, जल्दी मत कर! बड़ा आनंद अभी थोड़ा दूर है। यह तो केवल आनंद की प्रारंभिक झलक है। जैसे कोई आदमी बगीचे के पास पहुंचने लगे, तो ठंडी हवाएं आने लगती हैं, खुशबू हवा में आ जाती है। अभी बगीचा आया नहीं, लेकिन बगीचे की खबर आना शुरू हो जाती है। अभी आनंद मिला नहीं। केवल बाहर खबर का मिलना शुरू हुआ है। कल से तेरा तीसरा पाठ शुरू होगा।
उसने कहा, दो ही अवस्थाएं होती हैं जागने और सोने की! तीसरा पाठ क्या है?
उस बूढ़े ने कहा, कल से असली तलवार से हमला होगा।
वह युवक सम्राट बोला, यह भी गनीमत थी कि आप लकड़ी की तलवार से हमला करते थे। यह तो जरा ज्यादा हो जाएगी बात! असली तलवार से हमला? अगर मैं एक भी बार चूक गया तो जान गयी! उस बूढ़े ने कहा, जब यह पक्का पता हो कि एक भी बार चूका कि जान गयी, तब कोई नहीं चुकता है। चूकता आदमी तभी तक है, जब तक उसे पता चलता है कि चूक भी जाऊं, कुछ जाएगा तो नहीं! एक बार पता चला कि चूका और जान गयी, तब प्राण इतने ऊर्जा से चलते हैं कि फिर चुकने का कोई मौका नहीं रहता। बूढ़ा कहता गया, मेरा गुरु था। उसने मुझे एक दिन, सौ फूट ऊंचे दरख्ते पर चढ़ा दिया। वह मुझे दरख्त पर चढ़ाना सिखाता, पहाड़ों पर चढ़ना सिखाता, नदियों में तैरना सिखाता, झीलों में डूबना सिखाता।
वह कहता था—जो पहाड़ पर चढ़ना नहीं जानता है, वह जीवन में चढ़ना क्या जानेगा? जो झीलों में गहराइयों में डूबना नहीं जानता वह प्राणों की गहराइयों में डूबना क्या जानेगा? बड़ा अजीब गुरु था। उसने मुझे एक दरख्त पर चढ़ा दिया। मैं नया-नया चढ़ा था। जब मैं सो फूट ऊपर पहुंच गया और मेरे प्राण कांपते थे कि हवा का एक झोंका कहीं जानलेवा न बन जाए!
वह गुरु चुपचाप आंख बंद किए पेड़ के पास बैठा था। मैं धीरे-धीरे उतरने लगा। जब मैं जमीन में बिलकुल करीब आ गया, कोई आठ दस फूट दूर रह गया, तब वह बूढ़ा जैसे नींद से उठ गया और खड़ा हो गया। कहने लगा। सावधान! बेटे संभल कर उतरना।

मैंने कहा, पागल हो गए हैं आप! जब जरूरत थी सावधानी की, तब आंख बंद किए सपने देख रहे थे और अब, जब मैं नीचे आ गया हूं, अगर गिर भी जाऊं तो कोई खतरा नहीं है, तब आपको होशियारी की याद दिलाने को खयाल आया?

वह बूढ़ा कहने लगा, मैं अपने अनुभव से जानता हूं, जब तू सौ फूट पर था, तब सावधान करने की कोई जरूरत नहीं थी। तू खुद ही सावधान था। और अभी-अभी मैंने देखा है कि जैसे-जैसे जमीन करीब आने लगी है, तुम असावधान शुरू हो गए। नींद पकड़ गयी है तुझे! तो मैंने चिल्लाया कि सावधान! क्योंकि मैंने जीवन में देखा है कि लोग ऊंचाई से कभी नहीं गिरते, नीचे आने पर गिर जाते हैं और मर जाते हैं।

दूसरे दिन से असली तलवार आ गयी थी। लेकिन बड़ा हैरान हुआ वह सम्राट! लकड़ी की तलवार की तो बहुत चोटें उसके शारीर पर लगी थीं, लेकिन असली तलवार की तीन महीने में एक भी चोट नहीं मारी जा सकी। तीन महीने पेरे होने को आ गए। उसका मन शांति का एक सरोवर बन गया। उसका अहंकार कहीं दूर छूट गया किसी रास्ते पर—पता नहीं, कहां रह गया!

जैसे जीर्ण शीर्ण वस्त्र छूट जाते हैं या सांप अपने केंचुल छोड़कर आगे बढ़ जाते हैं, वैसे ही वह कहीं छोड़ आया पीछे उसको याद भी नहीं रहा कि कभी मैं भी था—इतनी शांति हो गयी।

तीन महीने पूरे होने का आ गए हैं। आज आखिरी दिन है। कल वह बिदा हो जाएगा। उसके मन में खयाल आया, सुबह-सुबह सूरज निकला है। वह बैठा है झोपड़े के बाहर। उसका गुरु काफी दूर एक दरख्त के नीचे बैठा है और किताब पढ़ रहा है। अस्सी साल का वृद्ध! उसके मन में खयाल आया है। उस बूढ़े ने नौ महीने तक मुझे एक क्षण भी आलस्य में नहीं जाने दिया। एक क्षण भी प्रमाद नहीं करने दिया। हमेशा सावधान रखा। कल तो मैं बिदा हो जाऊंगा यह गुरु भी उतना सावधान है या नहीं, यह भी तो मैं देख लूं!

तो उसने सोचा कि उठाऊं तलवार और आज उस बूढ़े पर पीछे से हमला कर दूं। मुझे भी तो पता चल जाए, कि हमें ही सावधान किया जाता है या ये सज्जन खुद भी सावधान हैं! उसने इतना सोचा ही था, सिर्फ सोचा ही था—अभी कुछ किया नहीं था, और वह गुरु चिल्लाया उस झाड़ के नीचे से कि बेटे, ऐसा मत करना, मैं बूढ़ा आदमी हूं! मैंने केवल सोचा है!

तो उसे बूढ़े ने कहा, तू थोड़े दिन और ठहर जा! जब चित्त बिलकुल शांत हो जाता है, और मौन हो जाता है, तब सारे अहंकार एकदम विदा हो जाते हैं। और जब विचार शून्य और शांत हो जाते हैं तब दूसरे के पैरों की ध्वनि ही नहीं सुनाई पड़ती, दूसरों के चित्त की पद ध्वनियां भी सुनाई पड़ने लग जाती हैं। तब दूसरों के विचारों के पैर भी सुनाई पड़ने लग जाते हैं विचार भी सुनाई पड़ने लगते हैं।

और हम तो ऐसे अंधे हैं, कि हमें दूसरों के कृत्य ही दिखाई नहीं पड़ते। विचारों का सुनाई पड़ना तो बहुत दूर की बात है।

उस बूढ़े ने कहा था, जिस दिन इतना शांत हो जाता है चित्त, इतना जागरूक, तो उसी दिन वह जो अदृश्य है, उसकी झलक मिलती है। उस परमात्मा के पैर सुनाई पड़ने लगते हैं, जिसके कोई पैर नहीं हैं। उस परमात्मा की वाणी आने लगती है, जिसकी कोई वाणी नहीं है। उस परमात्मा का स्पर्श मिलने लगता है, जिसकी कोई देह नहीं।

जिस दिन हमारे भीतर वह रिस्पेक्टिविटी, वह ग्राहकता उत्पन्न होती है शांति की उसी दिन वह सब तरफ मौजूद हो जाता है। फिर वृक्ष की पत्तियों में वही है, राह के पत्थरों में वही है, सागर की लहरों मग भी आकाश के बादलों में भी, आदमियों की आंखों में भी, पशु-पक्षियों के प्राणों में भी—फिर सबमें वही है।

जिस दिन भीतर वह रिस्पेक्टिविटी, वह जीवन की पगध्वनि सुनने की ग्राहकता उपलब्ध हो जाती है, वह पात्रता उपलब्ध हो जाती है।

पता नहीं उस सम्राट और बूढ़े फकीर का फिर क्या हुआ लेकिन मुझे और आपको, उससे प्रयोजन ही क्या?

क्या आप भी अपने भीतर इतने जागने का सतत श्रम करने को तत्पर हैं? अगर हां, तो जीवन की संपदा आपकी है। अगर हां, तो परमात्मा खुद आपके द्वार चला आएगा। आपको उसके द्वार जाने की जरूरत नहीं। यह बात कठिन मालूम पड़ती हो, तो जो लोग चलने के आदी नहीं होते, उनकी यात्राएं लंबी, बहुत बड़ी दिखाई देती हैं।

लेकिन अगर एक कदम भी उठाने के लिए वे तैयार हो गए, तो उठाया गया हर कदम, आने वाले कदम के लिए भूमि बन जाती है, बल बन जाता है, शक्ति बन जाती है और छोटे से कदमों से, आदमी पूरी पृथ्वी की परिक्रमा कर सकता है। और छोटे से मन की सामर्थ्य, छोटे-छोटे के कामों की सावधानी, थोड़े से हृदय की शांति से, मनुष्य परमात्मा की परिक्रमा भी कर सकता है।

इन तीन दिनों में तीन छोटी सी बातें मैंने आपसे कहीं—आनंद का भाव, अहोभाव! अज्ञान का बोध! और आज आपसे कहता हूं, स्वयं के जीवन कृत्यों, विचारों के प्रति जागरूकता!

तीन खूंटियां मैंने आपसे कहीं। इन तीनों में से जो मुक्त हो जाते हैं उनकी नौका परमात्मा के सागर की यात्रा पर निकल जाती है। फिर उन्हें नाव खेने की जरूरत नहीं पड़ती। वे पतली पतवार पर नाव खेते रहेंगे।

रामकृष्ण कहते थे, एक बार नाव की जंजीर खोल दो। फिर तो हवाएं नाव को ले जाएंगी, मंजिल तक पहुंचा देंगी। हवाएं ले जाने को हमेशा खड़ी हैं।

ये थोड़ी सी बातें, तीन दिनों में मैंने कहीं। हो सकता है, कोई बात आपके कानों के किसी कोने में वह बीज बन जाए जो अंकुर हो उठे और फिर वृक्ष बन जाए तो वह वृक्ष आपको भी छाया देगा और हम सबको भी, जो आपके निकट हैं। वैसा छायादार वृक्ष बन जाना ही धार्मिक जीवन की उपलब्धता कर लेना है।

मेरी बातों को इतनी शांति से तीन दिनों में सुना, उसके लिए मैं बहुत-बहुत अनुगृह
ीत हूं।